अतीत-गाथा

मामा वरेरकर



विद्या प्रकाशन मन्दिर
नई दिल्ली-110002

शरद जोशी

जन्म : 21 मई 1931, उज्जैन (म० प्र०)

मूल मराठी कृति 'चिंगी'
का हिन्दी अनुवाद
अनुवादक (स्व.) रा. र. सर्वटे

संस्करण : प्रथम 1985
मूल्य : रुपये 30.00
प्रकाशक : विद्या प्रकाशन मंदिर, 1681 दरियागंज, नई दिल्ली-2
मुद्रक : शांति मुद्रणालय, दिल्ली-32

ATIT GATHA by Mama Warerkar

एक दृष्टि

अतीत-गाथा मामा वरेरकर का एक ऐसा उपन्यास है जो तत्कालीन सामाजिक रीति-रिवाजों तथा रूढ़ियों में जकड़े युवकों युवतियों की छटपटाहट तथा विद्रोह का चित्र प्रस्तुत करता है।

वह काल तत्कालीन रिवाजो की जकड़न से मुक्ति पाने के संघर्ष का संधिकाल था। आगरकर जैसे समाज सुधारकों के विचार समाज मे हलचल मचाए थे। पर्दा-प्रथा तथा बाल-विवाह की बुराइयां दम तोड़ रही थी।

यह उपन्यास पढते हुए आज की पीढी को आश्चर्य होगा कि किस प्रकार छोटी-छोटी लड़कियो को, जिन्हें विवाह के मायने भी नही आते थे, विवाहित कर दिया जाता था और उन्हें उन तमाम बंधनों मे जकड़ लिया जाता था जो उनके जीवन का अभिशाप था। नई पीढी ही नही, पुरानी पीढी भी इस बुराई को खत्म करने में सहमति देने लगी थी।

मामा वरेरकर की चमत्कारिक लेखनी से यह ऐसा उपन्यास नि:सृत हुआ है जो दो बाल-प्रेमियों की कांटों भरी डगर में फूल छितरा जाता है। उनकी भावनाओं की महक मन मे रच-बस जाती है। जीवन की सांध्यवेला मे अतीत की यह गाथा जहां दो बाल-प्रेमियों के उद्गारों को महकाती है, वही तत्कालीन समाज का ऐतिहासिक चित्र भी प्रस्तुत करती है।

1

एक जमाना ऐसा था, कि जिस समय सारी दुनिया मुझे सुन्दर लगती थी। प्रकृति की हर हलचल में मुझे सौंदर्य की विविधता दिखाई देती थी। सौंदर्य के जादू से मेरा हृदय उस समय पूरा भरा हुआ था। वह समय मेरी प्रौढ़ावस्था का नहीं थी। भरी जवानी का भी समय नहीं था। वह समय था मेरा बचपन। कोई शायद कहे कि सौंदर्य की विविधता का मजा चखने की शक्ति बचपन में नहीं होती। पर मेरा अनुभव ऐसा नहीं। सौंदर्य के निर्मल और विशुद्ध स्वरूप का अनुभव मुझे बचपन में ही हुआ। वह बचपन लद गया और उसके साथ ही वह दृष्टि भी विलुप्त हो गई। सौंदर्य का अवलोकन करने वाली वह निर्विकार दृष्टि व्यवहारिकता का अंजन लग जाने से बदल गई।

सौंदर्य को भयानक स्वरूप प्राप्त हो गया। सत्य का सौंदर्य जाता रहा, असत्य आकर्षक लगने लगा, रोम-रोम में व्यवहार घुस पड़ा और दुनिया की विविधता एकत्र होकर उसने बुद्धि को संकुचित कर दिया। मनुष्य जाति के प्रत्येक प्राणी की उत्क्रान्ति कहीं इसी प्रकार तो नहीं होती है? ऐसा प्रश्न बारंबार मन में आता है। परंतु इसे जाचकर कोई
अपने जीवन का खुले दिल से विश्लेषण करने के लिए कौन
तैयार होगा? जहां देखिए वहां असत्य का ही बोलबाला है
पर सत्य की डींग हांकनेवाला रोज साफ-साफ झूठ बोला .

अपने जीवन मे दूसरे के जीवन को मिलाकर देखने का प्रमाण मुझे कैसे मिलेगा ? इसीलिए मन मे आया कि जब प्रत्यक्ष कोई कहता नही, तब पर्याय से कम-से-कम दुनिया को ही मेरा जीवन जांचकर देख लेने दूं। इस विचार के मन मे आते ही मैने कलम हाथ मे ली और अपने जीवन का सिंहावलोकन करना शुरू कर दिया।

श्रीमत के नाते महाराष्ट्र मे मेरी भले ही ख्याति हुई हो, एक सफल व्यापारी की हैसियत से महाराष्ट्र की आंखें मुझ पर टिक गई हों, परंतु दुनिया के इतिहास की दृष्टि से देखा जाए तो मेरी आत्म-कथा का मूल्य एक पैसा भी न होगा। इसलिए पाठकों से मेरा यही नम्र निवेदन है कि वे मानव-जीवन के अध्ययन की दृष्टि मे और मनोविज्ञान के एक उदाहरण के नाते मेरी *अतीत-गाथा* को देखें।

जितने पीछे नजर मोड़ते बनती है उतनी मोडकर देखता हूं तो पहली बात जो याद आती है वह यही कि मेरे पिताजी मुझे हृदय से लगाए रेलगाडी के एक डिब्बे में बैठकर जा रहे थे। उस समय मेरी उम्र अधिक-से-अधिक पांच वर्ष की रही होगी। पिताजी मुझे रोता हुआ देखकर बार-बार समझाने का प्रयत्न करते और मैं 'मां-मां' कहकर, जोर से चिल्लाता, ऐसा चल रहा था। हमारे नजदीक बैठा एक मुसाफिर बोला, "क्या टें-टें लगा रखी है बच्चे ने ! लगाओ न एक थप्पड़ !"

मेरे पिताजी बोले, "वह क्या कहता है, यह सुना आपने ? उसकी मां मर गई है। वह 'मां, मां' की रट लगा रहा है। उसकी मां मैं कहां से लाकर दूं उसे ? मैं भी अनाथ ! वह भी अनाथ ही है ! मैं बड़ा हूं, इसलिए रोता नही। बस, इतनी ही बात है !"

वह व्यक्ति बोला, "किसी की मां कभी मरती ही नही क्या ? उसमें रोने के लिए इतना क्या हो गया ?"

पिताजी बोले—"हर व्यक्ति का अपना दुख उसके लिए बड़ा होता है। आपकी मां जीवित हैं शायद ?"

वह बोला—"जिंदा है। वह कब मरती है इसकी प्रतीक्षा कर रहा हूं ! अंधी है, लंगडी है, दमा का शिकार है। खुद तो तंग होती ही रहती

है, हम लोगों को भी तंग करती रहती है। मेरी मां मर-जाएगी तो मैं लगातार हंसता रहूंगा। रोता क्यों है? बेटा! यह तो अपना बड़ा भाग्य समझ कि तुझे होश आने से पहले ही तेरी मां चल बसी!"

इस प्रकार की और भी बहुत-सी बातें वह पिताजी से कर रहा था और जेब से भुने चने निकाल-निकालकर खा रहा था। उसकी बातों का मतलब समझने लायक शक्ति उस समय मुझ मे नही थी। फिर भी उस समय की अपनी अप्रगल्भ बुद्धि से मैं इतना जरूर समझ गया कि वह व्यक्ति कुछ अप्रिय बोल रहा है। सभ्य क्या है और असभ्य क्या है इसकी परवाह करने की मेरी वह उम्र न थी। मेरा रोना बंद हो गया और यह देखकर पिताजी ने मुझे थपकियां देकर अपनी गोद में सुला दिया और मैं भी रोना बंद हो जाने के बाद आनेवाली सिसकियां बीच-बीच में लेता हुआ उसी तरह सो गया।

झुटपुटा हो गया था। ऐसे समय गाडी स्टेशन में आई। पिताजी मुझे गोद में लिए नीचे उतरे और हम स्टेशन के बाहर गए। पिताजी ने एक बैलगाड़ी तय की और उसमें अपना सामान ठीक से रखकर हम दोनों उसमें बैठ गए। मेरी निगाह को यह प्रदेश बडा ही अजीब लगा। इधर उधर वीरान और भयानक दिख रहा था। रास्ते के दुतर्फा ऊंची-ऊंची इमारतों अथवा चालों के बजाए फल-फूलों से आच्छादित वृक्ष दिख रहे थे। जिस भाग से मैं यहां आया था उस भाग के रास्तों की तरह यहां के रास्ते में गाड़ी-घोडों की बिलकुल ही भीड नही दिखती थी। पैदल चलनेवाला मनुष्य भी इस रास्ते पर इक्का-दुक्का ही नजर आता था। हमारी गाड़ी चली। बैलों के गले के घुंघरू बजने लगे। उस आवाज से जागकर सारी रात वृक्षों पर सोए हुए पक्षी कलरव करने लगे। यह कलरव मेरे लिए बिल्कुल ही अपरिचित था। उस कलरव में मुझे एक नई मिठास का प्रथम बार ही अनुभव हुआ। श्रवण द्वारा लूटे जानेवाले सौंदर्य में क्या मजा है यह पहली बार ही उस समय मैंने जाना। जैसे-जैसे दिन ऊपर चढ़ने लगा वैसे-वैसे पक्षियों में अधिक खलबली शुरू हो गई। छोटे से लेकर बड़े-बड़े पक्षी इधर से उधर और उधर से इधर उड़-उड़ कर बड़ी गड़बड़ी मचा रहे थे। मैं उनकी ओर टक लगाकर देखने लगा। उनकी इस गड़बड़ी का

क्या मतलब है, मेरी बाल-बुद्धि यह समझ नही पा रही थी। मैं बार-बार विचार करने लगा—पक्षियों की यह इतनी गड़बड़ी क्यों? इतने सुंदर स्वर मे वे क्यो चिल्ला रहे हैं? जमीन से ऊपर और ऊपर से नीचे क्यों चक्कर काट रहे हैं?

एक बार मन में आया कि पिताजी से पूछू। पर पूछा नही। पूछना मुझे पहले से ही पसंद नही था। कोई भी जिज्ञासा पैदा हो—नही, जान-बूझकर उसे पैदा करूं और खुद ही उसका उत्तर खोज निकालू ऐसी उस समय से ही मेरी प्रवृत्ति थी। मै सोचने लगा। हमारे घर के नजदीक ही रानी बाग था। वहां मैंने ऐसे ही बहुत से पक्षी देखे थे उसके चिड़ियाखाने मे। पर वहां उन्हे बडे-बडे पिंजडो में बंद करके रखा गया था। वे बंद क्यों? और ये आजाद क्यो? उनके कलरव मे और इनके कलरव मे फर्क क्यो? उस समय मुझे इसकी विशेषता यद्यपि मालूम नही थी, फिर भी आज की बुद्धि से ऐसा लगता है कि रानी के बाग के पक्षी जब चिल्लाने लगते तो लगता जैसे वे रो रहे है। परंतु इस खुले स्थान के पक्षी प्रत्यक्ष रूप से हस रहे है—मेरे मन आया—मैं भी इन पक्षियो की तरह एक पेड़ से दूसरे पेड पर उछलता कूदता रहूं। मैं दोनों हाथ ऊपर करके पंखों की तरह हिलाने लगा और पक्षियों के स्वरों का अनुकरण करने लगा।

थोड़ी दूर पर एक मुर्गा एक झोंपडी की चोटी पर बैठकर गर्दन हिलाता हुआ पेट फुलाकर जोर-जोर से चिल्ला रहा था। मैं उस मुर्गे की ही नकल करने लगा। यह देखकर पिताजी हंसने लगे। मैंने पिताजी के चेहरे की ओर देखा तो उनकी आंखों से टप-टप आसू गिर रहे थे। वे हसी आने से पहले के थे क्या? वे आसू हंसने के थे या रोने के? मैंने चिल्लाना बंद कर दिया और पिताजी के गले मे बाहे डाल दी। पिताजी की हसी रुक गई और वे बड़ी-बडी सिसकियां लेकर रोने लगे।

गाड़ीवान ने पूछा, "क्यो भई, रोते क्यों हो?"

पिताजी बोले, "रोऊं नही तो क्या करूं, भई? सात साल पहले यह गाव छोड़ा था मैंने। उस समय घरवाली साथ थी। बंबई जाकर पैसा कमाऊगा इस आशा को हृदय में दबाए हम दोनो सिर पर सामान का बोझ लिए इसी रास्ते गए थे। पर यह हो गया? जैसा गया उसी तरह लौट

2

जब जागा तो देखा कि एक झोंपड़ी के सामनेवाले सहन में खटिया पर मुझे लाकर बैठा दिया है। हमारे साथ जो सामान आया था वह खटिया के नजदीक ही पड़ा हुआ था और पिताजी हाथ में झाड़ू लिए सहन झाड़कर साफ कर रहे थे। यह देखकर कि मैं जाग गया हूं, पिताजी ने मुझे गोद में उठा लिया। वे मुझे झोपड़ी के पिछवाड़े ले गए। उन्होंने मेरा मुंह धोया। कपड़ों की धूल झटकार दी और फिर बाहर लाकर खटिया पर बिठा दिया। झोपड़ी के बाहर ही तीन पत्थर लगाकर चूल्हा बना लिया गया था और उस पर दूध गरम होने को रख दिया था। झोंपड़ी में से एक बिलौटा दौड़ता हुआ आया। मेरे नजदीक पड़ा हुआ दूध का खाली कटोरा वह चाटने लगा। यह देखकर कि कटोरे में कुछ नहीं है, उसने अपना एक पंजा मेरी रान पर रख दिया और अपनी नीली आंखों से मेरी ओर टुकुर-टुकुर देखने लगा। मैंने पिताजी से कहा, "पिताजी, बिल्ली दूध मांग रही है।" पिताजी ने थोड़ा दूध लाकर उस कटोरे में उड़ेल दिया। उसे पी चुकने पर बड़े प्यार से वह मेरी गोद में आकर बैठ गया और गुर्र-गुर्र आवाज करने लगा। मेरे अपने गांव का यह मेरा पहला दोस्त।

घोड़े की गाड़ियां मैंने बंबई में देखी थीं। परंतु घोड़े पर बैठनेवाला मनुष्य मैंने आज प्रथम बार ही देखा। उस मनुष्य का बदन ऊंचा-पूरा और तगड़ा था। बड़ी-बड़ी मूंछों और गालों पर बालों के गुच्छे होने के कारण पहले ही भव्य दिखने वाला उसका चेहरा और अधिक उग्र दिख रहा था। घोड़े की टापों की आवाज से चौंककर मेरी गोद में सोया हुआ बिलौटा जाग उठा और घर में भाग गया। घुड़सवार ने मेरे पिताजी को पुकारा।

"क्यों गणवा, कब आए? यह तुम्हारा बेटा है? क्या हो गया था

जनी को ? नन्हा बच्चा ! छोटी उम्र में ही अनाथ हो गया। बिना मां का बच्चा देखता हूं तो मुझे बडी दया आती है। हमारी चिंगी को भी भगवान ने इसी तरह बे मां का कर दिया ···"

बोलते-बोलते वह सवार घोडे से नीचे उतरा। उतरते वक्त धीरे-से मुह फेरकर बाएं हाथ की कलाई से उसने अपनी आखो के आसू पोंछे।

पिताजी ने घोडे की लगाम पकडकर नजदीक के एक खभे से बाध दिया। पिताजी बोले, "आज मेरे आने के दिन ही मेरी झोपडी को सरकार के चरणों स्पर्श हुआ, यह बडा शुभ शकुन है। मन्या ! उठ, सरकार के चरण छू।"

मराठों की पद्धति के अनुसार चरणो पर सिर रखकर किस तरह नमस्कार करना चाहिए यह मेरी मा ने मुझे पहले से ही सिखा दिया था। उसके अनुसार ही मैंने उन्हे नमस्कार किया। पिताजी और उनमे कुछ बातें होने लगी। उस समय उनमे क्या बातें हुई थी, इस समय मुझे याद नही। मेरे दिमाग मे प्रश्न उठने लगे। ये 'सरकार' कौन हैं? 'सरकार' उनका नाम है अथवा उपनाम? ये घोडे पर बैठकर क्यों आए? क्या इनसे पैदल चलते नही बनता? यह घोड़ा किसका है? मेरे पिताजी को घोडे पर बैठना आता है क्या? ऐसा घोडा मुझे भी बैठने को मिल सकता है क्या?

मैं धीरे-से अपनी जगह से उठा और घोड़े के पास गया। डरते-डरते मैंने उसके पैरो पर मे हाथ फेरा। दुम के बालो को हाथ मे लेकर देखा। सरकार चिल्लाए, "देख बेटा, घोडा लात मार देगा।"

मैं लात से नही डरा। घोडा मुझे क्यों लात मारेगा? मेरे बदन को कोई हाथ लगाए तो मैं लात नहीं मारता। मै घोडे के सामने गया। जाने घोड़े को क्या लगा, मुझे सामने देखते ही वह फुरफुराया। मैंने हाथ ऊपर करके देखा। मेरा हाथ उसके मुंह तक पहुच नही पा रहा था। घोड़े को मुझ पर दया आई। उसने गर्दन झुका दी। मैंने अपने हाथ उसके गालों पर घुमाए। घोड़ा फिर फुरफुरा उठा। चारो पैरों पर नाचा और उसने अपनी ठंडी नाक मेरे गालों पर घिसी। सरकार बोले, "गणबा, बडा आश्चर्य है। तुम्हारे बेटे से हमारे मोती ने दोस्ती कर ली। गांव के किसी भी लडके को वह अपने सामने खड़ा भी नही रहने देता। लड़कों को लात मारने की

उसकी शिकायतें मुझे रोज सुननी पड़ती हैं। सिर्फ एक हमारी चिंगी की ही इससे दोस्ती है और अब तुम्हारे मन्या से हो गई है।"

प्रश्न न करने की उत्कट इच्छा होते हुए भी मैं इस समय उसे संवरण न कर पाया। मैंने पूछा, "क्यों सरकार, आपकी चिंगी चिड़िया की तरह चूं-चूं करती है क्या? आज गाड़ी में मेरे सिर पर एक चिड़िया बैठ गई थी।"

सरकार बोले, "अरे बाबा, तुम्हारी वे चिड़िया स्वीकार है। परंतु हमारी इस चिंगी चिड़िया के कलरव से हमारी सारी कोठी गूंज उठती है। आज एक बार ही चिड़िया तेरे सिर पर बैठी, पर यह हमारी चिंगी चिड़िया सदा मेरे सिर पर ही बैठी रहती है।"

"पर इस समय तो वह नहीं दिख रही है आपके सिर पर?"—मैंने कहा।

मेरे इस प्रश्न को सुनते ही दोनों ही हंस पड़े। वे क्यों हंसे यह मैं नहीं समझ पा रहा था। फिर मेरे दिमाग में प्रश्न-चिह्नों ने कोलाहल मचा दिया। यह चिंगी चिड़िया क्या चीज है? यह कहां की है? कोठी याने क्या? झोपड़ी या चाल? सदा सिर पर बैठी रहती है याने क्या? सारी ही भाषा मेरे लिए अपरिचित थी। मैंने घोड़े से दोस्ती करना शुरू किया। घोड़ा भी अपने ढंग से मुझसे खेलने लगा। इसी समय सरकार उठे। यह देखकर कि पिताजी ने उन्हें नमस्कार किया, मैंने भी उनके चरण छूकर उन्हें नमस्कार किया। उन्होंने मेरी पीठ थपथपाई और मुझसे कहा, "क्यों रे, तुझे घोड़े पर बैठना है क्या? 'हां' कहूं या 'ना' इसका कोई निर्णय न कर पाने के कारण मैं कुछ भी नहीं बोला। सरकार बोले, "ठीक है। कल मैं तुझे घोड़े पर बिठाकर घुमाने ले चलूंगा।"

अभी मैं घोड़े पर बैठने को तैयार नहीं था। पिताजी ने फिर झुककर मुजरा किया और घोड़ा दौड़ाते हुए सरकार चल दिए। जाते-जाते घोड़े ने पीछे मुड़कर मेरी ओर देखा, ऐसा मुझे लगा। मेरे गांव का मेरा यह दूसरा दोस्त।

मैं घोड़े की टापों से उड़ने वाली धूल लगातार टक लगाए देख रहा था। ऐसी उड़ती हुई धूल मुझे बंबई में कभी नहीं दिखी थी। इसलिए

पेड़ों की छायाओं के बिखराव में से बीच-बीच में आने वाली सूर्य-किरणों द्वारा, उड़ती हुई धूल से प्राप्त हुआ सौन्दर्य देखकर, मेरी आंखें तृप्त हो गईं। मैंने नीचे अपने पैरों की ओर देखा। वहां भी धूल थी ही। बंबई में धूल के स्पर्श का सुख मुझे कभी नहीं मिला था। मैंने धीरे-धीरे धूल में पैर मार कर देखा। मेरे पैरों में गुदगुदी होने लगी। चौंके हुए नवजात बछड़े की तरह मैं चारों तरफ फुदकने लगा।

पिताजी निश्चल दृष्टि से मेरी ओर निहार रहे थे। उन्होंने मुझे फुदकने से मना नहीं किया। इस कारण मुझे प्रोत्साहन ही मिला, और मैं और अधिक फुदकने लगा। वह निर्मल आनंद अब कहां है? फोम के गद्दों पर आज मैं लोट रहा हूं। परंतु धूल के स्पर्श से होनेवाली उस गुदगुदी से अलबत्ता मैं सदा के लिए वंचित हो गया। धूल के फव्वारे, सूरज की वे किरणें, सूर्य किरणों के परावर्तन के कारण धूल के बादलों को प्राप्त हुए भिन्न-भिन्न आकार, उन आकारों में दृष्टिगोचर होने वाली अस्पष्ट सी काव्यमय आकृतियां, उन आकृतियों के दर्शन से होने वाला अकृत्रिम आनंद—यह सब धूल के फव्वारे की तरह विलुप्त हो गया है।···मेरे जीवन के धूल समूह में भाग्य के पदविक्षेप ने जो फव्वारे उड़ाए, उन फव्वारों को प्रेम की सूर्य-किरणों ने आकृतियां प्रदान कीं। उन आकृतियों के दर्शन से, प्रेम-रवि से मैंने एकरूपता पाई। भाग्य का पदविक्षेप रुका। वह धूल-समूह विलुप्त हो गया, सूर्य की किरणें निष्फल हो गईं। यह किस कारण हुआ? यह किस की संवेदना? दुनिया के व्यवहार से मैं व्यवहारी बना। धूल के उड़ने वाले कणों का काव्य अब मुझे दिखता नहीं था। व्यवहारिकता ने प्रेम की इस प्रकार दुर्दशा कर डाली। मेरे जीवन का भी सूत्रपात काफी खटाई में पड़ गया। मेरे आगामी जीवन पर जिन बातों ने कुछ विशेष प्रभाव डाला है, धूल के कणों की तरह तुच्छ लगने वाली ऐसी कुछ बातें इस प्रकरण में सूचित हुई हैं। अपने जीवन का सिंहावलोकन करते समय ये तुच्छ बातें ही मुझे बहुत बड़ी लग रही हैं।

3

अति विचारशील स्वभाव होने के कारण मुझे कभी भी सुख नहीं मिला। याने मैं सदैव दुखी ही रहा करता था, इसका अर्थ यह कतई नहीं। परंतु प्रत्येक बात की जड़ मे गहराई तक जाने और उस पर आवश्यकता से अधिक विचार करने की मेरी वृत्ति होने के कारण किसी भी विचार का अंत सुख का न होता था। अन्य लड़के आनंद मे हंसते-खेलते और सुख से रहते थे। पर मैं अलबत्ता सदा पिताजी के पीछे-पीछे रहकर एकांतप्रिय बनता जा रहा था। पिताजी को भी छोड़कर रहना मुझे कठिन था।

अब मैं दस साल का हो गया था। यह उम्र आनंद से हंसने खेलने की होती है। फिर भी इस उम्र में मुझमें अकारण प्रौढ़ता आ गई थी। यद्यपि यह बात न थी कि अन्य लड़को को मैं तुच्छ मानता था, फिर भी खिलाड़ी लड़कों मे जाकर दोस्ती करना मुझे बिलकुल पसंद नहीं था। रोज सुबह मैं शाला जाता, फुरसत के वक्त घर-कामो मे पिताजी का हाथ बटाता और छुट्टी के दिन पिताजी के साथ खेत पर काम करता। ऐसा मेरा यांत्रिक जीवन था। यद्यपि यह सच है कि मेरी किसी से दोस्ती नहीं थी, फिर भी यदि मैं कहूं कि शाला के लड़कों मे मेरा एक मित्र था, तो कोई हर्ज नहीं। मित्र के पास हृदय खोल देने की वृत्ति बचपन से ही मनुष्य जाति मे होती है। इस नियम के अनुसार देखा जाए तो वह मेरा मित्र होने के बजाए मैं उसका मित्र हो गया था। मेरे इस मित्र का नाम विनायक था। वह जाति का ब्राह्मण था। उसका बाप गांव का पुरोहित था और उसकी और मेरी उम्र मे पांच-छः वर्ष का अंतर था।

विनायक एक कमजोर लड़का था। गांव के लड़के अक्सर हट्टे-कट्टे होते है, पर ब्राह्मण के लड़के जातीय श्रेष्ठता का थोथा अभिमान होने के कारण दंगा और मारपीट करने मे उन्हे शर्माते हैं। हम कुनबी और मराठों के लड़के मनमाना उछलने-कूदते हैं, मारपीट करते हैं, रोते हैं, रुलाते हैं

बेचारा बिलकुल रुआसा हो गया। मैं एकत्रित हुए लड़कों में से एक तरफ हट गया, और लडको के उस नेता से बोला—"गुड्डू सीधी तरह से रास्ता छोड दो।"

गुड्डू बोला—"वाह रे बवई की कोयल! अब आप आए शायद उस बुद्धू की मदद के लिए?"

मैं उम्र में यद्यपि छोटा था, परतु पिताजी द्वारा मुझसे करा लिए गए रोज के व्यायाम के कारण मेरा शरीर मजबूत और गठीला बन गया था। उम्र के हिसाब से मैं पाच-छ वर्ष से बडा ही दिखता था। मेरा वर्ण गोरा ही था, परतु चेहरा जरा नाजुक और सुन्दर होने के कारण शाला के लडके मुझे बवई की कोयल कहा करते थे। इस समय तक मेरे बल का परिचय अन्य लोगो को न होने के कारण मुझे भी वे विनायक की ही पक्ति में बिठाते थे। गुड्डू को पुन. एक बार मैंने रास्ता छोडने को कहा। उसे चेतावनी दी। पर रास्ता न छोडकर वह सिर्फ जोर से हू-हू करके हस दिया। उसके हसते ही मुझे क्रोध आ गया और मैंने आव देखा न ताव, उसकी छाती पर जोर का एक घूमा जमा दिया। उस अकल्पित मार से वह घबडाकर एक ही क्षण स्तब्ध रहा, और दूसरे ही क्षण हम दोनो की लड़ाई शुरु हो गई। वह कैसे शुरू हुई इसका दर्शको को पता तक न चला।

मन के वेग से हम एक-दूसरे को घूसे पर घूसे जमा रहे थे। गुड्डू मेरी अपेक्षा उम्र में काफी बडा था और पक्का गुडा भी था। फिर भी मेरी मार से थोडी ही देर में वह हैरान हो गया और अपने साथियो को मदद के लिए पुकारने लगा। फिर क्या था? बाकी के आठ-दस लडके भी आकर एकदम मुझ पर टूट पडे। विनायक को अपनी मदद के लिए बुलाने में कोई अर्थ ही नही था। अतएव उन सब का अकेला सामना किए बिना मेरे पास दूसरा उपाय ही नहीं था। पिताजी ने मुझे जापानी पद्धति के कुछ पेच सिखा दिए थे। उनका मैंने इस वक्त उपयोग किया और उनके कारण मैं उन सब लडको के लिए भी भारी हो गया। गुड्डू की नाक में खून की धार बहने लगी और बाकी के लडकों को भी पैरो को पकड में नीचे पटककर घूसों की उन पर वर्षा करके मैंने हैरान कर डाला। एक-के-बाद-एक वे भागने लगे और गुस्से से भरा गुड्डू भी मुझे इसका बदला लेने की धमकी

देता हुआ पीछे हटकर अंत में वहां से चल दिया।

विनायक ने आगे बढ़कर मेरे दोनों हाथ पकड़ लिए और अपने हाथ से मेरे बदन पर की धूल अपनी धोती से झाड़कर साफ कर दी। उसी क्षण से विनायक की और मेरी दोस्ती हो गई। इस भय से कि घर में देर से पहुंचने के कारण उसकी पिटाई होगी, मेरे साथ घड़ी-भर बातें करने की इच्छा होते हुए भी, मुझसे विदा लेकर विनायक तुरन्त चल दिया और मैं वहां अकेला ही रह गया। पर सच पूछा जाए तो यह सारी लड़ाई देखने के लिए एक व्यक्ति, एक ही क्यों, एक से भी अधिक व्यक्ति वहां हाजिर थे। परंतु वे झाड़ियों की ओट में होने के कारण मेरी नजर में नहीं आए थे। विनायक के चले जाने के तुरंत बाद झाड़ियों की ओट से सरकार सड़क पर आए। उनके साथ सुन्दर दिखने वाली एक आठ-नौ साल की लड़की थी। उसका चेहरा अत्यंत आकर्षक और आंखें बड़ी पानीदार थीं।

सरकार मेरी पीठ ठोककर बोले, "शाबाश मेरे बहादुर! तू इतना अच्छा पहलवान है यह मैं नहीं जानता था।" यह देखकर कि मैं उन दोनों की ओर टक लगाए देख रहा हूं, वे बोले, "अच्छा, यह जानना चाहते हो कि यह कौन है? अरे, यही है हमारी चिंगी! और चिंगीबाई, यह हमारे गणबा का मनोहर है—समझी?"

चिंगी घबड़ाकर जोर-से बोली, "वह देखिए, वह देखिए—!"

मेरी नाक से खून की धारा बह रही थी। चिंगी ने अपने हाथ से पकड़कर मुझे नीचे बिठाया और अपने लहंगे से मेरी नाक से बहने वाला खून पोंछने लगी। उसके उन नन्हे हाथों के स्पर्श से मेरे हृदय में विलक्षण लहरें उमड़ने लगीं। हजार विचार मेरे मन में आए। मैं पहले कह ही चुका हूं कि आवश्यकता से अधिक बड़प्पन दिखाने का मुझ में दोष था। नन्ही चिंगी का हाथ इसी तरह मुझे लगता रहे, इसलिए मैंने भगवान से मनौती मनाई कि मेरी नाक से बहने वाला खून कभी बंद ही न हो। मैंने आंखें बंद कर ली थीं और वह अपने लहंगे से खून लगातार सोख ले रही थी।

सरकार बोले, "चिंगी, तेरा सारा लहंगा सन गया है खून में। ठहर, यह मेरा दुपट्टा ले। वह खून इस तरह बंद नहीं होगा। ... चल

हमारी कोठी मे। वहा जख्म पर पानी की पट्टी रखकर कपास भर देंगे जिससे खून का आना वद हो जाएगा।"

"माफ कीजिए। आपके घर जाने की क्या जरूरत? मैं अपने घर जाकर कपास भर लूगा।"

चिंगी बोली, "ऐसा क्यो? क्या हमारी कोठी मे आना नही चाहते? मैं स्वय रखूगी पानी की पट्टी तुम्हारे जख्म पर।"

मैंने कहा, "थोडा-सा खून अगर वह भी गया तो क्या हो जाएगा? मैं कोई विनायक नही हू!"

सरकार जोर का कहकहा लगाकर बोले, "शाबास! मराठा का बच्चा है इसमे शक नही। चिंगी, हट जा वहा से। वहने दे उसका खून। मराठा-बच्चे को, जख्म से खून बहता रखने की आदत ही होनी चाहिए। पर भय्या, कपास तो हमारी कोठी मे ही भरा जाएगा तेरे जख्म मे! जमाना हो गया—हमारी कोठी को मराठा के जख्म से बहने वाले खून का स्पर्श नही हुआ। वह कम-से-कम एक बार,—बहुत दिन के बाद ही सही, आज हमारी कोठी को हो जाने दो। अफसोस इस बात पर होता है कि आज लडाई मराठो-मराठो मे हुई।"

दाए हाथ मे मेरा हाथ और बाए हाथ मे चिंगी का हाथ पकडकर, सरकार कोठी की ओर मुड पडे। मेरे मन मे विचार-तरग उठने लगें। नाक से खून का बहना जारी ही था—उसे बीच-बीच मे मै कुरते की आस्तीन मे पोछ ही लेता था। परन्तु मस्तक मे विचारों के जो तरग बह रहे थे उन्हे पोछने के लिए मेरे हाथ मे आस्तीन नही थी! चिंगी ने मेरी बहादुरी देखी। चिंगी ने मुझे आज ही देखा। पर कैसे देखा? क्यो ऐसा प्रश्न मेरे मन मे उठना चाहिए? मेरी वीरता से विनायक पर उपकार हुआ। पर विनायक को क्या लगा, इस विषय मे मेरे मन मे विचार भी नही आया। मैंने जो किया वह विनायक के लिए किया था। फिर इसके कारण चिंगी को क्या लगा, इसका विचार मैं क्यों करूं? चिंगी का स्पर्श! पाच साल पहले मैं बंबई मे आया। उस समय चिंगी जैसी ही एक छोटी नाजुक चिडिया का स्पर्श मुझे हुआ था। उस स्पर्श मे और इस स्पर्श मे क्या फर्क? उन नन्हे परों के समान ही ये नन्हे हाथ कितने नाजुक थे? फूल की

पखुड़ियों की तरह वे अंगुलियां—एक हाथ से खून को पोंछते हुए दूसरा हाथ उसने मेरे गाल पर रख दिया था। सामने शीशा होता तो उस नाजुक आरक्त हाथ की छाप मेरे गाल पर अंकित हुई है क्या, यह मैं देख पाता। उस हस्त-स्पर्श से मेरे वदन पर रोमांच क्यों हो आए? जैसे नींद आ रही हो उस तरह मेरी आंखें बंद क्यों हो गईं? वह बार-बार अपना हाथ मेरे मुंह पर फेरे ऐसा मुझे क्यों लगने लगा? मानवी विकारों से उस समय मैं वंचित था, फिर भी उस हस्त-स्पर्श ने मेरे हृदय में विलक्षण बेचैनी शुरू कर दी! उस नन्हे हाथ को कसकर पकड़ लूं। और, और क्या लगा इसका आज मुझसे वर्णन करते नहीं बनता।

इस विचार के मन में आते ही सरकार के हाथ को, जो मेरे हाथ में था, मैंने कसकर पकड़ लिया। यह देख सरकार घबड़ाकर बोले, "क्या? क्या हुआ? क्या गश आ गया बेटा?" मैंने गर्दन के इशारे से 'ना' कहा। चिगी बोली, "क्या सचमुच चक्कर आया?" उसके शब्दों में मूर्तिमान कारुण्य था। 'छिः छिः' इस तरह मर्दानी आवाज निकाल कर मैंने उसके भय को दूर करने की कोशिश की।

सरकार के ड्योढ़ी के पास पहुंचते ही कोठी में से एक वृद्ध सेवक आगे आया और वह चिगी को गोद में उठाकर कोठी के भीतर ले गया। मुझे हाथ में पकड़कर सरकार भीतर ले गए और एक सेवक ने आकर पानी से मेरा मुंह धोया और किसी पत्ती को मलकर उसका रस मेरी नाक में निचोड़ दिया। खून का बहना उसके कारण बंद हो गया। पर मेरा मन अलबत्ता उद्विग्न हो उठा। किसके कहने पर मैं कोठी में आया? ये सारे नौकर मेरी परिचर्या कर रहे हैं, पर चिगी क्यों बाहर नहीं आ रही है? मुझे अच्छा लगा या नहीं, यह जानने की उसे उत्कंठा ही नहीं है क्या? इसलिए उसने मुझे जो कोठी में बुलाया सो क्या सिर्फ शिष्टाचार का पालन करने के लिए? ऐसे हजार प्रश्न मेरे मन में उठने लगे। सरकार ने पूछा, "अब कैसा लगता है?" मैंने चौंककर उत्तर दिया, "वैसे लगने लायक कुछ था ही नहीं। पर अब अच्छा लगता है।"

मैं सिर्फ विचारों में भ्रमण करता हुआ पागल की तरह स्तब्ध बैठा था और सरकार वहां एकत्रित हुए लोगों से उस मारपीट की घटना का

हाल कह रहे थे। वे कह रहे थे, "एकदम दस लड़के इस पर टूट पड़े थे, पर यह था पट्ठा, जो जरा भी न डगमगाया! सबको चारों खाने चित्त कर दिया इसने। प्रत्येक लडका एक-न-एक जख्म लेकर घर गया है। हमारी चिंगी तो सिर्फ देखकर ही घबरा रही थी और मारपीट बंद करा देने के लिए मुझसे बार-बार कह रही थी। पर मुझे मराठा के बच्चे का कमाल देखना था। इसलिए मैं थोडा भी आगे नही बढा। दिल में कहा, निपट लेने दो आपस में। और तो और, मैंने लडकों को इसकी आहट तक न लगने दी कि वहा नजदीक ही मैं हाजिर हू। इस लडके की ओर देखो। क्या तुम्हे यह नही लगता कि यह सोलह वर्ष का है? पर नहीं, वह सोलह वर्ष का नही है। मैं उसकी उम्र जानता हू। उसकी उम्र अभी पूरे दस वर्ष की भी नही है। उसके चेहरे की ओर देखो— कैसा शानदार दिखता है? उसे किसी भी रियासत का युवराज बना दे फिर भी शोभा दे देगा— क्या ऐसा नही लगता तुम लोगों को? उसके भुज-दण्ड देखो—कैसे गठीले और मजबूत हैं! लडके ऐसे चाहिए। पर आजकल के जमाने में कहा दिखते है ऐसे लडके? अब तो सिर्फ सुनने की बातें रह गई है। सुनते है आठ-दस वर्ष के शिवाजी ने दुश्मनों के जवान लडकों को इसी तरह चारो खाने चित्त कर दिया था। एक लडके की मार के कारण दस लडके भाग गए! अब इसकी तारीफ करू अथवा उन लडको पर तरस खाऊ, यह मैं समझ ही नही पाता। और वह विनायक, मूद जोशी का लडका! इससे पाच-छः साल बडा है। सुनता हू कक्षा मे पहला नबर रहता है। पर उस वक्त सिर्फ थरथर कापता हुआ देख रहा था तमाशा। मन्या मारपीट के लिए आगे बढा था सिर्फ उसके लिए, पर वह मन्या की मदद को नही गया। उसे अपने खुद की रक्षा करते भी न बनी। पहला नम्बर क्या चाटना है? आज हमारे मन्या ने अलौकिक वीरता दिखाई उसमें जरा भी शक नहीं।"

वे बार बार मेरे हर पेंच का वर्णन करके खूब मुह भर के मेरी तारीफ कर रहे थे। आत्म-प्रशसा किसे प्रिय नहीं होती? स्तुति-श्रवण के नशे में मस्त होकर मैं चित्र की तरह स्तब्ध बैठा था। सरकार के मुंह से वर्णन सुनकर श्रोताओं के मन पर क्या प्रभाव पड रहा है, यह देखने के लिए मैंने एक बार भी नजर ऊपर नहीं की। मुझे पक्का आत्म-विश्वास था। फिर

मुझे नई दृष्टि प्रदान की है···"

सरकार को बोलने का जैसे आवेश ही आ गया था। मेरे नजदीक ही बैठा हुआ शिदबा अपने आप मे ही बुदबुदा रहा था—"आज सरकार को आखिर हो क्या गया है ? वैसे चार शब्द बोलना उनके लिए कठिन होता है। पर आज यह कैसी बकने की धुन सवार हो गई है।"

मैं सिर्फ कानों से सुन रहा था। पहले सरकार कैसे थे—आज वे कौन-सा नया स्वांग दिखा रहे है, इसकी तुलना करने का साधन मेरे पास कुछ भी नही था। मेरी निगाह सिर्फ एक ही जगह पर किल गई थी। इसी समय सरकार बोले, "गणवा, आज तुम्हारे लडके ने कमाल कर दिया !" पिताजी का नाम कानो मे पड़ते ही मैं चौंककर खडा हो गया। पिताजी सरकार को मुजरा करके आगे आए और उन्होंने मुझे कसकर सीने से लगा लिया।"

पिताजी बोले, "बिनू जोशी ने बताया मुझे सारा हाल। शाम हो गई फिर भी लडका घर नही लौटा था, इसलिए पूछताछ करने मैं बाहर निकला था तो बिनू जोशी रास्ते मे ही मिल गया। उसी ने बताया मुझे कि आप मन्या को अपनी कोठी ले गए हैं।"

सरकार बोले, "तुम्हारा लडका आज मेरा गुरु बना। आज उसने मेरी आखे खोल दी। आज मैंने स्त्रियो का परदा हटा दिया। वैसे मेरे घर मे स्त्रिया है ही कहा ? अकेली नौ साल की नन्ही लडकी है। परतु मराठो की झूठी कल्पनाओ को छाती से लगाए बेचारी को आज तक कोठी के कारागार मे बद करके रखता रहा। आज मैंने सबक सीखा। कल मेरी लडकी दूसरे गाव गई और किसी पराए ने उसका हाथ पकड़ लिया तो उसके मुह पर थप्पड़ लगाने की शक्ति उसके शरीर में होनी चाहिए, यह आज मैने जान लिया।"

एक सेवक ने आकर चबूतरे पर की दोनों बत्तिया जला दी और सरकार को मुजरा किया। सब लोगों द्वारा उसी तरह मुजरा करने पर मेरे पिताजी ने सरकार से घर जाने की इजाजत मांगी। उसे देते हुए सरकार बोले, "सुनो गणवा, घर जाने पर अच्छी मालिश करना इसकी। खूब मार खाया है बेटा ने। कहा-कहां उसे लगा है यह तुम्हें वह शायद

बताएगा नही। दूसरा कोई होता तो उसकी थुक्का फजीहत हो जाती! अच्छे गरम पानी से सेंकना उसका बदन और तेल से पूरे बदन की मालिश करना। तू जा मन्या अब पिता के साथ—कभी-कभी आया करना हमारी कोठी पर।"

पिताजी मेरा हाथ पकडकर कोठी से बाहर निकले। ड्योढी के नजदीक आते ही मुझे लगा कि सहज गर्दन घुमाकर पीछे देखू। चिंगी सीढ़ियां उतरकर नीचे आई और मेरे पिताजी से बोली, "गणबा, बीच-बीच में भेजते रहना मन्या को हमारे घर। मुझे बिलकुल सूना-सूना लगता है इतनी बड़ी कोठी में।"

4

शाला की छुट्टी थी। एकात की मुझे अत्यत रुचि होने के कारण जानवरो को चरागाह मे चरने को छोडकर, मै एक पेड के नीचे शाति से पड़ा था। भोर का समय था। नदी का प्रवाह मद था। हवा बिलकुल नही बह रही थी। इसके बावजूद हवा में काफी सर्दी थी। मेरे मन मे यद्यपि शांति थी, पर दिमाग में अलबत्ता विचारो ने कोलाहल मचा रखा था। सच पूछा जाए तो विचार करने की मुझे जरूरत क्या थी? न मुझ पर गृहस्थी का भार था और न ही मुझे खेती-बारी का कोई काम ही करना पडता था। 'शाला भली और अपना घर भला, ऐसी स्थिति होते हुए भी मैं विचारों मे डूब गया।

मार पीट की घटना के बाद मैं बीच-बीच में कोठी जाया करता। कोठी में जब सरकार हाजिर रहते, तभी चिंगी से मेरी मुलाकात होती। वे वहा न होते तो मराठों के रीति-रिवाज का कडाई से पालन करने वाले उनके नौकर उससे मेरी भेट न होने देते। छोटे-छोटे बालकों पर भी मराठों के रीति-रिवाज की पाबंदी होती है, इसकी उस समय तक मुझे जानकारी

नहीं थीं। इसलिए मैंने कोठी के मालिक का 'सरकार' के नाम से उल्लेख किया सो ठीक ही था। लेकिन मार-पीट के दिन पिताजी से पूछकर मैंने अपनी जिज्ञासा तृप्त कर ली। जिन्हें हम सरकार कहकर संबोधित करते थे, वे किसी रियासत के राजा नहीं थे। सिर्फ गांव के जमींदार थे।

परंतु गांव के जमींदार का ठाट-बाट कुल मिलाकर किसी छोटी रियासत के ढंग पर ही होता है। आसामी उन्हें किसी राजा के बराबर ही मानकर उनका सम्मान करते हैं, और वे भी अपने आसामियों के साथ इसी तरह पेश आते हैं जैसे वे उनकी ही प्रजा हैं। अपनी यह आत्मकथा लिखते समय मैंने स्थलों का वर्णन बिलकुल छोड़ दिया है।

इसी तरह व्यक्तियों के वर्णन भी मैंने जानबूझकर टटपुंजिया ही दिए हैं। किसी उपन्यास के लंबे-चौड़े और लच्छेदार भाषा में लिखे हुए वर्णनों पर मोहित हो जाने वाले पाठकों को मेरे इस कथानक में काफी कमी दीख पड़ेगी, इसमें शक नहीं।

सुबह रोटी खाकर मैं नहीं निकला था। पिताजी द्वारा बहुत ही आग्रह किए जाने के कारण निकलने से पहले मैंने एक कटोरा दूध पी लिया था, बस! चटनी, रोटियां और बैंगन का साग एक गठरी में बांधकर अपने साथ रख लिया था। वैसे मुझे बड़ी भूख लगती है, पर जाने क्यों, आज मुझे भूख ही नहीं लग रही थी। मन में यों ही कुछ सकपकाहट-सी लग रही थी। मैंने बार-बार सोचकर देखा तो मस्तक और अधिक भन्नाने लगा। इस प्रकार आवश्यकता से अधिक विचार करने की ईश्वर ने जो, यह प्रवृत्ति मुझे दी, उसके लिए मैं उस पर नाराज हो गया और मन-ही-मन मैंने उसे गालियां भी दे डालीं। जैसे-जैसे दिन चढ़ने लगा, वैसे-वैसे मेरा सिर और अधिक भन्नाने लगा।

मैं अपने स्थान से उठा और नदी पर गया। अंजलि से पानी लेकर मैंने मस्तक पर डाला और फिर एक शिला पर बैठकर अपने पैरों को घुटनों तक पानी में डुबो दिया। फिर पानी में उन्हें हिलाता हुआ उसी तरह मैं बैठा रहा। इसी समय पीछे से आकर किसी ने अपने हाथ से मेरी आंखें बंद कर दीं। ऐसी बचकानी बातें मैं नापसंद करता था। मैंने निश्चय कर लिया कि चाहे मेरी आंखें बंद ही रहें मैं बोलूंगा नहीं। आंखें बंद करने

वाला व्यक्ति सिर्फ हुंकारी का प्रश्न करने लगा। परंतु हुंकारी की ध्वनि को पहचान सकने योग्य मेरा मस्तक ठिकाने पर था कहां? आंखें बंद करने वाला व्यक्ति बोला—

"बता न मेरा नाम?"

मैंने कहा, "इतने जोर से बोलने के बाद अब नाम बताने में क्या मजा?" वह व्यक्ति बोला, "मैं भी आखिर और कब तक आंखें बंद किए रहता। तुम कोई जवाब ही नहीं दे रहे थे। फिर क्या मुझे जोर से पुकार कर नहीं पूछना था?"

आंखें न खोल मैंने कहा, "कब आए कोल्हापुर से?"

मेरी आंखों पर से हाथ हटाकर विनायक बोला, "आज सुबह आया। तुमसे मिलने के लिए बड़ा उत्सुक हो गया था। इसलिए तुम्हारे घर गया। तुम्हारे पिताजी ने पता बताया तो सीधा दौड़ता यहां आ गया। चलो, ऊपर टेकड़ी पर किसी पेड़ के नीचे बैठें। यहां पानी में क्या कर रहे हो?"

मैंने कहा, "सिर बहुत भन्ना रहा था। इसलिए पानी में पैर डुबोकर बैठा हूं।"

विनू बोला, "सच है! पैरों को ठंडा किए बगैर सिर ठिकाने पर नहीं आता।"

हम दोनों ही टेकड़ी पर जाकर एक पेड़ की छाया में बैठ गए। बैठने के बाद विनायक मेरी ओर लगातार एकटक निहार रहा था। मैं भी कुछ क्षणों तक उसी तरह उसकी आंखों की ओर टक लगाए देख रहा था। कुछ मिनटों तक इसी प्रकार पागल की तरह एक-दूसरे की ओर देखते हुए हम बैठे थे। उस देखने में कितना अर्थ था? व्यर्थ की बकबक की अपेक्षा केवल इस दृष्टि-मेल से हमारा विचार-विनिमय चल रहा था। मुझे एक-दम सिसकी आ गई। विनू बोला, "क्या हुआ रे मनोहर?"

"क्या हुआ, कौन जाने! कुछ समय पहले से मेरा मन बड़ा अजीब-सा हो गया था। इसलिए नदी के पानी से सिर को ठंडा करके देख रहा था। नदी के पानी को मस्तक पर डाला फिर भी अच्छा नहीं लगा। परंतु आंखों का पानी अब जब गालों पर बह गया तो मुझे जरा अच्छा लगने

लगा।"

"बड़े ही विलक्षण प्राणी हो तुम! कोई कारण न होते हुए भी तुम एकदम रो क्यों पड़ते हो? और फिर एक ही सिसकी से तुम्हें अच्छा लगा ऐसा कहते हो? मुझे लगता है आगे चलकर तुम कवि बनोगे।"

"आगे मैं क्या बनूंगा इस विचार से तो मेरा सिर आज भन्ना रहा था। तुम कोल्हापुर में जाकर अंग्रेजी पढ़ रहे हो और मैं इधर जानवर चरा रहा हूं। कैसे-कैसे विचार मेरे मन में आते हैं, यह तुम्हें कैसे बताऊं, विनू! ऐसा लगता है कि एकदम बी० ए० हो जाऊं। मुन्सिफ अथवा तहसीलदार बन जाऊं। दो सौ रुपये तनख्वाह मिले। एक घोड़ा गाड़ी रखूं। मैं स्वयं उसमें नहीं बैठूंगा। भोर होते ही गाड़ीवान गाड़ी जोतकर दरवाजे के सामने लाए और मैं पिताजी से कहूं, "चलिए, थोड़ा घूम आएं।" पिताजी के गाड़ी में बैठते ही गाड़ीवान को आंख से इशारा करूं और मैं पैदल चलता हुआ घूमने जाऊं। पिताजी की खिदमत में चार चपरासी रहें। कोई उनके बदन की तेल से मालिश कर रहा है। कोई पैर दबा रहा है। पिताजी को थोड़ी भी मेहनत न करने दूं। क्यों जी विनू, अभी बी० ए० होने को कितने साल लगेंगे मुझे?"

"यह देखो, तुम हो अभी पांचवीं में। तुम्हारी उम्र क्या है—ग्यारह वर्ष ही न। अब दस वर्ष में तुम अंग्रेजी शाला में जाने लगे तो—ग्यारह और सात अठारह। अठारहवें वर्ष तुम मैट्रिक होगे। आगे अगर लगातार हर वर्ष पास होते रहे—और होते ही रहोगे तुम—तो बाईस वर्ष की अवस्था में बी० ए० हो जाओगे। यानी आज से और ग्यारह वर्ष बाद तुम बी०ए० हो जाओगे।"

"आज से और ग्यारह वर्ष बाद? मतलब यह कि जितनी जिंदगी मैं गुजार चुका हूं उतनी ही मुझे और खर्च करनी पड़ेगी तब कहीं जाकर मैं बी०ए० होऊंगा? इसमें के कुछ वर्ष कम नहीं किए जा सकेंगे क्या?"

"किए जा सकते हैं। हमारे कोल्हापुर में एक ट्रेनिंग क्लास है। उसमें एक साल में तीन कक्षाओं की पढ़ाई पूरी कर देते हैं। उसी क्लास में मैं जा रहा था। इसीलिए तो मैं दस साल पांचवीं में चला गया। और तीन साल बाद मैट्रिक। बी० ए० होने के लिए मुझे अभी सात साल और हैं। तुम

तो तुम जैसे हट्टे-कट्टे लडके को देखकर, तुम्हारी उम्र की ओर कोई न देखता। घोडे पर जीन कसकर घुड़सवारों में तुम्हें तुरंत भरती कर लेता। लडाई जीत कर तुम नाम कमाते। सरकार की तरह जमीदार बन जाते। परन्तु तलवार के दिन लद गए। तलवारें भी चल दी। अब कागज काले करने के दिन आए हैं। झोली की जमीदारी अब हर व्यक्ति के भाग्य से बंध गई है। भीख मांगने में शर्म करने से काम कैसे चलेगा ? तुम अगर बी० ए० होना चाहते हो तो पहले झोली का पुण्य करो।"

"सोचकर देखूगा। पर क्या बताऊ विनू, यह कल्पना ही मुझे अच्छी नही लगती। बडी कठिन लगती है—अपमानजनक मालूम होती है। मैं असली मराठा का बच्चा हू। राजा से ही क्यों न हो, पर क्या मैं भीख मांगू ? न मिले शिक्षा तो न सही। पिताजी के समान ही खेती-बारी करके जिंदगी गुजार दूगा। नही तो बंबई की किसी मिल में चल दूगा। लेकिन प्राण भले ही चले जाए, पर किसी से भीख कभी नही मांगूगा।"

"मैं भीख मांगने कोल्हापुर गया तो क्या तुम समझते हो कि बडी खुशी से गया ? पिताजी तो कहते थे कि अभी कुछ दिन वेदशाला में ही जाओ और बाद में पुरोहिताई का पुश्तैनी धंधा करो। दस-बारह रुपए महीना मेरे लिए खर्च करना पिताजी के लिए कोई मुश्किल नही था। पर वे राजी ही नही हुए। बोले, "जा जहा तेरा जी चाहे और भीख मांग। मेरे पास से एक कौड़ी भी नही मिलेगी।" इसलिए इज्जत गांव में रख दी और पिताजी की आज्ञा को शिरोधार्य कर कोल्हापुर जाकर भीख मांगना शुरू कर दिया। इसीलिए आज पांचवी कक्षा में हूं।"

"क्या तुम्हारे पिताजी ने कभी यह पूछताछ की कि तुम्हारा वहा कैसा चल रहा है ?"

"नही की। और इसकी मुझे परवाह भी नही। उन्हे यह बताकर कि मेरे दिन कितनी मुश्किल में वहा गुजर रहे हैं, उनके सामने रोने की अपेक्षा अपना उद्देश्य पूरा करने के लिए मुझे कमर कसनी चाहिए। कौन क्या कहेगा इसकी परवाह करने से मेरा अब नही चलेगा। मैंने एक ही बात ध्यान में रखी है और वह यह कि मुझे बी० ए० होना है।"

"मैं भी बी० ए० होना चाहता हूं, विनू !"

"फिर हो न। कौन कहता है कि मत हो। पूर्वजों के आदर्श पर चलकर बी० ए० नहीं हो सकते। इस अभिमान को छोड़ दो, मन्या! खैर, यह अभिमान जब छोड़ोगे तब छोड़ना। अभी तुम अपनी रोटी की वह पोटली खोलो। मुझे जोर की भूख लगी है।"

"मेरे घर की रोटी खा लोगे तुम? किसी ने देख लिया तो? कोल्हापुर जाकर क्या इतने भ्रष्ट हो गए हो तुम? और आगे जब बंबई जाओगे तब और न जाने क्या हो जाओगे तुम?"

"मन्या, कम-से-कम तुम्हारे मन में तो ऐसा भेद-भाव नहीं आना चाहिए था। क्या तुम सोचते हो कि मैं अब चाहे जिसके घर का खाने लगा हूं? यह बात नहीं। तुम्हारे पिताजी मुझ पर कितना प्रेम करते हैं! इसलिए उनके हाथ की रोटी खाने में मुझे कभी कोई संकोच नहीं होगा।"

"और ऐसे समय अगर तुम्हारे पिताजी तुम्हारे सामने आ धमकें तो?"

"तब भी मैं खाऊंगा।"

"और तुम्हें वे फिर घर से बाहर निकाल दें तो?"

"सो तो उन्होंने मुझे घर से बाहर निकाल ही दिया है। तुममें भेद-भाव रखूं तो भगवान मुझे अन्न भी नहीं देंगे। एक बार जिसे मैंने अपना कह दिया तो बस, वह मेरा भाई हो गया। प्राण चले जाएं फिर भी उससे कभी भेदभाव नहीं करूंगा। तुम कल यदि मेरे विरुद्ध भी हो जाओ तब भी मैं तुम्हारा हमेशा भला ही सोचूंगा। इसका साक्षी यह सूर्य भगवान है!"

मेरा हृदय उमड़ उठा। मैंने विनू के गले में बांहें डाल दीं। विनू ने भी मुझे कसकर सीने से लगा लिया। उसकी आंखों से भी प्रेमाश्रु बहने लगे। दोनों के ही आंसू मिलकर एक हो गए और उनके बहाव में परायापन बह गया। जैसे एकाएक कुछ याद हो आया हो, इस भाव से विनू ने मुझे सीने से दूर किया। धोती से उसने अपनी आंखें पोंछीं और वह जोर-से खिल-खिलाकर हंसने लगा। विनू बोला—

"हम भी यार क्या लड़कियों की तरह रो रहे हैं। चलो, उठो। आंखें पोंछो और लाओ वह रोटी की पोटली इधर।"

रोटी की पोटली नजदीक ही रखी थी। उसे लेने के लिए मैंने हाथ आगे बढ़ाया ही था कि हमारी बछिया उस पोटली को मुंह में

गई । मैं उसे पकड़ने के लिए दौड़ने लगा । त्यों ही वह भी चारों खुरों पर कूदती-फादती अधिकाधिक दूर जाने लगी । विनू दूसरी तरफ से उसे पकड़ने गया । आखिर हम दोनों ने उसे पकड़ लिया और उसके मुंह से पोटली निकाल ली ।

विनू बोला, "गाय के मुंह की घास नहीं छीनना चाहिए । खोलो वह पोटली और उसमें की रोटी का एक टुकड़ा बछिया को दे दो ।" बछिया को जैसे विनू की यह सूचना समझ में ही आ गई । वह विनू का हाथ चाटने लगी । वह भी दूसरे हाथ से उसका सिर खुजाने लगा । बछिया भी अपने सींग-विहीन सिर से उस पर धीरे-धीरे प्रहार करने लगी । रोटी का एक टुकड़ा बछिया के मुंह में देकर, हम पोटली खोलकर नदी के नजदीक की एक शिला पर बैठ गए । हाथ-पैर धोकर हम लोगों ने कुल्ली की । सूर्य की ओर देखकर उसे नमस्कार किया । नदी के पानी की चार बूंद लेकर अन्न पर छिड़के और खाना शुरू किया ।

विनू को क्या लगा, कौन जाने ? एक रोटी का टुकड़ा उसने हाथ में लिया और मुझसे वह बोला, "मुंह खोलो । और मैं अपने हाथ से यह कौर तुझे खिलाता हूं उसे तू खा ।" मैंने कहा, "और तू मेरे हाथ का खाना ।" मेरे मुंह से शब्द निकलने से पहले ही विनु ने मुंह खोल दिया था । रोटी के कौर एक-दूसरे को खिलाते हुए हमने खाना खत्म किया । विनू बोला, "मन्या, आज तुमने सच्चे मराठे जैसा काम किया । गौ और ब्राह्मण को कौर दिए । भगवान सूर्य नारायण तुम्हें सोने का कौर देंगे ।"

आंसुओं से भीगी हुई आंखों को मूंदकर मैंने कहा ।

"तथास्तु ।"

रोटी की पोटली का कपड़ा झाड़कर मैंने जेब में रखा । दोनों पानी के पास गए और जानवरों की तरह पानी में मुंह लगाकर यथेच्छ पानी पिया ।

विनू बोला, "अरे बैल !"

मैंने भी कहा, "अरे बैल !"

दोनों एक-दूसरे के हाथ में हाथ डालकर बड़े जोर से हंस पड़े और बछिया की तरह उछलते-कूदते फिर पेड़ के नीचे जा बैठे । विनू न जाने कौन-सा गरुड़ का एक श्लोक कहता हुआ पेट पर हाथ फेरने लगा । उस

श्लोक मे आतापि, वातापि और अगस्ति इतने ही नाम थे। इतना ही मुझे अब याद है। विनू बोला, "भय्या, अब घर जाता हूं। कल मिलूंगा। यह देखकर कि मैं घर में नहीं हूं, पिताजी बड़ा हो-हल्ला मचा रहे होंगे। शायद कोई सजा भी दे दें मुझे!"

मैंने आश्चर्य से कहा, "मतलब? क्या तुम्हारे पिताजी तुम्हें मारते हैं?"

"हां मारते हैं। इस तरह मारते है जैसे कोई जानवर को मारता है। इसीलिए तो मै उनकी मार से बहुत डरता हूं। पिताजी ने मुझे एक ही बात की शिक्षा दी है कि जिसमे मारने की ताकत है उसके साथ हमे बड़ी नम्रता से पेश आना चाहिए। अच्छा, अब जाता ही हू मैं।"

ऐसा कहकर उसने पीठ फेरी और पीछे मुड़कर न देख वह चल दिया। उसके आंख से ओझल होते तक मै लगातार उसकी ओर टक लगाकर देख रहा था। दिमाग मे फिर विचार-तरंग उठने लगे। घर से आया, उस समय मन उदास क्यों था? क्या कारण है कि विनू की सगति मिल जाने से मन उल्लसित हो गया? और उसके जाते ही मन फिर खिन्न क्यों हो गया? विकार परिवर्तन के इस कारण को मैं ढूढ़ नही पा रहा था।

ऊपर देखा तो सूरज काफी ऊपर चढ गया था। कितनी ही देर तक मै धूप मे खडा था। सिर का पसीना रोटी की पोटली के कपड़े से पोछा। फिर पेड़ के नीचे गया और हाथ-पैर तानकर, चित पड़ गया। पेड की टहनी पर एक चिड़िया दूसरी चिड़िया के मुह मे चारा दे रही थी। कह नही सकता क्यों, पर चिडियों की ओर मेरा पहले से ही खिचाव था। इन चिड़ियो के आचार-विचार, प्रापंचिक रहन-सहन, प्रेम और वात्सल्य, इन सब बातो का मैंने सूक्ष्मतापूर्वक अध्ययन किया। चिडियो और मनुष्यों मे इतना भेद क्यो? चिड़ियों की ओर देखा तो मां-वेटी कौन और पति-पत्नी कौन यह बहुधा कहा नही जा सकता। मनुष्यों मे ही ऐसा झूठा भेद क्यो? अपने गांव के जिन-जिन युगलों को मैंने देखा है, उनमे पति-पत्नी एक-दूसरे से अलग हुए दिखते हैं। मां-वेटी कभी-कभी ही भूलकर एकत्र हो जाती है, वरना सदा दूर ही रहती हैं एक दूसरी से। बाप तो लड़के को शायद ही कभी अपने नजदीक करता है। मेरे पिताजी जैसा बाप शायद ही किसी के

भाग्य में आया हो ! अभी कुछ समय पहले हमने जो खाना खाया था उसकी मुझे याद हो आई। हमने एक-दूसरे को जो कौर दिए थे उसका स्मरण हो आया। उन चिड़ियों ने जब हमें एक-दूसरे के मुंह में कौर देते देखा होगा, उस समय उनके मन में भी क्या मुझे जैसे ही विचार आए होंगे ? क्या एक चिड़िया ने दूसरी चिड़िया से यह पूछा होगा कि हम दोनों का परस्पर नाता क्या है ? यह देखकर कि हम एक-दूसरे को कौर दे रहे हैं, चिड़ियों के जोड़े हम पर कहीं हंसे तो न होंगे ? चिड़ियों को हम पर क्यों हंसना चाहिए ? क्या वे भी एक दूसरी को नहीं खिलातीं ? क्या चिड़ियों में मित्रता का भी नाता है ? एक चिड़िया अपनी दूसरी चिड़िया मित्र को कौर दिया करती है क्या ? मैंने चिड़ियों को लक्ष्यकर हाथ ऊपर उठाकर कहा, "अरी ओ चिड़िया, बता न, मेरे प्रश्न का उत्तर ?" पेड़ के पीछे से आवाज आई—

"किस प्रश्न का उत्तर ?"

मैंने मुड़कर देखा। चिंगी घोड़े पर से रकाब में एक पैर रखकर नीचे उतर रही थी। मैंने कहा, "यह क्या ? तुम अकेली ही इधर कहां ?"

चिंगी बोली, "अकेली आने को मैं क्यों डरूं ? मैं कोई जोशी का विनू नहीं ? पर मनू भैया, किस प्रश्न का उत्तर पूछ रहे थे ?"

मैंने तनिक क्रोध-भरे स्वर में कहा, "मुझे मनू भैया मत कहा करो, समझीं ?"

"तो क्या कहा करूं ? मन्याजी ? मनोहर पंत ? परंतु पंत कहूं तो बिलकुल ब्राह्मण जैसा लगता है। मन्याबापू कहूं क्या ?"

"मनोहर कहो, मनू कहो, मन्या भी चाहो तो कह सकती हो। पर मेहरबानी करके मनू भैया मत कहो।"

"पर प्रश्न क्या था, यह तो बताया ही नहीं तुमने ?"

"प्रश्न यही कि···" मैं थोड़ा हिचकिचाया। मैंने ऊपर पेड़ की ओर देखा। फिर पेड़ की चिड़िया की ओर देखा। "मैंने प्रश्न किया था पेड़ पर की चिड़िया से, पर बीच ही में बोल उठी घोड़े पर बैठी चिड़िया !"

"शायद पक्षियों की भाषा आती है तुम्हें ?"

"पक्षियों की ही नहीं। पशुओं की भी आती है। चाहे जिस पशु से मैं बातें कर सकता हूं। गाय से बातें करता हूं। घोड़े से गुफ्तगू करता हूं, मन्या

बिलौटे से संभाषण करता हूं और मोती कुत्ते से भी वार्तालाप करता हू। घर पर बैठे कौवों से बातचीत करता हू। पेड पर बैठी चिड़िया से बोलता हूं और घोड़े पर बैठी चिड़िया से भी बोलता हू।"

"यह भी क्या मनोबा ! मैं पक्षी हू क्या? ऐसा मजाक मुझे पसंद नही। मैं सरकार से कहकर तुम्हारा घर धूप मे बनवा दूगी !"

"पर छप्पर तो रहेगा ना उस घर पर? या कि ऊपर से बिलकुल खुला ही रहेगा?"

"बिना छप्पर के घर कभी बनता भी है?"

"अगर घर पर छप्पर रखना है तो धूप मे घर क्यो बनाना चाहिए? इससे तो पेड़ की छाया में ही रहना क्या बुरा?"

चिंगी तालियां पीटती हुई बोली, "हा जी, हा, हम पेड के नीचे ही रहेंगे ! कोठी में रहना ऐसा लगता है जैसे किसी जेल मे बद है। आज सरकार से ही कहती हू कि कोठी छोडकर अमराई मे रहने चलें।"

"मुझे नही ले जाओगी शायद अपने साथ?"

"यह बात सरकार से पूछनी पडेगी। पर मेरा ख्याल है कि सरकार राजी हो जाएंगे और गणोबा को भी ले लेंगे हम अपने साथ।" काल्पनिक आनंद मे खुश होकर चिंगी नाचती हुई तालिया बजाने लगी। इसी समय एक घुडसवार दौड़ता हुआ वहां आकर दाखिल हुआ और बोला, "ताईजी घोड़े पर बैठिए। और क्यों बे गधे, तुझे शर्म नही आती? झुककर मुजरा कर ताई साहब को। उनसे बकवास करते क्या खड़ा है इस तरह ! उनके जूतों की भी योग्यता है क्या तुझमे? गधा कही का।"

चिंगी बोली, "मानाजीराव, मैं ही बाते कर रही थी इनसे।"

मानाजीराव बोला, "नौकरों से हमे इस तरह बाते नही करनी चाहिए ताई साहब और नौकर को भी अपने मालिक से यों बराबरी के नाते पेश नही आना चाहिए।"

"और क्या नौकर को मालिक से डाटकर बोलना चाहिए?" चिंगी ने प्रश्न किया।

मानाजीराव बोला, "क्या यह गधा डांटकर बोला आप से? आपको डाटा इसने? डांटकर बोलने वाले नौकर को जूतो से पीटना चाहिए।"

"फिर मारूं क्या तुम्हें जूते?"—चिंगी ने पूछा और आगे कहा, "बेचारे मानोबा पेड़ पर बैठी चिड़िया से बोल रहे थे। मैंने फिजूल ही उनकी बातों में अपना मुंह घुसेड़ा। इनसे मेरी कोई बातचीत नहीं हुई—कोई बहस नहीं हुई। बताइए मनोबा हुई थी क्या? मैंने जवाब दिया, "छि! बिलकुल नहीं।" चिंगी बोली, "सुन लो मानाजीराव, मुझे डांट रहे हो तुम और आरोप लगा रहे हो मनोबा पर? और फिर ये नौकर कहां हैं हमारे?"

मानाजीराव बोला, "आज नहीं हैं तो कल हो जाएंगे।"

चिंगी ने कहा, "जब होंगे तब देखा जाएगा। परंतु आज उनसे बातें करने में क्या हर्ज है? पर तुम स्वयं अभी मुझसे डांटकर बोल रहे थे इसका क्या?"

"आपके कल्याण के लिए ही कह रहा था।" मानाजी बोला, "मुझे चकमा देकर यहां भाग आईं आप। मान लीजिए रास्ते में आपको कोई पकड़ लेता तो? फिर क्या करतीं आप?"

"चाबुक से खूब फटकारती उसे। क्या समझ रहे हो तुम मुझे। दिखाऊं क्या कि किस तरह फटकारती?"—चिंगी ने कहा। फिर उसने अपने नन्हे हाथ का चाबुक ऊपर उठाया और इतनी जोर से उसे हवा में फटकारा कि फटाक से उसकी आवाज हुई। चाबुक की चमड़े की पट्टी मानाजीराव के गाल को छूती हुई निकल गई। मानाजी चिल्ला पड़ा, "ओ! ओ! मुझे ही मार दिया!"

चिंगी बोली, "यह तो सिर्फ झलक दिखाई है। मन में मारने की बात होती तो अच्छी तरह खाल उधेड़ देती तुम्हारी।"

मानाजीराव बोला, "माफ कीजिए ताई साहब! अब देर हो रही है। जल्द चलिए, वरना सरकार मुझे सजा देंगे।"

"अच्छा, अब विदा लेती हूं मनू मैं—नहीं मनोबा!" इस प्रकार कहते हुए वह कब घोड़े पर सवार हो गई और कब उसने घोड़े को दौड़ा दिया इसका मुझे पता तक न चला।

जाते समय वह चाबुक सिर के आसपास घुमाकर उससे फड़फड़ आवाज कर रही थी। उस आवाज से प्रोत्साहन पाकर वह तेज घोड़ा हवा की तरह

भाग रहा था। माताजी ने भी उसके पीछे-पीछे अपना घोड़ा दौड़ा दिया। थोड़ी देर में दोनों ही आंख से ओझल हो गए।

मैंने पेड़ के नीचे का कम्बल उठाकर कंधे पर रखा। पुकारकर और पुचकारकर जानवरों को एक स्थान पर इकट्ठा किया और मुंह से सीटी बजाते हुए घर की राह पकड़ी।

मेरा हृदय आनंद से भर गया था। चिंगी ने मेरी प्रार्थना सुन ली थी। मुझे मनू भैया के नाम से संबोधित न कर वह मनोबा कहने लगी। जिस तरह मैं अपनी उम्र के हिसाब से बड़ा दिखता था, उसी तरह चिंगी भी उसकी उम्र के हिसाब से काफी बड़ी और हट्टी-कट्टी दिखती थी। चिंगी का वह चाबुक फटकारना अभी भी मेरे कानों में आ रहा था। मैं बार-बार विचार कर रहा था। चिंगी से मेरा क्या संबंध? वह एक बड़े आदमी की लड़की है और मैं हूं एक दरिद्री किसान का लड़का। उसके विषय का कोई विचार मन में लाना भी मेरे लिए मूर्खता थी। परंतु ग्यारह वर्ष के लड़के को इतनी अक्ल कहां होती है? इस उम्र में हवा के किले न बनाए तो आगामी उम्र में महत्वाकांक्षा की तोपें किस बुर्ज से दागी जाएंगी?

ग्यारह वर्ष के लड़के को भी मनुष्यों की जोड़ियां दिखा करती हैं। फिर जोड़ी जोड़ने की कल्पना ग्यारह वर्ष के लड़के के मन में भी क्यों नहीं आनी चाहिए? ग्यारह वर्ष की अपेक्षा कम उम्र वाले लड़कों के भी विवाह हमारे गांव में हुए हैं। तब मुझ जैसा ग्यारह वर्ष का लड़का भगवान से यह प्रार्थना क्यों न करे कि "हे प्रभो, चिंगी से मेरा विवाह करा दे?" मैंने ऊपर आकाश की ओर देखा। सूर्य भगवान मेरी ओर देखकर कहीं हंसे तो नहीं? मैंने मन-ही-मन कहा, "भगवन् हंसो मत। तुम्हारी भी बचपन में शादी हुई होगी। क्या तुम मेरा विवाह चिंगी से करा दोगे?" ऐसे प्रश्न में खोया हुआ जाने मैं कब घर पहुंच गया, पर वहां मुझे एक अलग ही दृश्य नजर आया!

5

हमारे आंगन में लोगों की भीड़ लगी थी। तहसील का एक चपरासी जोर-जोर से चिल्ला रहा था। हमारे घर कभी-कभी चक्कर काटने वाला एक मारवाड़ी आंगन में रखी खटिया पर बैठा था। पिताजी सिर पर हाथ रखकर गर्दन झुकाए बैठे हुए थे। घर का सारा सामान घर से बाहर लाकर आंगन में इकट्ठा करके रख दिया था। यह देखते ही कि मैं जानवरों को लेकर आ रहा हूं, मारवाड़ी चिल्लाकर बोला, "अरे वह देखो, जानवर भी आ गए! अमीन साहब, उन्हें भी कुर्की में शामिल करो।"

कुर्की का अर्थ उस समय मेरी समझ में नहीं आया। मैं दौड़ता हुआ पिताजी के पास गया और उनके गले में बांहें डालकर मैंने पूछा, "पिताजी, यह क्या हो रहा है?"

पिताजी बोले, "मेरा करम!"

मैंने पूछा, "क्या ये कुर्क अमीन साहब हमारा यह सारा सामान ले जाएंगे?" पिताजी ने गर्दन के इशारे से 'हां' कहा। मैंने पूछा, "क्यों ले जाएंगे?" पिताजी बोले, "अब तुझे मैं किन शब्दों में बताऊं? भय्या, बेटा, तू यह नहीं समझ पाएगा।" मैंने कुर्क अमीन से पूछा, "क्यों अमीन साहब, क्या मेरे भय्या बिल्लीट को भी कुर्की में शामिल किया है तुमने?" कुर्क अमीन बड़े घमण्ड से बोला, "बिल्लियों को कुर्की में शामिल करने के लिए कानून में कोई आधार नहीं।" मैंने पूछा, "फिर ये जानवर कुर्की में क्यों शामिल किए?"

"मवेशियों को कुर्की में शामिल करने कानूनी आधार है।"

मैंने पूछा, "और मनुष्य को?"

कुर्क अमीन जोर से हंसता हुआ बोला, "वा रे वैल, मनुष्य जप्ती में शामिल नहीं किए जाते।" पिताजी ने मुझे अपने पास बुलाया। मुझे नजदीक खींचकर शून्य दृष्टि से एक क्षण के लिए मेरी तरफ देखने के बाद

वे बोले, "मन्या, इसी तरह दौड़ता हुआ कोठी जा। सरकार से मिल और उनसे कह, हमारे घर जब्ती आई है। हमारे घर आ जाएं तो हम पर बड़ी कृपा होगी।"

पिताजी के गले से बाहें निकाल कर मैं जाने लगा। जाते समय देखा तो एक मनुष्य बाहर रखे हुए हमारे सामान की सूची बना रहा था और कुर्क अमीन उसे हर चीज का नाम और सख्या बता रहा था। मैं कोठी की तरफ भागता हुआ गया। भागते समय मेरे मस्तिष्क मे विचार भी उसी तरह भाग रहे थे। घर पर जब्ती आई है इसका मतलब क्या? कुर्की मे शामिल करने का क्या मतलब? यह कुर्क अमीन कौन है? मारवाड़ी से उसका क्या संबंध? हमारा ही पड़ोसी हमारे सामान की सूची क्यो बना रहा है? कुर्की मे मवेशी शामिल करते है, फिर बिल्ली को शामिल क्यों नही करते? जब्ती का मतलब सरकार समझ लेंगे क्या? कही वे न समझें और मुझ से ही पूछ बैठे तो मै क्या जवाब दूगा? यदि मै न बता सका तो वे मुझे मूर्ख समझेंगे। और अगर उसी समय चिंगी भी वहा हुई तो मेरे अज्ञान पर वह हंसेगी और वह भी मुझे मूर्ख समझेगी। पिताजी ने मुझसे यह क्यो कहा था कि तू कुछ नही समझ पाएगा? उन्होंने मुझे अज्ञान मे रखा और अब उस अज्ञान के कारण कोठी मे मेरी फजीहत हुई तो? मान लो सरकार जब्ती का अर्थ समझ जाए तो वे क्या करेंगे? कुर्क अमीन को सजा देना सरकार के हाथ मे है क्या? सरकार पैदल आएंगे या घोड़े पर? उन्हे घोड़े पर आते देख कुर्क अमीन डर जाएगा क्या? इस प्रकार के विचार मेरे मस्तिष्क में कोलाहल मचा रहे थे और विचारों के इस कोलाहल में ही मैं गर्दन झुकाए दौड़ता चला जा रहा था।

मैं अपने ही विचारों की धुन मे था, इसलिए जब कोठी के दरवाजे पर पहुंचा तो वहा खड़े एक प्रहरी पर जा गिरा। वह बोला, "क्यों रे गधे, क्या आंखे फूट गई हैं तेरी?" कोठी की सीढ़ियों पर सरकार पोशाक पहने खड़े थे। शायद कही बाहर जाने के विचार में थे। घोड़े की लगाम हाथ मे लिए सईस ड्योढी के पास खड़ा था। सरकार ने मुझे पुकारा। मैंने सारा हाल अपनी भाषा में और पिताजी का सदेश पिताजी की भाषा मे उन्हें कह सुनाया। मेरा सब हाल सुन लेने पर सरकार एकदम सीढ़ियां

उतरे और घोडे पर सवार हुए। नीचे झुककर उन्होंने मेरी बगल में हाथ डालकर मुझे उठाया और अपने साथ घोडे पर बिठा लिया। घोड़े को एड़ लगाई और वह हवा मे बाते करने लगा।

सरकार ने स्वय अपने हाथ से उठाकर मुझे अपने साथ घोड़े पर बिठाया इस पर मुझे बडा अभिमान हुआ और अभिमान भरी निगाह से मैंने वहा खडे हुए सब नौकरो की ओर देखा। वे बेचारे मुंह बाए आश्चर्य चकित होकर देख रहे थे। घोडा बेतहाशा दौड रहा था। हम थोडी ही देर बाद अपने आगन मे जा पहुचे। सरकार के घोडे से उतरते ही सब लोगों ने उन्हे झुककर मुजरा किया। परतु किसी के भी मुजरे की ओर ध्यान न देकर, सरकार सीधे पिताजी के पास गए और उनका हाथ पकड़कर उन्हे एक ओर ले गए। वहा दोनों मद आवाज में बातें करने लगे। थोडी देर बाद सरकार मारवाडी की ओर मुडे। सरकार को आगे बढते देख मारवाडी उन्हें मुजरा करता हुआ एक-एक कदम पीछे हट रहा था। सरकार ने उसे हाथ पकडकर रोका और उससे भी मंद आवाज मे कुछ बातें की। सरकार के आने के बाद से कुर्क अमीन करीब-करीब ठडा ही पड गया था। सूची बनाने वाला हमारा पडोसी बोला, "क्यों अमीन साहब, क्या सूची फाडकर फेंक दू?" सरकार की ओर पीठ फेरकर, मूछों पर ताव देता हुआ अमीन बोला, "जरा ठहरो।"

इसी समय मुडकर जब मैंने बगल मे देखा तो पडोसी ने स मान की वह सूची फाड डाली थी। सरकार ने कुर्क अमीन से एक कागज लिया और उस पर कुछ लिखकर वह कागज मारवाडी को थमा दिया। उस कागज के हाथ मे आते ही कुर्क अमीन को साथ लेकर मारवाडी कोठी की तरफ चल दिया। एकत्रित हुए सब लोग आपस में कानाफूसी करते हुए और हसते हुए अपने-अपने घर चल दिए।

सरकार आंगन में रखी खटिया पर बैठ गए। पिताजी एकदम आगे बढे और सरकार के पैर पकडकर सिसक-सिसककर रोने लगे। सरकार ने दोनों हाथों से पिताजी को उठा उन्हें एक तरफ बिठाया। पिताजी बोले, "सरकार के ये उपकार किस तरह चुकाऊं? अपने चमडे के जूते बनाकर आपको पहनाऊं तब भी इस ऋण से उऋण नहीं हो सकूंगा मैं।"

सरकार बोले, "इसे छोड़ अभी। पहले बता कि यह तूने क्या किया। अरे, तू मेरा आसामी है न ? मेरा लगान चुकाने के लिए तेरे पास अगर रुपये नहीं थे तो कर्ज लेने तू उस मारवाड़ी के पास क्यों गया ? सीधा मेरे पास चला आता और मुझसे अपनी कठिनाइयां कहता तो क्या मैं तुझे एकाध साल की मुहलत न देता ? और फिर उससे लिए सौ रुपये और कागज लिख दिया ढाई सौ रुपयों का ! मैंने जब उसे खूब डांटा तब कहीं उसने स्वीकार किया कि दरअसल कर्ज सिर्फ सौ रुपये का ही है। इसलिए सब ठीक हो गया वरना—खैर, अब यह बता कि मेरे यह सौ रुपये जो तेरी तरफ से मैंने मारवाड़ी को दिए, तू कैसे चुकाएगा ?"

"कैसे चुकाऊं सरकार ?"

"क्या अपना यह सारा घर-बार मेरे पास गिरवी रख देगा ?"

मेरा जो भी है वह सब आपका ही है।"

"पर अभी तो यह सब उस मारवाड़ी के पेट में समा जाने वाला था न ! अरे पगले, तू अपने इस लड़के को भी भूल गया ? कितना गधापन किया तूने ? तुझे तो अच्छा सबक सिखाना चाहिए। जब तक तुझे कसकर चिकोटी नहीं काटी जाएगी तब तक तेरी समझ में नहीं आएगा कि व्यवहार क्या होता है ! क्यों नहीं आया अबसे पहले मेरे पास ? इस प्रकार के थोथे अभिमान के कारण ही हम अपने घर-द्वार खो बैठे हैं और शान से कहते हैं कि यह मराठों का अभिमान है ! मुसलमान हमें जो 'मरगठ्ठे' कहते थे सो यों ही नहीं ! मन्या यह सब सामान उठाकर भीतर रख दे। उठा सकेगा तू ?"

मैंने कहा—"आप स्वयं देख लीजिए। पहले जाकर इन मवेशियों को कोठे में बांध आता हूं। आपका घोड़ा भी खुला है। क्या उसे भी बांध दूं ?"

सरकार बोले, "घोड़े को रहने दे। जोशी के विनू जैसा वह भाग नहीं जाएगा कहीं।"

मैं जब सामान उठाकर भीतर ले जा रहा था उस समय पिताजी और सरकार दोनों में बातें हो रही थीं। मैं जिस समय अनाज से पूरा भरा हुआ एक बड़ा घड़ा सहज उठाकर भीतर ले जा रहा था, उस समय

सरकार की निगाह मुझ पर पड़ गई। मुझे देखकर सरकार बोले, "शाबास मेरे पठ्ठे! बंबई के बंदरगाह पर जाएगा तो दो रुपये रोज सहज कमा लेगा।" यह सुनकर मुझे और जोश चढ़ा और मैं एक-एक चीज जल्दी-जल्दी उठाकर भीतर ले जाने लगा। शाबाशी के नशे में मेरा मस्तक बधिर हो जाने के कारण सरकार और पिताजी में होने वाली बातें सुनाई पड़ते हुए भी मेरे दिमाग में न घुसी।

सरकार खटिया से उठकर घोड़े के पास जाकर खड़े हो गए और मुझसे बोले, "थक गया क्या रे, मन्या?" कोई उत्तर न देकर आंगन में पड़ा हुआ एक गोल बड़ा पत्थर मैंने उठाया और उसे दो-तीन बार घुमाकर दूर फेंक दिया। और खम ठोककर कुश्ती के पैंतरे में उनके सामने खड़ा हो गया। मेरी पीठ थपथपाकर वे बोले, "वाह रे मेरे मराठा के बच्चे।"

घोड़े पर बैठकर सरकार कोठी की ओर चल दिए।

सरकार के जाते ही पिताजी आंगन की खटिया पर लेट गए। मैंने नजदीक जाकर देखा तो उन्होंने आंखें बंद कर ली थीं। मैंने धीरे-से कहा, "पिताजी, उठिए—अब खाना खाएं।" "हां सच!" कहकर, पिताजी झोंपड़ी में गए। खाना खा चुकने के बाद चबूतरे पर कम्बल बिछाकर वे सो गए। मैं धीरे-धीरे पिताजी के पैर दाबने लगा। बार-बार यही विचार मेरे मन में उठ रहे थे। घर पर जब्ती याने क्या? मैंने भिन्न-भिन्न प्रकार से सोचकर देखा। पिताजी से पूछूं कैसे जबकि मैं साफ देख रहा था कि उनका मन शांत नहीं है। मैं भी उन्हीं के नजदीक विचार करते-करते लेट गया और मुझे नींद आ गई। जो घटना घटी थी वह मुझे कुछ हेरफेर के साथ स्वप्न में दिखने लगी।

ऐसा लगा कि मैं शिवाजी के जमाने का एक सरदार हूं। यवन लोग आकर हमारे गांव की कुछ गाएं भगाकर ले गए हैं। मैंने उनका पीछा किया—उन पर टूट पड़ा और गायों को छुड़ाकर ले आया। घोड़ा दौड़ाता हुआ जब गांव लौटा तो देखा कि गांव के सारे घर जब्त कर लिए गए हैं। एक यवन कुर्क अमीन ने सब घरों का सामान निकालकर बाहर रख दिया है। एक लंबी दाढ़ीवाला यवन अपने को मारवाड़ी कह रहा था। कितने ही लोग पंक्ति में बैठे सामान की सूचियां बना रहे थे। मंग्या ने आकर

मेरे कान में कहा, "घर की सारी चीजें जब्त कर ली गई हैं और अब बिल्लियों को भी जब्ती में शामिल करने के लिए कुर्क अमीन ने बादशाह सलामत से इजाजत मंगवाई है।" मैंने मंग्या को मेरे साथ चलने का हुक्म दिया। सरकार के घोडे पर सवार होकर मंग्या मेरे साथ चल पड़ा। हम नदी किनारे आए। शिवाजी महाराज और चिंगी शिला पर बैठकर प्याज और रोटी खा रहे थे। मुझे देखते ही चिंगी शिवाजी महाराज के कान से लगकर कुछ कानाफूसी करने लगी। शिवाजी महाराज उठे और घोड़े पर सवार होकर मेरे साथ निकल पडे। ध्यान से देखा तो चिंगी के स्थान पर विनायक दिखने लगा। बीच में क्या हुआ यह ठीक से याद नहीं। शिवाजी महाराज को देखते ही सारे यवन तितर-बितर हो गए। सामाल की बनाई गई सूचिया हवा में इधर-उधर उडने लगी। वे उड़ने वाली सूचिया बात-की-बात में भाले बन गईं। अदृश्य घुड़सवार उन भालों को घुमा-घुमाकर फेंकने लगे। सब ओर हाहाकार मच गया। कुछ देर बाद घमासान के कारण उड़ा हुआ धूल का बादल आप ही विलुप्त हो गया और सर्वत्र शांति छा गई। शिवाजी महाराज गांव के मध्य भाग में खडे होकर जोर-से बोले, "आज से 'घर पर जब्ती' और 'जब्ती में शामिल' ये शब्द बिलकुल बंद कर दिए गए हैं।"

मैंने मंग्या से कहा, "क्यों मंग्या, कम-कम-कम अब तो तुझे संतोष हो गया न?" मंग्या ने 'म्याव' करके अपना संतोष व्यक्त किया। मैं जोर-जोर से हसता हुआ ही जाग उठा। मंग्या 'म्यांव, म्यांव' करता हुआ मेरे इर्द-गिर्द चक्कर काट रहा था। उठकर देखा तो नजदीक पिताजी नहीं थे। घर में और आंगन में भी कहीं वे दिख नहीं रहे थे। मुझसे बिना कहे कभी भी वे कहीं जाते नहीं थे। जगाने से मेरी नींद टूट जाएगी ऐसा सोचकर क्या वे बिना मुझसे कुछ बोले चल दिए? बाहर सईसांझ हो गई थी। कितनी ही देर तक मैं सो रहा था। मंग्या के लिए कटोरी में मैं थोडा दूध ले आया। कोठे में जाकर मवेशियो के आगे चारा डाला और आंगन में खटिया पर आकर बैठ गया। इतना होते तक दियाबत्ती लगाने का भी वक्त हो गया था। पर चबूतरे पर दीया जला दू ऐसा मुझे नहीं लग रहा था। मन बिलकुल खिन्न हो गया था। सब तरफ वीरान-सा लग रहा था।

सरकार की निगाह मुझ पर पड़ गई। मुझे देखकर सरकार बोले, "शाबास मेरे पठ्ठे ! बंबई के बदरगाह पर जाएगा तो दो रुपये रोज सहज कमा लेगा।" यह सुनकर मुझे और जोश चढा और मैं एक-एक चीज़ जल्दी-जल्दी उठाकर भीतर ले जाने लगा। शाबासी के नशे में मेरा मस्तक बधिर हो जाने के कारण सरकार और पिताजी में होने वाली बातें सुनाई पडते हुए भी मेरे दिमाग में न घुसी।

सरकार खटिया से उठकर घोडे के पास जाकर खडे हो गए और मुझसे बोले, "थक गया क्या रे, मन्या ?" कोई उत्तर न देकर आंगन में पडा हुआ एक गोल बडा पत्थर मैंने उठाया और उसे दो-तीन बार घुमाकर दूर फेंक दिया। और खम ठोककर कुश्ती के पैंतरे में उनके सामने खडा हो गया। मेरी पीठ थपथपाकर वे बोले, "वाह रे मेरे मराठा के बच्चे।"

घोडे पर बैठकर सरकार कोठी की ओर चल दिए।

सरकार के जाते ही पिताजी आंगन की खटिया पर लेट गए। मैंने नजदीक जाकर देखा तो उन्होंने आंखें बंद कर ली थी। मैंने धीरे-से कहा, "पिताजी, उठिए—अब खाना खाएं।" "हां सच !" कहकर, पिताजी झोंपडी में गए। खाना खा चुकने के बाद चबूतरे पर कम्बल बिछाकर वे सो गए। मैं धीरे-धीरे पिताजी के पैर दाबने लगा। बार-बार वही विचार मेरे मन में उठ रहे थे। घर पर जब्ती याने क्या ? मैंने भिन्न-भिन्न प्रकार से सोचकर देखा। पिताजी से पूछू कैसे जबकि मैं साफ देख रहा था कि उनका मन शांत नही है। मैं भी उन्ही के नजदीक विचार करते-करते लेट गया और मुझे नींद आ गई। जो घटना घटी थी वह मुझे कुछ हेरफेर के साथ ख्वाब मे दिखने लगी।

ऐसा लगा कि मैं शिवाजी के जमाने का एक सरदार हूं। यवन लोग आकर हमारे गांव की कुछ गाएं भगाकर ले गए है। मैंने उनका पीछा किया—उन पर टूट पड़ा और गायों को छुडाकर ले आया। घोडा दौड़ाता हुआ जब गांव लौटा तो देखा कि गांव के सारे घर जब्त कर लिए गए हैं। एक यवन कुर्क अमीन ने सब घरो का सामान निकालकर बाहर रख दिया है। एक लंबी दाढ़ीवाला यवन अपने को मारवाड़ी कह रहा था। कितने ही लोग पंक्ति में बैठे सामान की सूचिया बना रहे थे। गंग्या ने आकर

मेरी जगह कोई दूसरा लड़का होता तो उसकी ऐसे समय घिग्घी ही बंध जाती, इतनी निस्तब्धता उस समय सर्वत्र फैल गई थी।

पिताजी अभी तक आए नहीं थे। पिताजी कहां गए थे इसका विचार करने की अपने मन को मैंने तकलीफ ही नहीं दी। सुबह से लगातार जो घटनाएं घटती आई थी उन सबका मैं बारीकी से निरीक्षण करने लगा। इस कारण मुझे अपने आप पर ही हंसी आने लगी। सच पूछा जाए तो मुझे बुरा लगना चाहिए था। पर यह तो हुआ नहीं, उलटे हास्य के उबाल फव्वारे की तरह मेरे हृदय में उमड रहे थे। आसपास कोई भी नहीं था। फिर उन आए हुए उबालों को मुझे दबाने की जरूरत नहीं थी। मैं लगातार हंसता रहा। मदारी के बंदर की लीला देखते समय अथवा किसी जादूगर का मजाक सुनते समय अज्ञान बालक जिस तरह हंसते हैं, उसी तरह मैं भी लगातार हंस रहा था। मण्या टेढ़ी गर्दन करके फूली हुई दुम को फटकारता हुआ मेरी ओर लगातार टक लगाए देख रहा था। एक क्षण के लिए उसके चेहरे पर भी अस्पष्ट हास्य की रेखा चमक गई, ऐसा मुझे दिखाई दिया। हंसते-हंसते लोटपोट होकर मेरी आंखों से आंसू बहने लगे।

किसी की आहट कानों में पड़ने के कारण मैंने आंखें उठाकर देखा। पिताजी निश्चल दृष्टि से टक लगाए मेरी ओर देख रहे थे। मैंने एकदम हंसना बंद कर दिया। क्योंकि उस फीके प्रकाश में भी उनका चेहरा अत्यन्त करुणाजनक दिख रहा था। मैंने पूछा, "कहां गए थे पिताजी ?" कुछ न बोल सिर का साफा खटिया पर फेंककर वे मेरे नजदीक आकर बैठ गए और धीरे-धीरे मेरे मस्तक पर हाथ फेरने लगे। उस स्निग्ध स्पर्श से थरथराकर मैं रोमांचित हो उठा।

मैंने गद्गद् होकर फिर पिताजी से पूछा, "कहां गए थे, पिताजी ?" जाने क्या, मेरे प्रश्न के उत्तर में ही उन्होंने एक गहरी सांस ली। मैंने फिर पूछा, "पिताजी आप बोलते क्यों नहीं ? क्या 'घर पर जब्ती' अथवा 'जब्ती में शामिल' जैसी कोई बात और हो गई है ?" मेरे इस पागल प्रश्न को सुनकर पिताजी के चेहरे पर मंद मुस्कान की छटा,एक क्षण के लिए चमककर विलुप्त हो गई। मुझे सीने से लगाकर वे बोले—

"पूरे एक साल तुझे छोडकर कैसे रहूगा ?"

मैंने पूछा, "मतलव ? क्या मुझे भी कुर्की मे शामिल कर लिया है ?"

पिताजी बोले, "आग लगे उस कुर्की को ! उस कुर्की के कारण ही मुझ में और तुझमें अब अलगाव हो जाएगा। जाने कैसे मेरी अक्ल मारी गई कि उस मारवाडी के चुगल में मैंने अपनी गर्दन फसा ली ? मन्या, वेटा, तू मजे मे रहगा। पर इस सुनसान झोंपड़ी मे मैं अकेला कैसे रहूगा ?"

पिताजी को झोपडी मे अकेले रहने का डर लगता है, यह मुझे अभी तक नही मालूम था। पिताजी पर मुझे थोडा तरस आया और अपनी निडरता पर मुझे काफी गर्व हुआ। पिताजी क्षणभर के लिए रुककर फिर बोले, "मजे रहेगे बेटा तेरे। अच्छे कपडे पहनने को मिलेंगे। पेट भर स्वादिष्ट खाना मिलेगा और नर्म मोटे गद्दो पर गरमाहट मे तू खूब मजे से सोएगा। मजे है तेरे।"

मैंने पूछा, "कहा ?"

बाएं हाथ से आंख का आसू पोछते हुए वे बोले, "कोठी मे ! समझा ! सरकार की कोठी मे।"

मैंने कहा, "क्या ? सरकार की कोठी में।"

पिताजी बोले, "हा, हां। खास सरकार की कोठी में। चिंगी ताई साहिबा के एक खिदमतदार की हैसियत से···खिदमतगार क्यो—खास साथी, बालमित्र।"

मुझे लगा कि खटिया से एकदम नीचे कूद पडू और धरती पर खूब लोटने लगू। फिर आख का एक आसू पोंछकर पिताजी बोले, "बालमित्र काहे का ? उसका भाई ही कहो न ?"

मैंने क्रोध-भरे स्वर में कहा, "मैं किसी का भाई-वाई नही।"

पिताजी हंसते-हंसते बोले, "बेटा, चिंगीताई साहिबा का भाई होने के लिए भाग्य चाहिए।"

"मैं ऐसा भाग्य नही चाहता।"

"तो क्या सिर्फ सेवक की हैसियत से ही रहना चाहता है ?"

"मैं किसी का सेवक नही होऊंगा।"

"तो फिर क्या चाहता है तू ?"

"मैं बी० ए० होऊंगा।"

"बी० ए० होकर क्या करेगा ?"

"चिंगी से विवाह करूंगा।"

मेरे इन शब्दों के सुनते ही पिताजी कुछ इस विचित्र ढंग से हंसे कि उसके कारण मैं जहा-का-तहा ठडा पड़ गया।

मैंने फिर कहा, "मैं बी० ए० होकर चिंगी से ब्याह करूंगा।"

पिताजी बोले, "पागल लड़के ! तेरी स्थिति क्या है इसकी कुछ कल्पना है तुझे ? कल सुबह से तुझे कोठी में नौकर होकर जाना होगा। चिंगी से ब्याह करने की बात तो दूर ही रही, पहले तुझे उसके लहंगे और चोलियां धोनी पड़ेगी। इतनी ही योग्यता है तेरी। चिंगी से विवाह होने के लिए सरदार कुल में जन्म लेना पड़ता है। दरिद्री किसान के लड़के की योग्यता चिंगी के रास्ते को झाड़ू से साफ करने की ही है। कहा से घुस गया तेरे दिमाग मे यह पागलपन, बी० ए० होना चाहता है ? तू बी० ए० कैसे होगा रे ?"

"कोल्हापुर के महाराज मुझे बी० ए० कराने वाले है।"

"कोल्हापुर के महाराज ? तुझसे उनका क्या सम्बन्ध ?"

"सुनता हू, वे गरीब लड़कों को बी० ए० कर देते हैं।"

"किसने कहा तुझसे यह ?"

"जोशी के विनायक ने।"

"और उसी ने शायद यह भी कहा कि चिंगी से विवाह कर लो ?"

"नही। यह तो मेरे अपने मन का रहस्य है।"

"मन्या, पगले। यह विवाह का पागलपन निकाल डाल दिमाग से। ग्यारह साल के लड़के को शोभा नही देता ऐसा पागलपन। जिंदा रहेगा तो तुझे विवाह के लिए दिमाग इतना नही घुमाना पड़ेगा। परंतु विवाह का यह पागलपन यदि इसी तरह दिमाग में रखे रहा तो जिंदा रहना भी मुश्किल हो जाएगा, बेटा ! तुझसे ठीक से नौकरी करते नही बनेगी। स्वयं पद-पद पर ठोकर खाएगा और मुझे भी अच्छी ठोकर देगा। सुना मन्या, मेरे प्यारे, एक साल कम-से-कम 'विवाह' शब्द भी दिमाग मे मत ला और ...न रख, चिंगीजी तेरी मालकिन है। तू उनका नौकर है।" उपरोक्त

बातें करते समय पिताजी बीच-बीच में मुझे सीने से लगा रहे थे सहला रहे थे। बातें समाप्त होते ही वे खटिया पर से उठकर खड़े हो गए। दोनों हाथों से पकड़कर उन्होंने मुझे खटिया पर खड़ा कर दिया। उस अधूरे प्रकाश में मेरे दोनों गालों पर हाथ रखकर उन्होंने आंखें भर-भरकर मेरी ओर देखा। कसमसाकर मेरा एक चुम्बन लिया। हलके हाथ से मेरी पीठ थपथपाई, और एकदम मेरी ओर पीठ फेरकर झोंपड़ी में चल दिए।

पिताजी ने झोंपड़ी के भीतर से पूछा, "मन्या आ खाना खा ले? मुझे आज भूख नहीं। जल्दी आकर खाना खा ले। मुझे नींद आ रही है।"

"मैंने कहा, "मुझे भी भूख नहीं, पिताजी।"

"सच कहता है या कि मैं कहता हूं इसलिए तू भी कह रहा है?"

"सच पिताजी। सईसांझ तक सोता रहा, कहीं भी बाहर नहीं गया। इसलिए भूख तो बिलकुल लगी ही नहीं।"

"अच्छा, ठीक है। तो आकर अब सो जा।"

"आप सो जाइए। मैं आ रहा हूं थोड़ी देर में।"

पिताजी ने बिस्तर लगाया और उस पर वे सो गए। सचमुच ही उन्हें नींद लगी थी क्या, इसका मुझे यकीन नहीं था। क्योंकि रोज की तरह उनके खर्राटे मुझे सुनाई नहीं पड़ रहे थे। मैं उसी तरह खटिया पर लेट गया। आकाश में चांद काफी ऊपर आ गया था। गांव के ऊधमी लड़कों की तरह उसके आसपास तारे उछलकूद कर रहे थे। पेड़ों के पत्ते धीरे-धीरे डोलकर किसी को इशारा कर रहे थे। मैं विचार करने लगा। पिताजी की बातों का मतलब क्या? एक वर्ष तक मुझे सरकार की नौकरी क्यों करनी चाहिए? शाला भी मुझे छोड़ देनी पड़ेगी क्या? फिर बी० ए० मैं कैसे हो पाऊंगा? चिंगी की याद का मीठा स्वरूप मेरी आंखों के सामने मूर्त हुआ। मुझे देखकर चिंगी गालों-गालों में खिल से हंस रही है, ऐसा मुझे लगा। बगल में खड़ा हुआ मानाजीराव मुझसे बोला, "ले बेटा, आखिर हो ही गया कि नहीं हमारा नौकर?" एक ही दिन के भीतर कितना विलक्षण परिवर्तन हो गया। विचारों की दिशा बिलकुल बदल गई। इसके आगे मेरे अपने विचारों पर मेरा कोई अधिकार नहीं रहा ऐसा मुझे लगा। मैं नौकर हो गया? दूसरे का ताबेदार हो गया! सौ रुपये में दूसरे

को साल भर के लिए बेच दिया गया ! सौ रुपये याने क्या, यह अंकगणित के सवाल के परे मुझे मालूम नही था। सौ रुपये की ढेरी मेरी आखो को कभी नही दिखी थी। कल्पना से मुझे लगा, मेरे जीवन का एक वर्ष खा जाने वाले ये सौ रुपये, एक जगह रख दिए जाएं तो पहाड़ के बराबर राशि हो जाएगी। मैं जिंगी का नौकर हो गया, ए ? क्या हो गया यह ? मैं सोच क्या रहा था और उसका परिणाम क्या हो गया ? पिताजी ने जो ताकीद दी उसका स्मरण हो आया। पर वह आज्ञा किस प्रकार पालन कर पाऊंगा ? यह जरूरत से ज्यादा प्रौढ़ता ईश्वर ने मुझे क्यों दी ? अज्ञान कितना अच्छा ? नौकर होने के लिए बुद्धिहीन होना कितना अच्छा ? सरकार अपने नौकरों मे किस तरह पेश आते है, यह बीच-बीच मे मैंने देखा था। नौकरो के विषय मे वे बड़े सख्त हैं। मुझसे भी क्या वे उसी सख्ती से वर्ताव करेंगे ? मुझे भी आखिर यह क्यों सोचना चाहिए कि वे मुझे कुछ सहूलियतें दे ? मैं भी आखिर नौकर ही तो हू न ? अन्य नौकरों मे और मुझ मे परिस्थिति की दृष्टि से कोई भिन्नता नही थी। फिर सहूलियत का विचार मेरे दिमाग मे क्यो आना चाहिए ? विचार करते-करते मैं काफी भटकता जा रहा हू ऐसा मुझे लगने लगा। दोनों हाथों से मैंने आखे मली, और हड़बड़ाकर उठ बैठा।

पिताजी चबूतरे पर से बोले, क्यो रे मन्या, अभी तक सोया नही ? यों ही खुले मे पड़ा रहा तो जुकाम हो जाएगा। आ, भीतर आकर बिस्तर पर सो जा।"

पिताजी के पुकारते ही मैं उठा और भीतर चबूतरे के बिस्तर पर जाकर लेट गया। दिमाग मे विचारो का शोर उसी तरह हो रहा था। मुझे उस रात शांति से नीद बिलकुल लगी ही नही।

6

सुबह उठने के बाद प्रातः क्रियाओं से निवृत्त होकर मैंने रात को

बची हुई रोटी खाई और अच्छे साफ-सुथरे कपड़े पहनकर पिताजी के साथ कोठी जाने के लिए तैयार हुआ। वे मुझे हाथ पकड़ कर घर में ले गए और मेरे हाथ में एक नारियल देकर उसे भगवान के सामने रखने को मुझ से कहा। फिर देवघर के नीचे की मिट्टी उन्होंने मेरे मस्तक पर लगाई और मुझसे भगवान के सामने साष्टांग नमस्कार करवाया। बरामदे में आते ही पिताजी क्षण-भर के लिए ठिठककर खड़े हो गए और अपने आप ही बुदबुदाए, "अब मेरे ही भाग्य में आया है तुझसे कहना," और बोले, 'मन्या, मुझे प्रणाम कर।" पिताजी को प्रणाम करते समय मेरा कंठ भर उठा। पिताजी चुपचाप नीचे बैठ गए। फिर एक-दूसरे के गले में बांहें डालकर हम दोनों जी भरकर रोए।

पिताजी बोले, "चल! उठ। अब दिल को मजबूत करना होगा। इतनी गनीमत है कि इसी गांव में रहेगा।"

भारी कदमों से हम कोठी की ड्योढ़ी पर जा पहुंचे। बरामदे में गद्दे-तकियों वाली बैठक पर सरकार बैठे हुए थे। हमने उन्हें झुककर प्रणाम किया। मैं एक खम्भा पकड़ कर खड़ा रहा और पिताजी अदब से जाजम पर बैठ गए। सरकार बोले, "क्यों गणोबा, ले आया लड़के को ? क्या मैं यह नहीं समझता कि तुझे बुरा लगता होगा ? लड़के के सिवा तुझे कोई दूसरा सहारा नहीं, यह भी मैं जानता हूं। पर भैया, यह व्यवहार है ! तुझे ऋण-मुक्त करने के लिए सौ रुपये फेंक देना मेरे लिए कोई विशेष कठिन नहीं—"

पिताजी कुछ बोलने जा रहे थे कि तभी उन्हें रोककर सरकार ही आगे बोले, "मैं जानता हूं, तू क्या कहना चाहता है। बिना किसी शर्त के सौ रुपये देकर मैं तुझे यदि ऋण-मुक्त कर देता तो इसका मतलब यह होता कि मैंने तुझे सौ रुपये की भिक्षा दी। और भिक्षा ग्रहण करना क्षत्रिय का बाना नहीं।"

पिताजी ने कहा, "सच है सरकार।"

सरकार पुनः कहने लगे, "इसलिए मुझे इस प्रकार की योजना बनानी पड़ी। मेरे ध्यान में यह आ गया है कि कोठी में रहने से तेरे लड़के को शाला में जाते नहीं बनेगा ! कोठी में रहते हुए भी उसे शाला में भेजना

असंभव नही। आज उसके विना कोठी का कोई भी काम रुका नहीं रहेगा। मैंने किसी खाली स्थान पर उसकी नियुक्ति नहीं की है। उसके लिए मैंने एक नई जगह मजूर की है। उसके लिए कोई नया काम खोज निकालना है। इसलिए ऐसा कोई नया काम खोजने की अपेक्षा उसे शाला मे जाने की अनुमति दे देना असभव नही होगा। पर ऐसा करना व्यवहार नही। तेरे लडके को मेरे घर एक साल नौकरी करके कर्ज के सौ रुपये अदा करने हैं। मेरे घर रहकर, मेरा कोई काम न कर यदि वह शाला जाने लगा तो उसमे और उन लडको में जो लोगों के यहां रोज खाना मांगकर शिक्षा प्राप्त करते है, कोई फर्क न रहेगा। इस प्रकार रोटी दाल की भिक्षा मागना क्षत्रियो का बाना नही। पसीना बहाकर जो पेट भरता है वही सच्चा मराठा है। इसी मे उसे पुरुषार्थ दिखाना चाहिए। आने वाले संकटों से झगडना चाहिए। जा कोई चिंता मत कर। मनोहर तेरा नही, मेरा लडका है।"

पिताजी ने सरकार के चरणो पर मस्तक रखा और मेरी ओर निगाह भी न कर, सीधा घर का रास्ता पकडा।

पिताजी के जाते ही मेरा मन तडपने लगा। मैं रोने को आ गया। आई हुई सिसकी को मैंने दातो से होठ चबाकर निगल डाला। सरकार हंसते-हसते मेरी ओर देखकर बोले—

"हा, मनोबा, अब तुझे कुछ काम देना है। घोडे पर बैठना आता है तुझे?"

गाव के आवारा टट्टुओ पर बैठकर उन्हें दौडाने की आदत होने के कारण मैंने 'हा' कह दिया था। पर उसी समय, असली घोडे से पाला पड़ते ही कही मेरी फजीहत तो नही हो जाएगी, यह विचार मेरे मन को छू गया। भूल को सुधारने के उद्देश्य से मैंने फिर कहा, "देहाती घोड़ों पर बिना जीन के बैठने की आदत है मुझे। अभी तक जीन कसकर बैठने को *नहीं सीखा हूं। पर उस तरह बैठने का विशेष कोई भय नहीं लगता।"*

इसी समय चिंगी बाहर आई। उसे देखते ही सरकार बोले, "चिंगीजी यह देखो तुम्हारा सेवक!"

मेरा कलेजा धड़कने लगा। 'तुम्हारा' शब्द कहकर जब सरकार रुके

तब अगला शब्द वे क्या कहते है इसका मै अंदाज लगा रहा था। तभी 'सेवक' शब्द सुनते ही मैं ठंडा पड़ गया। अलग-अलग दो घरो के एक लड़का और एक लड़की जब आमने-सामने आते है तब सहज ही उनके मा-बाप कहते हैं···"लड़की, यह देख तेरा पति, लडके, यह देख तेरी पत्नी !" किसका पति और किसकी पत्नी ! सिर्फ पति पत्नी कहने से विवाह-गाठ कोई पक्की नही हो जाती। परंतु महज कौतुक के लिए ऐसा कहा जाता है। परंतु सरकार ने सिर्फ इस कौतुक के लिए भी चिंगी से यह नही कहा कि चिंगीजी, 'यह देखो तुम्हारा पति !' इन विचारो के मन मे आते हुए मैंने कोठी में चारों ओर निगाह डाली। अपनी झोपडी का चित्र भी मैंने नजरों के सामने मूर्त किया। उसी समय मेरे ध्यान मे आया कि कौतुक के लिए भी शाल में गूदडो का पैवंद नही लगाते। इसके आगे 'मैं सेवक हूं' इसी मंत्र का नित्य पाठ करने का मैंने निश्चय किया। आज से मैं गणवा सावत का पुत्र नही। दादा साहब जमीदार की कन्या चिंगीजी का मैं सेवक हो गया।

चिंगी बोली, "मनोबा—और सेवक ? यह कैसा आप का मजाक, पिताजी ?"

जोर-से हंसकर सरकार बोले, "यह मजाक भी पहचान गई न ? अजी, कल हमने सहज तय किया। सोचा, हमारी चिंगी ताई को कोठी में बिलकुल अकेली रहना पडता है। कोई साथी नही, बालसखा नही। गणवा से पूछा, "क्या तुम अपने पुत्र को रहने के लिए कोठी मे भेज सकते हो ?" वह तैयार हो गया और आज सुबह ही वह मनोबा को लाकर यहा छोड गया। अब हमारी चिंगी ताई को अकेला नही रहना पडेगा। हमेशा का साथी मिल गया। पर यह एक ही साल का साथी है, समझी ? एक साल के बाद उसे शाला में पढ़ने के लिए बबई जाना है।"

चिंगी बोली, "तो पहले आपने उसे सेवक क्यो कहा ?"

सरकार बोले, "अजी, सिर्फ मजाक में।"

चिंगी गुस्से से फड़कती हुई बोली, "मजाक मे भी व्यर्थ किसी को सेवक क्यों कहा जाए ?"

सरकार स्मित हास्य करके बोले, "अच्छा भई, गलती हो गई हम

से। घोडे पर ही जाओगी न घूमने ? मनोबा को साथ ले जाना है न ? तो अब ऐसा करो ताई साहब, हमारे पास तीन घोडे हैं। उनमे का जो कबरा है वह दे दो मनोबा को। बाकी के दो तुम्हारे है। मानाजीराव, साईसों से कहो कि घोडो को तैयार करके ले आए और तुम भी जाओ इन लोगो के साथ।" एकदम बोलना बदकर सरकार नजदीक बैठे हुए मुनीम की ओर मुडे और उनसे हिसाब-किताब के बारे मे बातें करने लगे। पिता का यह अकारण रूखापन देखकर चिंगी को थोडा गुस्सा-सा आ गया दीख पडा। गुस्से मे भरी पैर पटकती हुई वह भीतर चल दी। थोडी देर बाद भीतर से चाबुक की फड-फड आवाज सुनाई पडने लगी। हाथ मे चाबुक लिए चिंगी बाहर आई और सीधी जाकर घोडे पर सवार हो गई। उसके घोडे पर सवार होते ही वह तेज घोडा दौडने के लिए चारो खुरो पर नाचता रहा।

मानाजीराव मुझ से बोला, "देखता क्या है रे लडके ? तू भी हो जा सवार।" मेरे कबरे घोडे के पास जाते ही मानाजीराव ने आगे बढकर मुझे सहारा देने के लिए अपना हाथ आगे बढाया, पर एक हाथ से उसे दूरकर, मैं डरता-डरता ही क्यो न हो, घोडे पर सवार हो गया। मुझे सवार हुआ देखते ही चिंगी ने चाबुक का इशारा देकर घोडा दौडा दिया। मन मे थोडा भय होते हुए भी दात ओंठ चबाकर मैंने भी अपने घोडे को दौडा दिया। मानाजीराव अपने घोडे पर हमारे पीछे-पीछे आ ही रहा था। चिंगी सबके आगे थी, और जहा तक सभव हो सकता था, मैं उसके साथ रहने की कोशिश कर रहा था। मानाजीराव काफी पीछे रह गया था। चार-पाच मील की दौड मारकर हम नदी किनारे कल ही के स्थान पर पहुचे और दोनों ही घोडो पर से नीचे उतरे। मुझे काफी पसीना आ गया था। सांस जोर से चल रही थी। फिर भी जितना सभव था, मैं यह कोशिश कर रहा था कि चिंगी के ध्यान मे यह न आए कि मैं थक गया हूं। मेरा ध्यान एक ही जगह लगा होने के कारण आसपास मेरी निगाह नही गई। मैं अपनी ही धुन मे था। इस समय तक चिंगी मुझ से एक शब्द भी नही बोली थी। मुझे हाफते देखकर गालो मे हंसती हुई वह मुझ से "क्यो, थक गए शायद ?"

किसी जवान मर्द के ठाठ से मैने कहा, "मैं क्यों थकूं ?"

"फिर हांफने क्यों हो ?"

"हांफ कहा रहा हूं ? घोडे पर बैठने के बाद ऐसा होता ही है ।"

"पर मुझे तो कुछ नही हो रहा है।"

"तुम्हे घोड़े पर बैठने का अब काफी अभ्यास हो गया है। हम गरीबों को रोज बैठने के लिए घोडा कहा मिलता है ? कभी-कभार ही घोडे पर बैठने का मौका मिलता है। इसलिए हमें ऐसा होगा ही !"

"अब हो जाएगा अच्छा अभ्यास ।" क्षण-भर के लिए कुछ भी न बोल नदी की ओर देखते हुए हम स्तब्ध रहे। फिर चिंगी एकदम बोली, "पिता जी ने ऐसा क्यो कहा ?"

मुझे ऐसा लगा जैसे किसी ने मुह पर चपत मार दी हो। गर्दन झुकाकर चाबुक की डडी को पैरो पर पटकता हुआ मैं बोला, "सरकार ने जो पहले कहा था, वही सच है ! बाद मे तो यों ही लीपापोती थी—महज तुम्हें समझाने के लिए !"

"ऐसा ! फिर अब मुझे क्या कहोगे तुम—ताई साहब ?"

मैं बधिर हो गया हुआ जैसा स्तब्ध रहा। चिंगी ने फिर प्रश्न किया, "बताओ न, क्या कहोगे।"

मैने पूछा, "क्या कहूं ?"

चिंगी हसते-हसते बिलकुल मेरे नजदीक आई। घोडे पर बैठने वाली मर्दानी लडकी का ठाठ इस वक्त बिलकुल ही नजर नही आ रहा था। धीरे से जमीन पर बाया पैर पटककर, दाया हाथ मेरे कंधे पर रखकर, मेरा कान अपने मुह के पास ले जाकर वह बोली, "जब कोई न हो उस समय चिंगी कहना। और दूसरों के सामने ताई अथवा ऐसे ही किसी दूसरे आदर सूचक शब्द का उपयोग करना। क्यो, यही ठीक होगा ना ?"

चिंगी के हस्तस्पर्श से मेरे बदन मे जैसे बिजली कौंध गई, ऐसा मुझे लगा। चिंगी के शब्द कितने ही मील दूर से आए हुए अस्पष्ट ध्वनि की तरह मेरे कानो मे प्रवेश कर रहे थे। मेरा मस्तक सुन्न हो गया था। हां या ना कहने का मुझे होश ही नही रहा था। अपने दोनों नन्हे हाथों से मेरा कान पकडकर, मेरी गर्दन को एक तरफ झुकाकर और अपने होंठ मेरे

बिलकुल कान से मुंह भिड़ाकर चिंगी ने पूछा, "क्यों, यही ठीक रहेगा न ?"

चिंगी की सांस ज्यों ही मेरे गाल में खेलने लगी त्यों ही मैं बिलकुल बधिर हो गया। पर सिर्फ मुंह से शब्द निकले, "जो हुक्म हुजूर !"

झट-से मेरा कान छोड़कर चिंगी बोली, "हां जी, हां ! दूसरों के सामने 'हुजूर' ही कहा करो मुझे, जिससे कोई कुछ भी नहीं समझ पाएगा।"

मैंने कहा, "ठीक है।"

'कोई कुछ भी नहीं समझ पाएगा' याने क्या। जो कोई न समझ सकेगा ऐसा वह 'कुछ' क्या था ? क्या चिंगी को भी ऐसा लगा ? क्या मेरे ही जैसे पागल विचार उसके भी मन में थे ? अमीर की लड़कियों को गरीबों के प्रति ऐसा कुछ लगना स्वाभाविक है क्या ? सेवक बनने की मुझे खुशी हुई। लगा, सेवक होकर मैं धन्य हो गया। सेवकाई में मुझे पदवी का दर्जा मिला। मेरे हृदय में खुशी के फव्वारे पर फव्वारे उड़ने लगे।

मैंने चिंगी की ओर मुड़कर देखा। वह चाबुक की चमड़े की पट्टी को दांतों से कुतर रही थी। चाबुक की उस चमड़े की पट्टी से मुझे डाह होने लगा। ऐसा लगा कि···! पर सेवक का दर्जा भूल जाने से काम नहीं चलेगा। जितना मिला उतना ही आनंद सही। इसकी अपेक्षा अधिक महत्वाकांक्षा रखने का मुझे अधिकार नहीं। इस इत्ते से आनंद में मैं बिलकुल निमग्न हो गया था। इसी समय बिजली की कड़कड़ाहट हुई।

मानाजीराव जोर-से चिल्लाकर बोला, "अदब, अदब ! अबे मन्या, मालकिन के सामने अदब से पेश आ !" मैं हड़बड़ाकर जाग उठा और झट-से दूर हटकर चिंगी को झुककर मुजरा किया। हाथ का चाबुक फेंककर थई-थई नाचती हुई चिंगी खिलखिलाकर हंसने लगी। मैंने शरमाकर पीछे देखा तो मानाजीराव भी हंस रहा था। चिंगी का चेहरा गंभीर हुआ-सा दिखा। हम तीनों क्षण-भर के लिए कुछ भी न बोल एक-दूसरे की ओर टुकर टुकर देखते हुए चित्र की तरह स्तब्ध थे। चिंगी के दिमाग में कोई विचार आया-सा दिखा। उसने आकर पुनः मेरे गले में बांहें डाल दीं और गंभीर शब्दों में बोली, "ऐसा नहीं करना चाहिए मनोबा।"

मानाजीराव बड़े जोर-से चिल्लाकर बोला—

"ताई साहब, यह क्या है ? नौकर से इतनी घनिष्ठता ? ताई साहब को यह शोभा नही देता।"

दोनों हाथ कमर पर रखकर, गर्दन को एक झटका देकर, इतनी बडी आवाज़ में कि जिसे सुनकर कान झनझना उठें, चिंगी बोली, "कौन है नौकर ? मानाजीराव, कौन है नौकर ?"

मानाजीराव बोला, "यह मन्या—आपका नौकर।"

चिंगी पुनः चिल्लाई, "नौकर तुम होगे ! मनोबा जी नौकर नही है। नौकर की औलाद को सभी नौकर लगते हैं। तुम जन्म से ही नौकर हो—पुश्तैनी नौकर हो इसलिए तुम्हे तो सभी लोग नौकर ही दिखेंगे ! खबरदार अगर मनोबा को फिर कभी नौकर कहा तो ? घर की राह पकड़कर भीख का कटोरा आ जाएगा तुम्हारे हाथ में, यह याद रखो। याद नही, पिताजी ने क्या कहा था ? मनोबा मेरे साथी है—बालसखा हैं। तुम्हारे लिए जैसी मैं, उसी तरह वे। उतरो घोडे से नीचे और मनोबा को मुजरा करो।" चिंगी गुस्से से थरथर कांप रही थी। उसका गोरा चेहरा गुस्से के आवेश मे गाजर की तरह लाल दिख रहा था। यह देख कि मानाजीराव घोड़े से नही उतर रहा है, चिंगी फिर बोली, "उतरो नीचे ! मुजरा करो !"

मानाजीराव बड़े घमण्ड से बोला. "जान चली जाए फिर भी ऐसे नीच कुल के नौकर को मैं कभी मुजरा नही करूंगा।"

चिंगी क्रोध से बेहोश हो गई। उसके होंठ थरथर कांप रहे थे। ऊपर के दांतों से उसने अपना नीचे का होंठ जोर से काटा। होंठ पर दांत का निशान स्पष्ट दिखने लगा। क्रोध से थरथरानेवाले शब्दो मे वह चिल्लाकर बोली, "नीच कुल का ?"

गुस्से मे उसने अपना चाबुक उठा लिया था। प्रत्येक शब्द के साथ घोड़े पर बैठे हुए मानाजीराव को वह तड़ातड़ चाबुक फटकार रही थी। उसकी वह भैरवी जैसी उग्र मूर्ति, क्रोध का वह बेकाबू आवेश, उस आवेश का वह भयंकर स्वरूप और क्रोध से थरथरानेवाली उसकी वह देह देखकर, मैं सकपका गया—स्तंभित हो गया। मेरी जीभ सूख गई और उसके प्रति एक अनुभूत आदर से मेरा हृदय भर उठा। मानाजीराव के कान खूनाखून हो गए थे। उसके हाथ और पैरों पर साटें दिखाई देने लगी। मानाजीराव के

साथ ही उसके बेचारे बेकसूर घोड़े पर भी इसी तरह चाबुक की फटकारें पड़ी थी। आखिरी फटकार सिर्फ घोड़े पर ही पडी जिसके फलस्वरूप वह बिचका और मानाजीराव को लेकर कोठी की दिशा मे भाग खडा हुआ। यह देखकर कि मानाजीराव चला गया हाथ का चाबुक फेरकर चिंगी दौडती हुई मेरे पास आई और मेरे गले में बाहे डालकर फफक-फफककर रोने लगी।

इस आत्म-कथा को लिखते समय आज मैं वृद्धावस्था की सीमा पर खडा हू। उस समय की जब याद आती है तो उस समय के चिंगी के परस्पर विरोधी बर्ताव का आज भी मुझे बडा अचरज होता है। स्त्री जाति का यह कैसा चचल स्वभाव, अथवा मनोभावना की प्रतिक्रिया? इतनी उग्र मूर्ति एक क्षण मे ही किस कारण इतनी पिघल गई कि एकदम उसकी आखो से आसू बहने लगे। स्त्री-स्वभाव का यह लक्षण क्या इतनी स्पष्टता से बाल्यावस्था मे भी दिख जाता है? मानाजीराव जैसे जगी जवान के मर्दानी चमडे से चाबुक की हर फटकार के साथ खून की बूदे चमकानेवाली एक उग्र बालिका, एक ही क्षण मे, कोई कारण न होते हुए, अपनी तेजस्विनी आंखो से आसू बहाने वाली कोमल कुमारी क्यों बन गई? मेरे बालमन को उस समय यह पहेली सुलझाते नही बनी।

आज उस पहेली को किस रीति मे सुलझा रहा हू और किस सिद्धात के अनुपग से उस परस्पर विरोधी बर्ताव का समीकरण मैं हल कर रहा हू, यह जानने के लिए मेरी इस आत्म-कथा के काफी अगले पन्नों के आते तक पाठको को ठहरना होगा। नन्ही चिंगी के गभीर जीवन के परिशीलन से ही मैं इस पहेली को सुलझा पाया हू। परस्पर विरोधी विकारो से भरे हुए, और परस्पर विरोधी भावनाओ से, पुरुषो पर जादू कर देनेवाले स्त्री जाति के अमोघ चरित्र की निंदा करू या स्तुति करू?

अपनी विशाल आंखों के अगाध प्रवाह से चिंगी ने मुझे भिगो दिया, उसके साथ ही उसके स्निग्ध स्पर्श ने मेरा हृदय ठडा कर दिया। जैसे-जैसे मैं सांत्वना के शब्दों मे उसे समझाने का प्रयत्न कर रहा था वैसे-वैसे वह और अधिक फूट-फूटकर रो-रही थी।

"दादा साहब अब क्या कहेगे?" ऐसा बार-बार कहकर वह सिसक

रही थी। किन शब्दों से उसकी सात्वना करू, यही मैं नही समझ पा रहा था। अपने मुह मियां-मिट्ठू बनने से मुझे बड़ी घृणा थी। इस कारण घमड के उन्माद में मजा उड़ाकर बहती गगा मे हाथ धोने के अनायास आए हुए इस अवसर से लाभ उठाना मुझे ओछापन ही लगा। मैंने कहा, "जो हुआ वह एक दृष्टि से अनुचित ही हुआ। आज सरकार जो भी दण्ड हमे देंगे उसे चुपचाप सहन कर लेने में ही मर्दानगी है।"

"सच है!" चिगी बोली, "सच है—बिलकुल सच है, मनोबा! तुम्हारा ही कहना जंचता है।"

उसने आचल से अपनी आखें पोंछी, और हंसते-हंसते मेरी ओर देखा। मेरा जी ठंडा हुआ। "कैसी पगली हू मैं?"—चिगी हसते-हसते पुनः बोली, "मैं अपने क्रोध पर थोड़ा भी अधिकार नही रख सकी। क्या यह नामर्द का ही लक्षण नही है, मनोबा?" मैं उत्तर न देकर गालो मे हंसकर चुप रहा। उधार के गुस्से से गाल फुलाकर चिगी बोली, "इतना हसने को क्या हो गया?"

"स्त्रियों की मर्दानगी क्या होती है यह सोच रहा था मैं?"

"और तुमने भी तो ऐसा ही कहा था, सो?"

"वह मेरा कहना था। साथ ही मैं अपने बारे मे भी कह रहा था।"

"आप बड़े मतलबी मालूम होते हैं! तुम्हारे ख्याल से शायद स्त्रियां मर्द नहीं होतीं? महाराष्ट्र का इतिहास नही जानते शायद? शिवाजी की मां जीजाबाई, कोल्हापुरवाली ताराबाई, देसाईयों की सावित्रीबाई, झासी की लक्ष्मीबाई—ऐसी स्त्रियों को मर्द न कहें तो क्या कायर पुरुषों को मर्द कहा जायेगा?"

"हमारे विनायक कोडदेव ओक के इतिहास में इनमें से किसी की भी मर्दानगी का कोई जिक्र नही है। उसमें शिवाजी को विद्रोही कहा है।"

"शिवाजी को विद्रोही कहनेवाला सड़कर मर जाएगा।"

"तुम्हे किसने बताई ये जीवनियां?"

"मेरे मास्टरजी ने।"

"क्या मेरी भेंट होगी उन मास्टरजी से?"

"हत्तेरेकी! अजी, कोठी हां मे तो रहते हैं वे!"

"पर मैंने तो कभी नही देखा उन्हें।"

"वे दिन में कभी भी कोठी के बाहर नही निकलते। रात मे पागल की तरह इधर-उधर भटकते रहते है। मेरे मास्टर याने एक मजा हैं, मजा। कभी भी किसी पर गुस्सा नही होते। उन्हें गुस्सा दिलाना हो तो बस, शिवाजी को दोष दे दो और फिर देखो उनका गुस्सा! अभी जिस तरह मैं भड़क उठी थी उसी तरह वे भी गुस्से से उबलने लगते हैं। अब तुम खुद ही देखोगे उनका सारा मजा किसी दिन!"

इसी समय पीछे से आवाज सुनाई दी, "वाह जनाब, इतनी जल्दी हमें भूल गए?" विनायक आगे बढकर बोला, "कितनी देर से यहां तुम्हारे सामने खडा हूं। लेकिन तुमने आंख उठाकर ऊपर देखने की भी कृपा नही की। किस बात मे इतना खो गए थे, श्रीमान?"

मैंने चिंगी की ओर मुड़कर कहा, "यह है मेरा यहां का इकलौता मित्र—जोशीजी का विनायक। हमारे पांडुतात्या ग्रामजोशी है न, उनका लड़का। और विनायक, ये हैं कोठी के हमारे सरकार की कन्या, चिंगी राजे।" यह कहते हुए मैं पसीने से बिलकुल तर हो गया था।

विनायक ने चिंगी को मुजरा किया। यह देखकर चिंगी पेट पकड़कर हंसने लगी। विनायक बिलकुल झेंप गया। हास्य की लकीर मे शब्द मिलाकर चिंगी बोली, *"ये भी मुजरा करने वाले ही है क्या?"*

हक्का-बक्का होकर विनायक बोला, "तुम्हें मुजरा नही करना चाहिए था शायद?" चिंगी बोली, "मुजरा करना चाहिए था, पर किसे? सेवक को तुम्हें नही।"

विनायक गभीर मुद्रा मे बोला, "सच है। मुझसे भूल हो गई।"

मैंने कहा, "विनू, माफ करो मुझे। मुझे अब इनके साथ जाना चाहिए। आज से मै कोठी मे रहने चला गया हूं। पुन: तुम्हारी भेंट किस तरह होगी कौन जाने? कब जा रहे हो कोल्हापुर?"

चिंगी ने पूछा, "ये कोल्हापुर मे रहते हैं शायद? मै भी बचपन मे कोल्हापुर गई थी?"

मैंने हंसते-हसते पूछा, "बचपन में? याने, अब आप बड़ी हो गई हैं शायद?"

एक हाथ कमर पर और दूसरा हाथ झूलता हुआ रखकर, गर्दन और पैर को टेढ़ा करके तिरछी नजर से मेरी ओर देखती हुई चिंगी बोली, "देखो न ?" वह मनोरम दृश्य मुझे अभी भी याद आता है। कहा वह कुछ समय पहले की उग्र मूर्ति, और कहां इस समय की यह श्रीकृष्ण जैसी त्रिभंग बाल-मूर्ति !

विनायक हंसते-हंसते बोला, "ओह ! कितनी बड़ी हो गई हैं हमारी ताई साहब !" इतने थोड़े समय में विनायक खुले दिल से चिंगी से बोलने लगा यह देखकर मुझे खुशी हुई। चिंगी प्यार से बोली, "मैं इतनी बड़ी नहीं, यह मैं समझती हूं, समझे ! दस बरस की लड़की को चाहे जो चाहे जैसा चढ़ा देता है। पर इस तरह मैं नहीं चढूंगी।"

विनायक आश्चर्य से बोला, "दस साल की ? याने ताई साहब की उम्र क्या दस साल है ?"

मास्टर द्वारा पूछे गए प्रश्न को विद्यार्थी जिस स्वर में उत्तर देता है, उसी स्वर में चिंगी बोली, "मेरी उम्र दस वर्ष है।"

विनायक बारी-बारी से मेरी ओर और चिंगी की ओर देखने लगा। मैं रोमांचित हो उठा। अभिमान के आवेश में चिंगी खिलखिलाकर हंस रही थी।

विनायक बोला, "ग्यारह वर्ष का मनोहर सत्रह-अठारह वर्ष का दिखता है। दस वर्ष की चिंगीताई पन्द्रह-सोलह वर्ष की लगती हैं।"

जीभ चबाकर विनायक आगे चुप ही रहा। आंखें मिचलाते हुए चिंगी धीरे-से बोली, "कैसा लगता है तुम्हें ? बोलो न विनोबा जी ?"

स्वर में दृढ़ता भरकर विनायक बोला, "यदि दुनिया में अमीर और गरीब का भेद न होता तो चिंगी और मनोहर की जोड़ी अत्यंत मनोहर होती, यह मैं दावे से कह सकता हूं।"

चिंगी खिल-से हंस दी।

मैंने मन-ही-मन कहा, "तथास्तु ! ईश्वर इस ब्राह्मण के शब्द को यश दे।"

विनायक ने मेरी ओर मुड़कर पूछा, "अब तुमसे मुलाकात फिर कब होगी मनू ?"

मैंने पूछा, "तुम कब जा रहे हो कोल्हापुर ?"

विनायक बोला, "अभी तो पूरा एक महीना है।"

मैंने कहा, "कोठी मे आकर सरकार की अनुमति ले लो।"

चिंगी बोली, "अनुमति लेने की कोई जरूरत नही। तुम चाहे जब आकर मिल सकते हो, विनोबा !"

इसी समय एक नौकर जल्दी-जल्दी कदम बढाता हुआ आकर बोला, "चलिए ताई साहब, सरकार बुला रहे हैं। चल रे मन्या जल्दी।"

मेरे छक्के छूट गए। चिंगी भी जरा घबराई हुई-सी ही दिखी। घोड़े की लगाम हाथ मे पकडे हुए हम पैदल ही निकल पड़े। विनायक ने कुछ भी न बोल अपने घर की राह पकड़ी। रास्ते में चलते हुए मेरे मन में अनेक विचार आ रहे थे। क्या मानाजीराव ने शिकायत की होगी ? सरकार ने क्या सोचा होगा ? सरकार चिंगी को कही सजा तो न देंगे ? या कि अपनी लड़की का पक्ष लेकर अपराध का सारा भार मेरे मत्थे मढकर सरकार मुझे ही सजा देंगे ! मन बिल्कुल गड़बड़ा गया। नौकरी के पहले ही दिन यह कैसा विलक्षण प्रसग ?

7

कोठी की ड्योढ़ी के पास सरकार हमारी राह देखते खड़े थे। हमारे नज़दीक पहुंचते ही वे भीतर जाकर बरामदे में गद्दी पर बैठ गए। घोड़े को साईस के हवाले कर मैं बरामदे के खम्भे के पास चोर की तरह खडा हो गया। चिंगी ने भी यही किया। सरकार के चेहरे पर यद्यपि क्रोध की छटा नजर नही आ रही थी, फिर भी उन्होंने अपना चेहरा गंभीर बना लिया था। मेरा हृदय थर-थर कापने लगा। मानाजीराव नज़दीक ही खडा था। उसके हाथ और मुंह पर की खून की धाराएं प्रायः सूखती जा रही थी। पाँच मिनट हो गए, फिर भी सरकार कुछ बोल नही रहे थे। ऐसा लगता था जैसे वे यह नहीं समझ पा रहे थे कि विषय का आरंभ किस प्रकार

किया जाए। इसी समय मानाजीराव ने स्तब्धता भंग की।—

"सरकार, अब आप स्वयं देख लें कि सच क्या है और झूठ क्या है?"

सरकार ने मुझसे पूछा, "क्यों रे मन्या, क्या हुआ?"

गुस्से से आगे बढ़ती हुई चिगी बोली, "उनसे क्या पूछ रहे हैं? मुझसे पूछिए।"

निष्ठुर स्वर में सरकार बोले, "ठीक है। तो तुम्हीं बताओ। पर ठहरो। अपना अपराध पहले उसे ही स्वीकार करने दो।"

चिगी बोली, "उनका अपराध? उनका क्या अपराध है? मानाजी ने क्या कहा आपसे?"

सरकार बोले, "पहले ही दिन मन्या इतनी गुस्ताखी करेगा, यह मैंने कभी नहीं सोचा था। मानाजीराव के मुंह से कोई भला-बुरा शब्द निकल गया होगा, यह वह कबूलता है। पर वह शिकायत मेरे पास आनी थी। मानाजीराव को सजा देने का अधिकार मुझे है। पर सारे अधिकार अपने हाथ में लेकर मन्या ने उस पर कोड़े बरसाए, इसका क्या मतलब?"

चिगी बीच ही में चिल्लाकर बोली, "किसने कोड़े मारे? क्यों मानाजीराव, बताओ तुम्हें चाबुक से किसने मारा?" चिगी द्वारा डांटकर पूछे गए इस प्रश्न को सुनते ही मानाजीराव ने गर्दन झुका ली। चिगी ने फिर कहा, "अब गर्दन क्यों झुका ली? बोलो।"

मानाजीराव बोला, "मैंने सरकार से वही कहा है, जो सच है।"

मैं बिल्कुल स्तंभित हो गया। एक क्षण के लिए रुककर मानाजी आगे बोला, "मैं क्यों झूठ बोलूं? मन्या ने ताई साहब से जब थोड़ी लाग-लपट की तो मैंने उसे दोगला जरूर कहा था, यह मैं अस्वीकार नहीं करता। सरकार के सामने मैं यह पहले ही स्वीकार कर चुका हूं।"

यह सुनते ही उग्र चण्डी जाग उठी। फिर वही नदी किनारे की उग्र मूर्ति! मैं बिल्कुल डर गया। क्रोध से कांपती हुई चिगी बोली, "झूठ बोलते हो? शर्म नहीं आती तुम्हें? किसने मारा था तुम्हें?"

मानाजीराव अब इतना संयत हो चुका था कि वह बेखटके झूठ बोल सकता था। वह बोला, " 'किसने' क्या पूछ रही हो, ताई साहब! मन्या ने मारा। इसके सिवा दूसरा और था कौन वहां?" पर अभी भी मानाजी-

राव की जीभ लडखडा रही थी। सरकार को भी शक होने लगा है, ऐसा उनके चेहरे से दीख पड़ा। हाथ मे रखे चाबुक को हवा में फटकारकर चिंगी बोली, "मानाजीराव, भगवान का स्मरण कर सच बोलो।"

वह बोला, "सरकार के चरणों का स्मरण करके कहता हूं कि इस मन्या ने मुझ पर चाबुक उठाया और…"

उसका वाक्य पूरा भी नही हुआ था कि क्रोध से बेकाबू होकर चिंगी ने चाबुक उठाया और आव देखा न ताव, सबके सामने मानाजीराव पर उसका एक जोर का तड़ाका मारा। सरकार जोर से चिल्ला पड़े, "हूं! हूं! चिंगी, यह क्या है ?"

चिंगी बोली, "वही जो नदी पर हुआ था। इसी चाबुक से मैंने इसी तरह मानाजीराव को मारा था। ये देखिए मेरे चाबुक की चमडे की पट्टी पर खून के दाग।"

पर वह बेशर्म अभी तक सच बोलने के मूड मे नही था। वह जोर-जोर से रोने लगा और नीचे बैठकर बोला, "सरकार, भगवान की कसम खाकर कहता [redacted] कि ताई साहब के हाथ से चाबुक लेकर मन्या ने ही मुझे मारा।"

चाबुक तानकर चिंगी बोली, "फिर झूठ—"

सरकार ने झट-से उठकर चिंगी का हाथ पकड़ लिया और उसके हाथ से चाबुक छीनकर, चाबुक के सिरे से एक खास जगह दिखाते हुए सरकार बोले, "मन्या, ऐसा इधर आ।" झटके के साथ चिंगी दोनों हाथ फैलाकर मेरे सामने आकर खड़ी हो गई। सरकार डाटकर बोले, "चिंगी, दूर हट जा।"

चिंगी बोली, "नही। मै नही हटूंगी।"

सरकार चिल्लाए, "अरे, कोई है ? जाकर जल्दी मास्टर को बुलाकर लाओ।"

बरामदे से लगे एक कमरे से धीर गंभीर पग रखती हुई एक शात मूर्ति आकर हमारे सामने खड़ी हो गई। उस भयंकर मामले मे उलझा हुआ होने पर भी मैंने चिंगी की आड़ से गर्दन एक ओर हटाकर कुतूहल-भरी नजर से मास्टर जी की ओर देखा। मैने मन मे कहा, "तो यही वे मास्टर

जी हैं शायद ?"

सरकार बोले, "मास्टर, चिंगी को यहां से दूर करो।"

अत्यंत मीठे शब्दों में मास्टर जी बोले, "चिंगी, इधर आओ बेटा।"

अनजाने चिंगी के कदम मास्टर जी की ओर मुड़ पड़े। सरकार ने फिर डांटकर मुझसे पूछा, "बोल, किसने मारा मानाजीराव को ?" मैं एक क्षण के लिए चुप रहा। फिर मन में कुछ निश्चय किया मैंने और दांतों तले होंठ दबाकर उत्तर दिया, "मैंने मारा।"

"साफ झूठ।" चिंगी जोर से चिल्ला पड़ी, "मैं-मैं नहीं चाहती कि कोई मेरे अपराध को अपने पर ले। मुझे न मानाजीराव के ढोंग की जरूरत है और न ही मनोबा की स्नेहशीलता की। मैं फिर कहती हूं कि मानाजी राव को मैंने मारा है। मैंने मनोबा के गले में बांह डाली थी। जो मानाजी कह रहा है यह सब झूठ है—एकदम सफेद झूठ। सजा से मैं नहीं डरती। पिताजी, लीजिए यह चाबुक। मैंने कुल मिलाकर छः चाबुक मारे हैं मानाजीराव को—पांच नदी पर और एक अभी यहां आपके सामने। उतने ही चाबुक आप मुझे मार लीजिए। चाहें तो इससे दूने मार दीजिए। मैं सजा से नहीं डरती। पर झूठ हरगिज नहीं बोलूंगी।"

सरकार असमंजस में पड़ गए से दीख पड़े। वे बारी-बारी से हम तीनों की ओर देख रहे थे। बेशर्म की तरह चेहरा बनाकर मानाजी स्तब्ध खड़ा था। बारीकी से देखनेवाले को उसके चेहरे पर एक सूक्ष्म—अत्यंत सूक्ष्म मुस्कान की रेखा चमकती दीख पड़ती। सरकार मास्टर जी की ओर मुड़कर बोले, "मास्टर, मेरा ख्याल है कि तुम सारा मामला सुन चुके हो। इसलिए इस विषय में तुम्हारी क्या राय है ? तुम्हारा निर्णय मुझे स्वीकार होगा।"

एक क्षण के लिए भी न सोचकर निश्चयी चेहरे से मास्टर ने उत्तर दिया, "चिंगी अपराधी है।"

सरकार बोले, "पर मन्या अपराध स्वीकार कर रहा है। तब ?"

मास्टर जी बोले, "शिव्हलरी। शिव्हलरी ! बुआइज शिव्हलरी।"

इन शब्दों का अर्थ मैं अब समझा हूं। उस समय वे मेरी समझ में नहीं आए थे। सरकार ने पूछा, "क्या कहा ?"

मास्टर जी ने जवाब दिया, "स्नेहशील लड़का है। लड़की के अपराध पर चद्दर ओढ़ा रहा था।"

हाथ मे रखे चाबुक को सईस की तरफ फेंककर सरकार बोले, "मास्टर, अब तुम चिंगी को सजा दो। और दीवान जी, मानाजीराव के नाम पर एक रुपया जुर्माना लिख लो।"

मानाजीराव ने भेड़िए जैसी क्रूर दृष्टि से मास्टरजी की ओर देखा। मेरे समान ही मास्टर जी के लिए भी आज एक दुश्मन पैदा हो गया, यह मैं जान गया और सहज ही उस क्षण से बंदा उनका गुलाम हो गया। सरकार के जाते ही मास्टर जी अपने स्थान पर बैठते ही बोले—

"चिंगी जी, चलो शाला में, और मन्या बापू, तुम भी चलो हमारे साथ।"

अपने स्थान पर बैठते ही गर्दन न घुमाकर सरकार बोले, "हां, उसे आज से चिंगी ताई की खिदमत में रख देना है।"

मैंने पहली बार ही कोठी के भीतरी भाग में कदम रखा। कोठी का वर्णन करके मैं व्यर्थ जगह नही भरना चाहता। मराठाशाही की अन्य चार पुरानी कोठियों की तरह ही यह कोठी भी थी। चौक को पार करके हम भीतर गए और शाला के कमरे में हमने प्रवेश किया। बिछी हुई दरी पर दो दो गद्दे और गावतकिये थे। एक गद्दे पर मास्टर जी बैठे। दूसरे पर चिंगी बैठी। मैं द्वार के पास उसी तरह खड़ा रहा।

मास्टर जी बोले, "बेटा, इधर आओ। मेरे पास बैठो।" मैं डरते-डरते गद्दा से हटकर मास्टर जी के नजदीक बैठ गया। वे मास्टरी आवाज मे बोले, "हां, चिंगी जी, अब सारा हाल विस्तारपूर्वक बताओ।" सुबह से घटी सारी घटना चिंगी ने उन्हे पूरी तरह सुना दी। उस घटना का वर्णन करते समय बिनू की भेंट का हाल भी कहने को चिंगी नही भूली। मास्टर ने मुझसे पूछा, "तुम बिनू के दोस्त हो शायद?"

मैंने चौंककर कहा, "आपको कैसे पता चला?"

मास्टर जी ने उत्तर दिया, "बिनू मेरा भांजा है। मैं उसका मामा हूं।"

यह भूलकर कि मैं एक मास्टर साहब से बात कर रहा हूं, मैंने

कहा—

"पर उस बदमाश ने यह मुझसे कभी नही कहा।"

मास्टर जी गालों मे हंसते हुए बोले, "नही ही बताएगा। वह बडा चालाक है।"

मैंने पूछा, "क्यों नही बताएगा?"

मास्टर जी बोले, "मराठा की कोठी मे जो रहता हू मैं। मेरा हुक्का पानी बंद कर दिया है उन लोगो ने।"

मैंने पूछा, "क्या विनू ने भी?"

मास्टर जी बोले, "उस लड़के को कौन पूछता है? उससे मेरी मुलाकात ही कहां हो रही है? पर यदि वह अन्य लोगो जैसे बडा होता तो उन लोगों की तरह वह भी मेरा हुक्का-पानी बद कर देता।"

मैंने कहा, "ऐसा कभी न होता।"

मास्टर जी जोर-से हंस पड़े। मुझे उन पर गुस्सा आ गया। मैंने क्रोध से मुट्ठी बांधकर गद्दी पर जोर-से पटकते हुए कहा, "मैं निश्चपूर्वक कहता हूं कि विनू आपका हुक्का-पानी कभी बद नही करेगा।" मास्टरी जी जोर-जोर से हंसने लगे, और हंसते-हंसते ही उन्होंने मेरी पीठ ठोंकी और बोले, "वाह रे विनू के हिमायती। लगता है मित्र का समर्थन करने की आदत ही है तुम्हें।"

चिंगी को थोड़ी हंसी आई जो मेरी नजरों से न छूट पाई। मैं तनिक शरमाया। पर पुन: संयत होकर बोला, "मैं सौगंध खाकर कहता हू—भगवान की सौगंध खाकर कहता हूं कि विनू आपका कभी भी हुक्का-पानी बंद नही करेगा।"

मास्टर ने कहा, "इसका प्रमाण?"

मैंने कहा, "विनू के सामने मेरे हाथ की रोटी खाकर देखिए, और फिर पूछिए विनू से ही जो आप पूछना चाहते हैं और देखिए वह क्या कहता है?"

मास्टर जी छत की ओर देखते हुए हसते-हंसते अपने आप से ही बोले, "इसमें कुछ रहस्य है। लगता है मामा के गुण भांजे मे भी उतर आए हैं। यह गुणी लडका प्राय: हम जैसा ही बहक जाएगा।" मास्टर जी के इन

उद्गारों का अर्थ मैं उस समय समझ नहीं पाया था। चिंगी मास्टर जी की ओर लगातार टक लगाए देख रही थी।

जैसे कुछ एकाएक याद आ गया हो इस भाव से मास्टर जी फिर मुझ से बोलने लगे, "अच्छा, तो कुल मिलाकर तुम आज से यहीं रहने को आ गए हो। पहले ही दिन का मंगलाचरण सब मिलाकर स्मरणीय ही हुआ। पहले धड़ाके में ही एक दुश्मन पैदा कर लिया तुमने। तुमने क्या कर लिया, इस बावली लड़की के पागलपन के कारण तुम्हारे लिए यहां एक दुश्मन पैदा हो गया। पर इसके साथ ही तुम्हें एक ऐसा मित्र भी मिल गया जो ऐसे दुश्मनों को खत्म कर देगा।"

मेरे मन में प्रश्न उपस्थित हुआ—यह मित्र कौन ? चिंगी या मास्टर जी ?

मास्टर आगे बोले, "मित्र मिल गया। पर तुम्हें उसका उपयोग कर लेना चाहिए। उसकी मित्रता बनाए रखनी चाहिए। ऐसी तात्त्विक बातें तुम आज नहीं समझ पाओगे। इसलिए इस विषय में मैं आज विशेष और कुछ नहीं कहता।"

आखों पर से चांदी की फ्रेम वाला चश्मा उतारकर उन्होंने अपने मलमल के कुरते से पोंछा। खाली आखों से एक बार चश्मा पोंछते हुए उन्होंने मेरी ओर निरखकर देखा और फिर चश्मा आखों पर रखकर मुझसे बोलना शुरू किया। चिंगी एक शब्द भी न बोल तकिए से टिकी चुप बैठी थी। मास्टर जी बोले, "तुम आज से यहां आ गए हो। इस कोठी में तुम्हारी कोई जरूरत थी, ऐसा नहीं लगता। पर सरकार तुम्हें यहां ले आए हैं। तुम्हें कौन-सा काम दिया जाए इसका अभी कोई फैसला नहीं हुआ है। इसलिए हर व्यक्ति अपने-अपने ढंग से तुम्हें भिन्न-भिन्न काम करने को कहेगा। इससे खुशी और नाराजगी के सवाल बारबार उपस्थित होंगे। तुम छोटे लड़के हो, और इस कोठी के लोगों का हाल यह है कि हर व्यक्ति नौकर को अपनी-अपनी मर्जी के अनुसार नचाना चाहता है। छोटे लड़कों को यदि वे उनके नौकर हैं, तो तंग करने का उन्हें बेहद शौक है। इसके अलावा भीतर बाजयाबाई से पाला पड़ता है। अभी तक देखा नहीं है न ? बाजयाबाई चिंगी जी की बुआ हैं। इस कोठी की सच्ची मालकिन

वही हैं। बाहर का कारोबार और व्यवहार सरकार देखते हैं और भीतर वाजयाबाई का ही शासन चलता है। गरज यह कि तुम पर मुख्य अधिकार चलेगा वाजयाबाई का। तुम्हें यहाँ यह एक नया सबक सीखना पड़ेगा। अभी तक मैंने जो कहा है, वह आया तुम्हारी समझ में ?"

मैंने गर्दन के इशारे से ही 'हां' कहा। मास्टर जी आगे बोले, "किस कक्षा में थे तुम ?"

मैंने उत्तर दिया, "पांचवी में।"

"कक्षा में कौन-सा नंबर था तुम्हारा ?"

मैंने शरमाते-शरमाते उत्तर दिया, "पहला।"

क्या बात थी कुछ कह नहीं सकता, पर 'पहला' कहते समय मुझे लगा कि थोड़ा हंसकर मास्टर बोले, "पहला ! फसल कटने के बाद मास्टर के घर गल्ला दे आते थे शायद ? यह गांव कोई बिल्कुल ही पिछड़ा हुआ नहीं है। यहां आधी आबादी ब्राह्मणों की है। ऐसे गांव की शाला में तुम जैसे मराठा का पहला नंबर रहे तो यह अभिमान की ही बात है, क्या तुम्हें कोई मास्टर घर पढ़ाने आता था ?"

"इतनी हमारी हैसियत कहां है कि हम घर पर मास्टर को पढ़ाने पर बुलाएं ? मेरे पिताजी ही मुझे घर पर पढ़ाते हैं।"

"ऐसा ! तो कहना चाहिए कि अपने लड़के को घर में पढ़ाने लायक आस्था रखनेवाला एक मराठी इस गांव में है ? ब्राह्मणों के भी दिमाग में यह बात नहीं आती कभी कि अपने लड़के को घर में खुद भी पढ़ाएं। सिर्फ अपने बड़प्पन की शेखी बताने के लिए और अपना लड़का कक्षा में ऊंचे नंबर पर रहे, इसलिए मास्टर को लांच देने की गरज से ही वे उन्हें घर में पढ़ाने को मास्टर लगाते हैं। फिर घर आने वाला मास्टर लड़के को ठीक से पढ़ाता है या नहीं, इस बात की ओर लड़के का बाप फूटी आंख से भी नहीं देखता। ऐसी कोई भी बात न करके घर में किसी मास्टर की ट्यूशन न लगाकर तुमने कक्षा में अपना पहला नंबर कायम रखा है यह बड़े गौरव की बात है। इसी माह में यह पहला नंबर आया था, या कि—"

"यदि बीमार न पड़ा होता तो हमेशा ही मैं पहला रहता हूं।"

"और गांव की दादागिरी में—मार-पीट करने में ? यहां कौन-सा

नंबर रहता है तुम्हारा ?"

"यह आप विनू से ही पूछिए ।"

"क्या उम्र है तुम्हारी ?"

"ग्यारह वर्ष ।"

"ग्यारह वर्ष ! पर दिखते तो हो खासे सोलह-सत्रह वर्ष के । बैल की तरह घास खाकर पचा लेते हो शायद ? ऐसा उजड्ड लडका पहला नंबर ! बडा आश्चर्य है । पहला नंबर रहने वाला अक्सर हड्डियों का ढांचा और सींकिया पहलवान ही होता है । पर ये है हाई स्कूल की बातें । तो सब मिला कर बात यह है कि तुम्हारा पहला नंबर है । ठीक है । अब तुम्हारी शाला *तो छूट ही गई'...*"

मैंने एक गहरी सास ली । मास्टरजी बोले, "क्यो, गहरी सांस क्यों ली तुमने ? शाला से छुट्टी पा जाने की खुशी नही है तुम्हें ?" मैंने सीना फुलाकर और गर्दन तानकर कहा, "मैं बी० ए० होना चाहता हूं ।"

"किसने भर दिया है यह पागलपन तुम्हारे दिमाग मे ? क्या विनू ने ?"

मैं स्तब्ध हो गया । मास्टर जी को इसका कैसे पता चला ? मास्टर जी आगे बोले, बी० ए० होने का पागल शौक बहुत बुरा होता है । बचपन में मैं तुम्हारे जैसा ही एक हट्टा-कट्टा लडका था । इस बी० ए० होने के पागलपन ने ही मुझे इस तरह कमजोर कर दिया । आंखो पर यह चश्मा चढ गया । दवाओ का खजाना रखना पडता है मुझे हमेशा अपने साथ आजकल । वरना बचपन मे अपने माथे पर मैंने कभी सोंठ भी नही लगाई थी ।" आस्तीन पीछे हटाकर अपना हाथ आगे बढाते हुए मास्टरजी बोले, "देखा, यह हाथ किसी समय लोहे की छड की तरह था । अब यह ऐसा हो गया है ! तुम्हें देखता हूं तो मुझे बड़ी खुशी होती है । इसी तरह मजबूत और हट्टे-कट्टे बने रहकर हरवाहा बनो । परंतु बी० ए० मत हो । यह बी० ए० का नशा बुरा होता है । शरीर की मिट्टी हो जाती है । इस शौक के कारण मेरी तरह बवई की हवा में फंस गए तो समझ लो तुम्हारा सत्यानाश ही हो गया । ` " मैं बीच ही मे बोल उठा, "आप बी० ए० हो गए हैं क्या मास्टरजी ?"

वे हंसते-हंसते बोले, "हुआ नही। हो जाता। अब होने वाला हूं।"

मास्टरजी बी० ए० होने वाले हैं, यह सुनकर मुझे खुशी हुई। मैंने पूछा, "कब होने वाले हैं।"

वे बोले, "एक बार फेल होकर आया हूं। फेल होने का सिर्फ यही एक कलंक लगा है मुझे। पर फेल होने का कारण यह था कि ठीक परीक्षा के समय ही मैंने बिस्तर पकड लिया था। डाक्टर ने वायु परिवर्तन के लिए किसी देहात में जाकर रहने की सलाह दी थी, इसलिए सरकार की नौकरी स्वीकार करके यहां रहने चला आया। पर मेरी राम कहानी से तुम्हे क्या मतलब ?"

मैंने प्रौढ़ता का भाव लाकर पूछा, "क्यों भला ? मैं वैसे कोई बिलकुल ही छोटा नहीं हूं। एक प्रश्न पूछूं मास्टर जी ? नाराज तो नहीं होंगे आप ?"

वे हंसते-हंसते बोले, "हां-हां। शौक से पूछो। नाराज होने की मुझे आदत नहीं।"

"आपकी उम्र क्या है, मास्टरजी ?"

"पच्चीस वर्ष।"

"और पूछूं एक प्रश्न ?" यह देखकर कि मास्टर जी सिर्फ हंसे, मैंने आगे पूछा, "आपका ब्याह हो गया है क्या ?" प्रश्न पूछा, जीभ काटी और मैं बिलकुल लज्जा में लद गया। मास्टरजी जोर-जोर से हंसने लगे और बोले, "बड़े जिज्ञासु हो बेटा।" मास्टर का हाथ पकडकर उसे खींचती हुई चिंगी बोली, "हां-हां, मास्टर साहब, बताइए, आपका ब्याह हो गया क्या ?"

वे हंसते-हंसते बोले, "अब याद आया तुम्हे यह प्रश्न ? मन्या के पूछने के बाद ? मन्या, बड़े विलक्षण लड़के हो तुम। ब्याह की बातों से तुम्हें अभी क्या मतलब ? इतनी छोटी उम्र के लड़के के दिमाग मे ब्याह की बातें नही होनी चाहिए। सरकार ने भी यह प्रश्न मुझ से कभी नही पूछा, पर यह बेटा अलबत्ता अब पूछ रहा है कि मास्टरजी, आपका ब्याह हो गया है क्या ? क्या कोई लडकी देख रखी है तुमने अपने मास्टर जी के लिए ?"

मास्टरजी के गले में बांह डालकर चिंगी बोली, "ऐसा क्या कह रहे

हैं आप ? बताइए न मुझे—आपका ब्याह हो गया है क्या ?"

हमेशा जोर-जोर से हंसनेवाले मास्टर एकदम गंभीर हो गए और बिलकुल रूखी आवाज मे बोले, "नही।" क्षण भर के लिए हम तीनों ही स्तब्ध हो गए। आखिर स्तब्धता को भग कर मैंने ही बडी प्रौढता से पूछा—

"क्यो नही ?"

मास्टरजी के मुख पर फिर मुस्कराहट चमक उठी। मेरा एक गुलचा लेकर वे बोले, "बडा अच्छा प्रश्न किया तुम ने। इस एक ही शब्द के कारण, इस विवाह के कारण मेरा जीवन मिट्टी मे मिल गया है। सोलहवें वर्ष मे ही मेरे माता-पिता मेरा विवाह कर देना चाहते थे। उनसे लडकर मैं घर से भाग गया।"

मैंने पूछा, "आप क्यो लडे ?"

बाए हाथ की हथेली पर दाए हाथ की मुठ्ठी पटककर मास्टरजी बोले, "अगर उसका कारण बताऊ भी तो तुम लडके उसे समझ नही सकोगे। यह जरूर सच है कि जब से मैं घर से भागा तब से 'मधुकरी' (भीख) मागकर पढाई की और इस दरजे तक पहुचा।"

मेरे मन मे प्रश्न आया—"क्या सभी ब्राह्मण 'मधुकरी' मांग कर पढाई करते है ? इसलिए मैंने कुतूहल के वश होकर मास्टर जी से पूछा—"क्यों मास्टरजी, अगर मराठे भी मधुकरी भिक्षा मागे तो कोई हर्ज तो नही न ?"

एक ठहाका लगाकर वे बोले, "यह प्रश्न बड़ा विकट है। इस प्रश्न का उत्तर अभी तक मै नही जानता। इस प्रश्न का उत्तर जिस समय मुझे सूझेगा उस समय यदि दिल्ली मे भी रहा तब भी यहा से दौडकर आऊगा और तुम्हे उत्तर सुना दूगा।"

चिंगी बोली, "तो मतलब यह कि आप यहा से जा रहे हैं ?"

"क्यों नही जाना चाहिए ?" मास्टरजी बोले, "मुझे बी० ए० जो होना है। पर ये बातें छोडो अभी। यह मन्या स्वय मूक है, पर दूसरो को बहुत बुलवाता है। अब हम पढाई शुरू करें। भोजन का समय हो रहा है। गधे ने मुझे फिजूल की बातो में उलझा दिया और मुझमे खूब

बुलाया। अब पढ़ाई आरंभ करने से पहले एक बड़ी महत्वपूर्ण बात करनी है। सरकार ने मुझे चिंगी जी को सजा देने का हुक्म दिया है। हां, तो चिंगी ताई, तुमने अपना अपराध स्वीकार किया है न ?"

चिंगी गभीर होकर बोली, "हां।"

"कितने चाबुक मारे तुमने मानाजीराव को ?"

"नदी पर पाच और बरामदे मे एक—इस तरह सब मिलाकर छः।"

मास्टर जी मेरी ओर मुडकर बोले, "गवाह मनोहर गणेश सावत, अपराधी सच बोल रहा है न ?" मैंने हसते-हसते ही गर्दन से हां कहा। मास्टरजी डाटने का अभिनय करके बोले, "गवाह, जोर से बोलो।" मैंने मुह से हां कहा और हसता रहा। ऐनक की आड से नेत्र विस्फारित कर मास्टरजी बोले, "अदालत मे ऐमा लडकपन नही चलता। चुप रहो।"

मैंने जबरदस्ती ही चेहरे पर गभीरता लाने की कोशिश की। पर मास्टर का वह कूल ठाठ देखकर मैं अपनी हसी नही रोक पा रहा था। मैं फिर से फिस्स-से हंस दिया। मास्टर जमीन पर हाथ पटककर बोले, "साईलेंस ! आरोपी पर गुनाह साबित हो गया है। आरोपी ने अपना अपराध स्वयं ही स्वीकार किया है। फर्यादी ने गवाह को दोगला कहा इस लिए आरोपी को गुस्सा आ गया और उसने अपने हाथ मे रखे चाबुक से फर्यादी को पीट दिया। सजा उचित ही थी। इस में आरोपी ने न्यायाधीश का काम किया है। उसके इस काम के बदले आरोपी को सजा देनी है। यह सजा क्या दी जाए मह आरोपी स्वयं अपने मुंह से बताए। क्यो चिंगी ताई, क्या सजा दू ? बताओ न ?"

गंभीर होकर चिंगी बोली, "मेरा एक चुम्बन ले लीजिए।" उसने अपनी गर्दन मोडकर गाल आगे बढ़ा दिया। उसे हृदय से लगाकर मास्टर जी ने उसे चूम लिया।

मुझे मास्टर से ईर्ष्या हुई। दरवाजे में किसी की आहट सुनाई दी इस लिए मैंने मुड़कर देखा। दरवाजे पर सरकार मुस्कराते हुए खड़े थे।

8

कोठी के दैनिक कार्यक्रमो मे घुलमिल गया। कोठी मे मुझे कोई विशेष काम नही करना पड़ता था। सुबह चिगी के साथ घोड़े पर सवार होकर घूमने जाता। दोपहर को जब उसकी पढाई होती रहती तो उसके साथ वहा बैठा रहता। शाम को थोडा खेलता और फिर उसी के साथ घूमने चल देता। डंड बैठक आदि अपने व्यायाम के लिए इसी में से अपने लिए मैं थोडा समय निकाल लेता था। मास्टरजी जिस समय चिगी को पढाते होते उस समय मै भी उनके पढाने की ओर एकाग्र मन से ध्यान देता और वह क्या-क्या पढा रहे हैं यह समझने की कोशिश किया करता। उनके पढाने की पद्धति हमारी शाला के मास्टरो की पद्धति से बिलकुल अलग थी। वे जो पढाना होता उसे सहज हसते-खेलते पढा देते थे। यह देखकर, मैं गरीब हूं इसका मुझे बडा दुख हुआ। ऐसे ही मास्टर घर आकर मुझे भी पढ़ाते तो···

सुनते-सुनते बहुत से अंग्रेजी शब्दों से मेरा परिचय हो गया। इस तरह बहुत से अंग्रेजी शब्द उनके हिज्जे और अर्थ मेरे कानों को परिचित हो गए थे। पर आंखों से उन शब्दों को मैंने देखा नही था। जैसे-जैसे अधिकाधिक शब्द मुझे आने लगे, वैसे-वैसे अंग्रेजी पढने की मेरी इच्छा बढने लगी। चिगी कोई वाक्य गलत कहने लगती तो कोने मे बैठे-बैठे ही मैं अपने मतानुसार उस वाक्य को सही करके कह देता। तब मास्टरजी शाबास कहकर मेरी बुद्धि की तुलना चिगी से करके उसे चिढाते।

अनेक बार मेरे मन मे आया कि चिगी के नजदीक बैठकर मैं भी पढूं। परंतु मेरा यह पक्का निश्चय था कि अपना दरजा मैं कभी नही भूलूगा। चिगी मुझे बुलाती नही थी। मास्टरजी भी इस विषय मे कुछ नही कहते थे और मेरे अपने स्वाभिमान को यह जंचता नही था कि मैं स्वयं ही बेशर्म की तरह आगे बढ़कर व्यर्थ की बेइज्जती अपने पल्ले बाधू। मास्टर जी के चेहरे की ओर देखकर कभी-कभी ऐसा लगता था कि वे मुझे अपने पास

बिठाकर पढाना चाहते हैं। फिर दूसरा विचार आता कि सचमुच ही यदि उनकी ऐसी इच्छा होगी तो वे अपने पास बुलाकर मुझे पढाना शुरू क्यो नही कर देते ? मै इस विषय मे सोचने लगा। वे चिंगी के मास्टर थे। उन्हे चिंगी को पढ़ाने का वेतन मिलता था और चिंगी से मेरा नाता मालिक और नौकर का था। मालिक का मास्टर नौकर को पढाने के लिए बाध्य नही। पर हां, यदि सरकार इजाजत दे दें तो ?

इस विचार के मन मे आते ही मेरे मन में थोड़ा उत्साह आया। मेरे मन मे आया कि मास्टरजी से ही इस विषय में कहू। देखू वे क्या कहते हैं ? फिर एक विचार यह भी आया कि क्यों न सीधा सरकार के पास जाकर स्वयं उनसे ही पूछू। परतु सरकार से बातें करने का अभी तक मुझे कोई मौका ही नही आया था। उनके द्वारा पूछे गए प्रश्नो के उत्तर मे अभी तक मैंने 'हां' या 'ना' के सिवा उनसे और कुछ कहा ही नहीं था। एक दो बार इस प्रश्न को पूछने का मन मे निश्चय करके मैं सरकार के पास गया भी। पर उन के यह पूछने पर कि 'कहो, कैसे आए ? क्या चाहते हो ?', मै सिर्फ 'कुछ नही, यों ही आया था', कहकर, चल दिया था।

एक दिन हम तीनों ही शाला के कमरे मे बैठे हुए थे कि सरकार एका-एक कमरे मे आए और मुझसे पूछने लगे, "क्यों रे मन्या, सच बता, तू मुझ से क्या पूछना चाहता है ? तनिक भी संकोच मत कर। मन खोलकर बता।" सरकार के इस प्रश्न के पूछते ही मै चौककर खड़ा हो गया सही, पर उन्हे उत्तर देने का साहस मैं नही बटोर पा रहा था। यह देखकर कि मै कोई उत्तर नही दे रहा हूं, सरकार बोले, "मास्टर, तुम्ही इससे पूछकर मालूम करो कि यह क्या चाहता है। उसे यहां कोई असुविधा तो नही हो रही है ? कही घर की—बाप की याद तो नही हो रही है ?"

मैंने एकदम कहा, "छि ! छि ! बिलकुल ही नही।" मास्टरजी ने हाथ पकड़कर मुझे अपने नजदीक खीचा और पूछा, "धीरे से मेरे कान मे बताओ तुम क्या चाहते हो ?"

अपना मुह मास्टर जी के बिलकुल कान के पास ले जाकर मैंने बुद-बुदाते स्वर में कहा, "मैं अंग्रेजी पढना चाहता हूं—यही—चिंगीताई के

साथ।" आगे मुझ से बोला नही जा रहा था। मास्टरजी सरकार को लक्ष्य कर बोले, "यह अंग्रेजी पढना चाहता है—यही, चिंगीताई के साथ।" मास्टर जी के यह कहने ही मैं लज्जा से लाल हो गया और सहारे के लिए एक कोने मे जाकर खड़ा हो गया। मेरी ओर मुडकर सरकार बोले, "क्या यही पूछने मेरे पास दो बार आया था?" उनके शब्दो मे हालांकि क्रोध की झलक नही थी, पर वे कठोर थे इस मे सदेह नही। मेरे मुह से शब्द नहीं निकल पा रहे थे। मैंने सिर्फ गर्दन के इशारे से 'हा' कहा। सरकार एक क्षण के लिए कुछ भी न बोले। मैं दयनीय दृष्टि से उनकी ओर देख रहा था। हर क्षण उनके चेहरे पर की कठोरता बढ़ रही थी।

वे एकदम बोले, "यह नही हो सकेगा।"

अदब का ख्याल न कर मास्टरजी ने दृढता से पूछा, "क्यो नही?"

सरकार बोले, "यह आम शाला नही है। सिर्फ चिंगीताई को पढ़ाने के लिए आपकी नियुक्त हुई है। आपको सिर्फ उसी को पढाना चाहिए। यदि उसके साथ आप दूसरे लडको को भी पढाएंगे तो उसकी पढ़ाई कच्ची रहेगी। और मान लो उसकी पढ़ाई ठीक से हुई भी फिर भी यह बात व्यवहार के विरुद्ध होगी।" ऐसा कहकर, सरकार एकदम चल दिए। मास्टर जी अपने आप आप से ही बुदबुदा रहे थे "जिसे शिक्षा की कोई कल्पना न हो उसके साथ यही होता है।" क्रोध से झल्लाती हुई चिंगी बोली, "पिताजी मे अकल नही।" मास्टर ने डाटा, "चुप्प! ऐसा नही कहते। ऐसा कहने से बडों का अपमान होता है।"

चिंगी बोली, "कहा का अपमान? मैं वही बोलूगी जो मुझे सच लगता है। मैं फिर कहती हू कि पिताजी मे अकल नही।" किताबें फेंक कर क्रोध मे भरी वह एक कोने मे जाकर बैठ गई। मास्टर जी खिलखिलाकर हंसने लगे और यह देखकर कि वह कोना छोडकर उनके पास आ नही रही है, वे बोले, "स्वीकार करता हूं। तुम्हारे पिताजी को अकल नही पर उनकी पुत्री को भी अकल नही।" चिंगी ने पीछे गर्दन घुमाकर मास्टर जी की ओर देखा और क्रोध आने का दिखावा किया। परतु उनकी नजर से नजर भिडते ही और उनके उस विनोदपूर्ण चेहरे को देखते ही वह खिल-से हंस दी और झट-से बैठक घुमाकर मास्टर जी के नजदीक

अपनी पहली जगह पर आकर बैठ गई ।

मास्टर जी बोले, "तुम्हारे पिताजी मे अक्ल है या नही, यह मैं नही जानता, पर उनकी पुत्री मे निश्चित ही अकल नही ।"

चिंगी वोली, "अब मुझे अधिक न छेडिए मास्टर जी, वरना गुस्सा होकर चली जाऊगी ।"

मास्टरजी वोले, "खुशी से चली जाओ। मेरा क्या जाता है ? तुम्हारी पढाई डूवेगी ।"

चिंगी वोली, "डूब जाए पढाई और अगर डूब गई तो क्या हो जाएगा मेरा क्या विगड जाएगा ? मैं तो लडकी ही हू । पर मनोवा की जो पढ़ाई डूब रही है उसकी चिन्ता किसी को नही ।"

चिंगी के सहानुभूति से भरे उद्गार सुनकर मैं रोमांचित हो उठा। मास्टर जी आगे वोले, "पढाई डुवाने से काम नही चलेगा, समझे ? तुम्हे अंग्रेजी अच्छी आनी ही चाहिए। याद है, सरकार ने मेरी नियुक्ति करते समय क्या कहा था ? तुम्हे राजा की रानी होना है ।"

मुझे चारो ओर अंधेरा दिखने लगा। पर इसी समय चिंगी ने कहा, "भाड मे जाए राजा और रानी ! मैं नही होना चाहती रानी-वानी। राजा और रानियों की वातें तो कहानियों मे ही ठीक होती हैं, 'एक था राजा, एक थी रानी ।' जाओ, मै नही होऊंगी रानी ! और तो और कल से मै विलकुल कुछ पढूगी ही नही। फिर देखती हू कि किस तरह कोई मुझे रानी वनाता है ?"

मास्टर ने कहा, "कैसी पगली लड़की है ? रानी नही तो क्या वनेगी तू ? किसान की औरत ? या कि किसी वड़े घर की नौकरानी ?"

चिंगी गर्व से अकडकर मास्टरजी की तरफ पीठ फेरकर वैठ गई। मुझे खुशी हुई। ऐसा लगने लगा कि आशा के लिए थोडी जगह है। मास्टर वोले, "जव तक तुमने राजमहल का वैभव नही देखा तभी तक तुम्हारी यह वकवास है। कल किसी राजमहल मे चली जाओगी तो हाथी, घोड़े, दास-दासियां, और सजी डोलिया, यह सारा वहां का ऐश्वर्य देखोगी तो रानी वनने के लिए लार टपकाने लगोगी ।"

गुस्से से गाल फुलाकर और मास्टरजी की ओर न देख चिंगी बोली,

"मैं फिर कहे देती हू कि आपने ऐसी कोई बात फिर कभी कही तो मैं फूट-फूटकर रोने लगूगी ।" मास्टरजी हंसते हुए बोले, "चलो, अब मजाक काफी हो गया । यहा आओ और यह किताब पढ़ो और चाहो तो फूट-फूटकर रोती भी रहो। मुझे कोई आपत्ति नही ।"

चिगी ने हटकर दूर फेक दी हुई पुस्तक मास्टरजी के सामने लाकर पटक दी, पलथी मारकर बैठी और गुस्से-गुस्से मे पाठ पढ़ने लगी। खाने का वक्त होने तक मैं कमरे मे यद्यपि बैठा रहा था फिर भी मेरा ध्यान आज के पाठ की ओर नही था । चिगी अगर किसी वाक्य को गलत करती तो मास्टरजी की निगाह मेरी ओर मुड़ जाती और यह देखकर कि नित्य की भांति मै उसे सुधार नही रहा हू, वे दूसरा पाठ पढना आरंभ कर देते । खाने का समय हुआ । पर आज मैं खिन्न मन से खाने पर बैठा । खाना मुझे बिलकुल अच्छा नही लगा। उसमे जरा भी स्वाद नही आया ।

उसी दिन शाम को मै चिगी के साथ बाहर घूमकर कोठी लौटा, तब मेरी नजर सहज ही मास्टरजी के कमरे की ओर गई । उनके कमरे में कभी कोई जाता नही था । इसलिए उस कमरे के विषय की मेरी जिज्ञासा दिन-प्रति-दिन सहज ही बढ रही थी । मास्टरजी अपने कमरे मे किसी को क्यो नही आने देते ? मैंने निश्चय किया कि मास्टरजी भले ही नाराज हो जाए, पर एक बार उस कमरे मे जाकर देखना ही चाहिए कि वहा क्या है ? मै उस कमरे के दरवाज़े के पास जाकर खडा हो गया । दरवाजा खोलने के लिए अरगल को हाथ लगाया और फिर ठिठक गया । मेरे मन मे विचार आया—मेरी इस हरकत पर मास्टरजी कही नाराज तो नही हो जाएंगे ? ऐसा भी लगा कि यह शरारत मुझे क्यों सूझी ? पर दोनों ही विचार मेरे मन से पल-भर मे ही हट गए और मैंने अरगल हटाकर दरवाजा खोला । कमरे में प्रवेश करते ही इधर-उधर न देखकर मैंने दरवाजा भीतर से बंदकर लिया । फिर कमरे में घूमकर चारों तरफ निगाह डाली । जहां-तहां कबाड़ का अंबार लगा था । बहुत-सी छोटी-बड़ी पुस्तकें, एक कोने मे ईंटों की तरह रचकर रखी थी । दूसरे कोने में जाने कितने दिनों का कचरा इकट्ठा कर दिया गया था । बिस्तर किसी भी तरह लपेटकर रखा था ।

भोजन करते समय मैं बीच-बीच मे मास्टर की ओर चोरी-चोरी देख रहा था। वे रोज की तरह आज मेरी ओर नहीं देखते थे और न ही मेरा मजाक बना रहे थे। मुझे रोज की तरह अधिक खाने के लिए आग्रह करना तो उन्होंने आज बिलकुल ही टाल दिया था। इसलिए मुझे पक्का यकीन हो गया कि मास्टरजी मुझ पर नाराज हैं।

मेरा एक नित्य-क्रम था और वह यह कि रात को सोने से पहले मैं बाग मे इधर-उधर घूमता था। आज रात को भी मैं बाग मे पहुंचा और इधर-उधर घूमकर एक पेड के तने से टिककर लेट गया। बाहर चांदनी दूध की तरह छिटकी हुई थी। लेकिन मेरे हृदय में अलबत्ता आज सर्वत्र अंधेरा फैला हुआ था। मराठी की पढाई से तो मैं वंचित हो ही चुका था। अंग्रेजी पढ़ने की मेरी भावी आशा ढह गई थी और आशा के आधार का अंतिम तंतु याने मेरे प्रति मास्टर का प्रेम, वह भी आज मैं खो बैठा था।

विचार करते-करते मेरा मन बहुत बहकने लगा। मेरा आगे क्या होगा, इस एक ही चिंता से मेरे हृदय मे पड़ी हुई ऐंठन से जैसे टप-टप खून चू रहा था। दिमाग बिलकुल सुन्न हो गया था। क्रम-क्रम से विचार करने की शक्ति पंगु हो चली थी। फिर भी विचार करने की बेकाबू प्रवृत्ति मुझे स्वस्थ नही रहने दे रही थी। मुझे लगा विनू अब बी० ए० हो जाएगा। वह कही जज या तहसीलदार हो जाएगा और अन्त में मुझे उसका चपरासी बनने का मौका आ जाएगा। विनू के यहां, अथवा किसी अन्य के यहां सिर्फ चपरासी बनने की ही योग्यता मुझ मे रहेगी। शायद बंबई जाकर किसी मिल मे नौकरी करनी पड़े, अथवा फिर खेती के सिवा दूसरा कोई सहारा नही रहेगा मुझे।

पिताजी तो हमेशा कहते हैं कि खेती से हमेशा पेट नही भरा करता फिर आगे मैं क्या करूंगा? पढ़ाई! लेकिन पढाई कैसे होगी? एक वर्ष की अवधि समाप्त होने के बाद कोल्हापुर जाकर भिक्षा-वृत्ति धारण कर मैं पढ़ सकूंगा क्या? मुझे सरकार के उस दिन के शब्द याद हो आए। 'मराठा भीख नही माग सकता'। इसी अभिमान के कारण अपने से दूर हटाकर पिताजी ने मुझे इस गुलामी मे धकेला है न? उन्हें क्या मैं भारी हो गया था? जिस किसी समय बीच-बीच में वे मुझे मिल

पर लगा देने का अवसर मिला है मुझे।"

"मतलब ?"

"मतलब क्या ? अभी-अभी ही मै सरकार से मिलकर आया हूं।"

"याने क्या कमरे से बाहर जाने के बाद ?"

"नही जी। बिलकुल आज और अभी ही। सरकार के पास सुबह की ही बात फिर निकाली। उनसे काफी चर्चा की उस विषय पर। बहस हुई। परतु हर जगह उनका वह व्यवहार बाधा लाने लगा। मेरी कोई भी दलील उनके व्यवहार की कसौटी पर उतरती नही थी। तब मैंने यह निश्चय किया कि व्यवहारी मनुष्य से बातें करते समय मुझे भी अब व्यवहारी ही बनना चाहिए और उसके अनुसार मै बाते करने लगा। मैंने उनसे कहा, "मैं दिन मे आपका नौकर हू। रात को मैं स्वतंत्र हू। मनोहर की नौकरी कब-से-कब तक है ?" यह पूछते ही वे बोले, "रात के समय तुम उसे स्वतत्र रूप से पढाना चाहो तो मुझे कोई आपत्ति नही। परंतु चिगी की पढाई का समय आप अन्य कामों मे खर्च करें यह मुझे पसद नहीं।" सारांश यह कि तुम्हारी पढाई का प्रबंध हो गया। कल सुबह बिनू के घर जाकर तुम्हारे लिए किताबें ले आता हूं और कल से ही तुम्हें पढाना शुरू कर देता हूं।"

मैंने कहा, "परतु इसके कारण कही आपकी बी० ए० की पढाई मे तो कोई रुकावट नही आ जाएगी ?"

"नही—बिलकुल नही। मेरी बी० ए० की पढ़ाई पहले ही हो चुकी है। अब सिर्फ उसका थोड़ा रिवीजन भर करना है। तुम्हारी पढ़ाई के कारण मेरी पढ़ाई की कोई हानि नही होगी।"

मैने मास्टरजी के कंधे पर हाथ रखकर धीरे-से पूछा, "चिगी से कहा है क्या यह ?"

"इसमें कहना क्या है ? उसी की तो मूल कल्पना है यह। कितनी लड़ी वह सरकार से। पिता और पुत्री दोनों ही बडे पक्के हैं ! लड़ते वक्त कोई भी हार नही मान रहा था। अभी तक उसने खाना नही खाया था। जिद पकड़े बैठी हुई थी। जब यह निश्चित हो गया कि तुम मेरे पास रात को पढ सकते हो तब कही वह जाकर खाने पर बैठी और मैं इधर चला

आया।"

दूसरे दिन रात से मेरी अंग्रेजी शिक्षा आरंभ हो गई।

9

सरकार किसी काम के लिए कोल्हापुर गए थे। सरकार की गैरहाजिरी में कोठी में रहने का मेरा यह पहला ही मौका था। जब वे कोठी में रहते होते, तब सर्वत्र सन्नाटा रहता था। पर आज सब लोग जैसे आजाद हो गए थे। दीवानजी शोरशराबा करके प्रत्येक को अनुशासन में बांधने की कोशिश कर रहे थे, पर कोई भी किसी की परवाह नहीं कर रहा था।

मानाजीराव कोठी का मुख्य अहलकार था। उसका मिजाज आज सातवें आसमान पर चढ़ गया था। यह देखकर कि वह बहुत जोर-जोर से चिल्ला रहा है, दीवानजी ने उसे पुकारा और कहा, "क्यों, चिल्ला रहे हो जी?" मानाजीराव बोला, "चिल्लाऊं नहीं तो क्या करूं? सरकार के जाते ही सबको जैसे स्वराज्य मिल गया है। ऐसा लगता है जैसे सब उनके जाने की राह ही देखते रहते हैं। आज रसोईदारिन नहीं आई इसलिए बायजा-बाई चिल्ला रही हैं। कपड़े धोनेवाले का कहीं पता नहीं। मोट चलाने वाला बीमार पड़ा है। वैसे रसोई बनाने के लिए तो कोई मिल जाएगा। किसी तरह कपड़े भी धुल जाएंगे। पर मोट कैसे चलेगी? मोट चलाने को क्या कोई मेरा बाप आनेवाला है? और आप कहते हैं कि चिल्लाओ नहीं? तो क्या अब आप जाकर मोट चलाएंगे?"

दीवानजी एकदम अपनी गद्दी पर जाकर बैठ गए और चुपचाप हिसाब लिखने लगे। दीवानजी के अनुशासन बनाए रखने की कोशिश बंद हो जाने पर मानाजीराव और अधिक इतरा गया। हर एक को बुलाकर मोट चलाने का हुक्म देने लगा। पर हर एक को कोई-न-कोई काम पहले से था ही। हर एक अपने-अपने काम का बहाना बताने लगा। अब रह गया था सिर्फ मैं। अंत में मुझ पर बारी आई। मुझे वैसे सच पूछा जाए तो काम

कुछ भी नहीं था। चिंगी के साथ घोड़े पर सवार होकर घूमने जाना था। बस।

बायजाबाई चिल्लाईं, "कोई जरूरत नहीं ताई साहब के साथ जाने की। मानाजीराव जाएंगे उसके साथ।"

मानाजीराव बोला, "मन्या, जाओ कुएं पर और मोट चलाओ। कम-से-कम मेरे सामने तो तुम यह बहाना नहीं कर सकते कि तुम्हें मोट चलाना नहीं आता। गणवा के बगीचे में मोट चलाते हुए मैंने कितनी ही बार तुम्हें देखा है।" चिंगी हाथ में चाबुक लिए घूमने जाने की तैयारी से बाहर आई, और मुझसे बोली, "ठहरे क्यों हो—चलो न मेरे साथ मनोबा।" मैंने कहा, "मैं जा रहा हूं मोट हांकने।" चिंगी टेढ़ी गरदन करके चिल्लाई, "क्या?"

मैंने फिर कहा, "मैं जा रहा हूं मोट हांकने।"

चिंगी बोली, "मोटवाले को क्या हो गया?"

मानाजीराव बोला, "मोटवाले को कुछ हुआ हो या न हुआ हो, पर आज मन्या आपके साथ नहीं जाएगा।"

चिंगी ने पूछा, "फिर कौन आ रहा है मेरे साथ?"

मानाजी ने कहा, "मैं चल रहा हूं न आपके साथ।"

चिंगी बोली, "ऐसा? तो आज मैं घूमने ही नहीं जाना चाहती।" चाबुक वहीं फेंककर चिंगी भीतर चल दी। मैं मोट पर जाने के लिए निकल पड़ा। अपनी हुई बेइज्जती को महसूस कर मैं शर्म से बिलकुल गड़ गया था। क्या मैं अपनी निजी मोट नहीं चलाता था? पर वह मेरी मोट थी। वहां मैं किसी का नौकर नहीं था। यहां मैं दूसरे के एक नौकर की हैसियत से मोट चलाने जा रहा हूं। मैं सरकार की लड़की के एक साथी के नाते यहां नौकर हूं। इसी काम के लिए मेरी नियुक्ति हुई है। जो नौकर आज तक मुझे मान देते आए वे ही आज मुझे मोट की ओर जाते देख हंसने लगे। शर्म के मारे मेरे कदम बड़े भारी पड़ रहे थे, आंखों से टपक आनेवाला एक आंसू भी मैंने कुरते की बांह से पोंछ डाला। सामने देखा तो कुएं से नहाकर गीले कपड़ों में मास्टरजी आ रहे थे। उन्होंने मुझसे पूछा, "मनू, रोते क्यों हो?"

रुआंसे चेहरे को हंसता बनाने की कोशिश करता हुआ मैं बोला, "कहां

रोता हूं ?"

वे बोले, "चार आंखों से देख रहा हू मैं। क्या अभी-अभी ही नही आस्तीन से तुमने अपनी आखें पोंछी ?"

"कचरा आ गया होगा आखो मे !"

"ऐसा ? खैर। पर जा कहा रहे हो ?"

"उधर…"

"उधर याने किस तरफ ?"

"कुएं पर।"

"कुएं पर ? किस लिए ? क्या जान देने ?"

"जान देने को नही, बल्कि जान जीने के लिए। नौकर जो हू मैं ! जो हुक्म हुआ है उसे मानना मेरा फर्ज ही है।" अपमान की आग से जलता हुआ मैं भौंहे चढ़ाकर बोला, 'मानाजीराव ने आज मुझे मोट चलाने का हुक्म दिया है।"

"और चिमीताई के साथ कौन जा रहा है ?"

"मानाजीराव जानेवाले थे, पर ताई साहब ने जाने का इरादा ही बदल दिया।"

"सरकार की गैरहाजिरी का अच्छा फायदा उठाया है मानाजीराव ने।" मास्टरजी के शात चेहरे पर क्रोध की छटा साफ दिख रही थी।

मैंने कहा, "अब जाता हू मैं।"

"जाओ बाबा। न जाने ये कैसे चलेगा ? नौकरी ही स्वीकारी है तुमने। सरकार के आने पर जो कुछ भी होना होगा सो तो होगा ही। पर आज उस शैतान ने तुमसे मोट चलवाई यह सच है। नौकरो के हाथ में अधिकार आ जाने से गरीबों की इसी तरह कमबख्ती आ जाती है।" ऐसा कहकर मास्टरजी उसी तरह कोठी की ओर चल दिए।

मैने मोट पर जाकर चुपचाप काम शुरू कर दिया। अपनी मोट पर बैलो को मैं कभी भी नही मारता था। और जो बैल इस समय मेरे सामने थे उन्हें तो मार खाने की आदत पड़ी हुई थी। क्योंकि इन्हें हांकनेवाले आखिर नौकर ही होते थे न। मैं सिर्फ हाथ से टोचकर उन्हे हांकने लगा। जैसे-तैसे काम शुरू हुआ। बिना गाना गाए बैल कदम नहीं उठाते थे। मार

मा गाना, इन दोनों मे से कुछ एक चाहिए हो या उन्हे। मारने की अपेक्षा गाना ही अच्छा, ऐसा अत में मुझे लगा। भगवान का नाम लेकर मन से सारी शर्म हटाकर मैंने मोट का गीत गाना शुरू किया। मेरा गाना सुनकर कोठी के कुछ नौकर खिलखिलाकर हंसते हुए कुएं के पास आकर इकट्ठा हो गए। एक जाकर मानाजी राव को भी बुला लाया। यह देखकर कि मैं गा रहा हू, जोर-जोर से हसता हुआ मानाजीराव बोला, "वाह रे मेरा मोट वाला !"

मेरा मस्तक भन्ना गया। मन में आया कि हाथ मे रखी बारीक छड़ी से चिगी की तरह ही मैं भी इसी समय मानाजीराव की चमडी उधेड़ दू। आग जल रही थी फिर भी मन को बिल्कुल निर्लज्ज करके मानाजीराव की ओर देखकर मैं बोला, "आओ, आओ मानाजीराव, तुम भी मोट का एक गाना कहो।"

यह सुनकर मानाजी क्रोध से बेहोश हो गया। उसने सब लोगों के सामने मेरे मुह पर जोर का एक तमाचा जड दिया। अपमान की कल्पना मैंने अपने मन से कभी की दूर कर दी थी। मैंने दूसरा गाल भी आगे बढा दिया और कहा, "इस गाल पर भी मारो न एक।"

मानाजी का उठा हुआ हाथ नीचे आया। वह झनझनाहट से बोला, "जैसे तुकाराम का अवतार ही है बेटा !" मैंने फिर कहा, "रुक क्यो गए ? मारो न एक और चाटा ?" मानाजीराव ने फिर हाथ ऊपर उठाया। कड़कती हुई बिजली की तरह मेरे कानों में शब्द पड़े—

"मानाजीराव, मनोबा से क्षमा मांगो।"

इस डाट से वह तनिक भी प्रभावित नही हुआ। सिर्फ मूंछें निपोरकर हंसने लगा। वह बोला, "मैं कोठी का अहलकार हूं। जो चाहूंगा करूंगा।"

क्रोध से भन्नाती हुई चिगी बोली, "पिताजी की गैरहाजिरी मे मैं मालकिन हूं। मेरा हुक्म तुम्हे मानना ही होगा।"

मानाजीराव बोला, "मैं बायजाबाई से कहूंगा।"

चिगा बोली, "पहले मनोबा के चरण छुओ और फिर जाओ बायजा-बाई से कहने।"

"मैं ? और इस छोकरे के चरण छुऊं ?"

"किया ही है तुम्हारे लिए। इसमें झूठ क्या है? वह आया तभी मुझे शक हुआ। इसीलिए उसके पीछे-पीछे ही मैं भी निकल पड़ी। खिलखिलाकर हंस रहे थे सभी। सभी को हंटर लगाने चाहिए। अब अच्छी धाक जमेगी सब पर।"

मैं क्षण-भर के लिए स्तब्ध रह गया। क्या बोलूं, यह नहीं समझ पा रहा था मैं। मेरे एक ओर हो जाने के कारण बैल रुक गए थे। उन्हें कोंच कर मैंने काम शुरू किया। मोट के चलते ही मैं पहले जैसा फिर गाने लगा। चिंगी धीरे-धीरे हंसती हुई मेरे नजदीक आकर बोली, "कितना मीठा गला पाया है तुमने, मनोबा? मैं गाऊं क्या तुम्हारे साथ?"

मेरे स्वर में स्वर मिलाकर वह भी मोट का गीत गाने लगी। मैं होश भुला बैठा।। मेरी आवाज अधिकाधिक बढ़ती गई। मुझे स्वयं ही ऐसा लगने लगा कि मेरे गाने के साथ कहीं आसमान तो नहीं नीचे गिर रहा है। मेरे स्वर के साथ चिंगी की आवाज भी चढ़ रही थी। बैलों को भी जाने क्या लगा कि वे जल्दी-जल्दी कदम रखने लगे। निर्जीव मोट बीच-बीच में 'फुस्स' आवाज करती हुई हमारे गाने की ताल दे रही थी। लगा, चिंगी, मैं और मोट, इनके सिवा दुनिया में और कुछ नहीं रहा। इस समाधि को भंग करने के लिए ही जैसे मुझे लगा कि किसी ने मुझे पुकारा। जागती नींद से मैं जागा और ऊपर देखा तो विनू सामने खड़ा था। वह हम दोनों की ओर देखकर हंसता हुआ बोला, "वाह, जोड़ी से मोट चलाई जा रही है।" चिंगी लज्जित होकर गाजर की तरह लाल हो गई और बोली, "यह कैसा बेहूदा मजाक, विनोबा?" विनायक बोला, "मुझे जो लगा सो मैंने कहा।" चिंगी बोली, "तुम्हें क्या लगा?"

विनू बोला, "जोड़ा लगा।"

चिंगी मुंह चिढ़ाकर बोली, "जोड़ा लगा! मैं अब बोलूंगी ही नहीं बिलकुल। लो, मैं चली यहां से।" पीछे मुड़कर देखती हुई हंसते-हंसते वह कोठी की ओर चल दी।

विनू बोला, "यार, तुम्हें बिलकुल तीनों लोक नजर आ रहे होंगे। कितने खो गए थे तुम गाने में। मैंने कितनी आवाजें लगाईं, पर एक भी तुम्हारे कानों नहीं पड़ी—इसका क्या मतलब?"

गलतफहमी हो गई है। मास्टर जी एक देवपुरुष हैं। परिचय के बिना तुम नही जान सकते उन्हे। नाम क्या है तुम्हारे मामा का?"

"सचमुच, यह आश्चर्य है। उनका नाम भी मनोहर ही है। सब लोग उन्हे मन्या बापू कहते हैं।" मुझे मन-ही-मन खुशी की गुदगुदी हुई।

विनू ने मुझे कसकर भुजाओं मे समेट लिया और कुछ भी न बोल आखे पोछता हुआ वह चल दिया। मैं चडोल की तरह फिर गाने लगा। मेरा हृदय आज आनन्द से भर गया था। आंखें पोछते हुए जाने वाले विनायक ने पीछे मुड़कर नही देखा, इसलिए ठीक हुआ वरना मेरा आनंदी चेहरा देखकर सचमुच ही उसे दु ख हुआ होता। बैलों को छोड़ने का समय हुआ। मैंने उन्हे छोड़ा और ले जाकर गोथान मे बांध दिया। उनके सामने घास और कड़बी डाली और कोठी मे गया। सब लोग भोजन कर चुके थे। 'फिर ये दो पीढ़े और दो थालिया क्यों?' यह विचार मेरे मन मे आ ही रहा था कि चिंगी आकर एक पीढ़े पर बैठी। एक शब्द भी न बोल हमने भोजन समाप्त किया।

बरामदे मे आकर मास्टर जी के कमरे मे झाककर देखा। वे बैठक पर बैठे हुए कुहनी टिकाए कुछ लिख रहे थे। मैंने दबे पांव कमरे मे प्रवेश किया और उनके पीछे खड़े होकर कागज पर लिखा हुआ शीर्षक पढ़ा—'मोट की बालिका के प्रति।' झुककर पढ़ते समय मेरी गर्म सास शायद उनके कानों को लगी। उन्होंने झट-से पीछे मुड़कर देखा, और जल्दी-जल्दी कागज समेटकर उसे फाइल के भीतर रखकर वे मुझसे बोले, "अरे शैतान, चोरी से पढ़ते हो?"

मैंने कहा, "गलती हो गई मास्टरजी। कृपा कर क्षमा कर दीजिए।"

मास्टरजी ने नजदीक ही रखी हुई एक पुस्तक खींची और गंभीरता से वे उसे पढ़ने लगे। मैं उसी तरह उनके निकट खड़ा था। मेरे मन में विचार आने लगे—'मोट की बालिका के प्रति' याने क्या? कुछ समय पहले चिंगी मेरे साथ मोट चला रही थी। उससे इस शीर्षक का कोई संबध है क्या? घटी घटना को मास्टर जी कही लिखकर तो नही रख रहे हैं? मैं जैसे-तैसे अपने मन को समझाने का प्रयत्न कर रहा था। परंतु 'मोट की बालिका के प्रति'—इस शीर्षक का रहस्य उस समय उद्घाटित

नहीं हो पा रहा था। एक बार मन मे आया कि मास्टरजी से पूछू। पर मन को फिर रोक लिया। मास्टरजी पढ़ रहे थे। मैंने सहज नीचे झांककर देखा तो मुझे दिखाई दिया कि वे पुस्तक को उल्टी पकड़े हुए है। मास्टरजी ने जल्दी-जल्दी फाईल खोलकर उसमे के एक कागज पर दो-चार सतरें घसीटी। आढ़ी-टेढ़ी गरदन करके लिखी हुई सतरों को उन्होंने पढ़ा और अपनी ही जांघ पर चपत मारकर अपने आपसे ही बोले, "वाह ! बिलकुल ठीक जमा।"

मैंने पूछा, "क्या जमा ?"

तुम्हारा गाना और मालाजी राव का रोना।"

"शायद वह सारी घटना लिखकर रख रहे है आप ?"

"हां, यही कहो न।" इस उत्तर से अपने मन का संतोष कर लेकर मैंने कहा, "मास्टरजी, अपना चश्मा जरा मुझे दीजिए।" उन्होंने अपना चश्मा उतारकर मेरी आंखों पर चढ़ा दिया। सामने पडी हुई पुस्तक को उसी तरह उल्टी पकडकर मैंने देखने की कोशिश की—चश्मे मे अक्षर स्पष्ट दिखते नही थे। फिर भी अंग्रेजी अक्षर उलटे हैं या सीधे इतना समझ सकने लायक अक्षरो से मेरी पहचान दृढ हो चुकी थी। मैंने चश्मा उतार कर मास्टरजी की आखो पर लगा दिया और पुस्तक उसी तरह उनके आगे पकड़कर कहा, "अब पढ़िए जरा।"

वे बोले, "अरे गधे पुस्तक उलटी पकड़ी है न।" मैंने कहा, "कुछ समय पहले आपने भी इसी तरह पकडी थी। मुझे उस समय लग लगा कि चश्मे से पढ़ने के लिए पुस्तक शायद उल्टी पकड़नी पड़ती है। इसलिए मैंने जान-बूझकर चश्मा लगाकर देखा, तब अक्षर उलटे ही दिखे।"

"किताब उलटी पकड़ोगे तो अक्षर उलटे दिखेंगे ही।"

"फिर आप उन्हें किस तरह पढ़ सकते थे ?"

"मैं पढ़ ही नही रहा था।"

"ऐसा ?" मैंने जैसे-तैसे अपने मन को समझा लिया। मास्टरजी कुछ भी नही बोलते थे। वे कुछ बोलें इस उद्देश्य से मैंने कहा, "मास्टरजी आप ईसाई हैं क्या ?

"हंसते-हंसते वे बोले, "नही।"

मैंने पूछा, "फिर आपकी चोटी कहां गई ?"

"बी० ए० होने की कैंची मे कट गई।" मैं इसमें का एक भी अक्षर नहीं समझ पाया। बी० ए० होने की वह कैंची कैसी और उसमे चोटी कैसे कट जाती है ? मन में यह सोचकर कि अभी ये बातें मेरी समझ में नही आएगी, मैंने उनसे पूछा, "मास्टरजी आप धर्मभ्रष्ट है क्या ?"

"तुम्हें कैसे पता चला ? वैसे ऐसी बातें दूसरा कौन तुमसे कहेगा ? मै धर्मभ्रष्ट नही हू और होऊंगा भी नही। हिंदू धर्म कोई सिर्फ चोटी में ही नहीं समाया है। हिंदू धर्म के प्रति सच्चा अभिमान इन चोटी वालों की अपेक्षा मैं ही अधिक रखता हू। धीरे-धीरे मैं ये सब बातें तुम्हें समझाकर बताऊंगा। उस समय आप ही आप तुम्हें मालूम हो जाएगा। कुल मिला कर ऐसा लगता है कि जाते समय विनू तुमसे मिलने आया था शायद ?"

"हा,। उसकी छुट्टी खत्म हो गई, इसलिए मुझसे विदा लेने आया था।"

"मुझसे मिल लेता तो बड़ा अच्छा होता। पर आखिर उसका भी क्या अपराध ? सभी ने मेरे विरुद्ध जेहाद छेड रखा है। ऐसे समय यदि उसको भी लगा कि मैं धर्मभ्रष्ट हू तो कोई आश्चर्य नही।"

"मानाजीराव कहा है ?"

"कोठी का ही आदमी है वह। जैसा गुस्सा हुआ था उसी तरह शांत हो गया। मेरा ख्याल है कि सरकार के आने तक वह हुई घटना को भूल भी जाएगा।"

और हुआ भी यही। सरकार के आने के बाद मानाजीराव ने उनसे कोई शिकायत की ही नही। मोट पर के कुरुक्षेत्र का सारा हाल किसी अन्य ने भी सरकार के कानों मे नही पहुंचाया।

10

मास्टरजी का स्नेह प्राप्त हो जाने के बाद से मेरे दिन अत्यंत आनंद मे

चीत रहे थे। पिताजी से कभी-कभी मेरी भेंट हो जाया करती, और जो घटनाएं कोठी में इस बीच घटी होती उनका हाल मैं उन्हे सुनाया करता। मोट पर घटी घटना के वाद से सभी लोगो पर मेरी अच्छी धाक जम गई थी। मुझे दोष देने का कोई भी साहस न करता, और मास्टर जी पर पूर्ण विश्वास होने के कारण सरकार भी हम लोगो के वारे मे विशेष पूछताछ न किया करते।

मास्टरजी का साथ ज्ञान का स्रोत था। सांयकाल के समय हम दोनो को साथ लेकर वे नदी किनारे घूमने जाया करते। उस समय वे हमें पुराणों और इतिहासों की ऐसी कितनी ही कथाएं सुनाया करते जिन्हे हमने पहले कभी नही सुना था और जो आजकल के लडको को किसी से कभी भी सुनने को नही मिलती। उनकी उन कथाओं के कारण रामायण, महाभारत और वैष्णव संतों के अनेक कथानक हमे विना पढे ही अवगत हो गए थे। मरहठों और पेशवाओ के इतिहास की कितनी ही बातें उन्होने हमें सुनाई थी और उन्ही के अनुरोध से इंग्लैंड के इतिहास की भी हमे बहुत-सी जानकारी प्राप्त हो गई थी।

उनकी इस सहज शिक्षा से हम उस समय के अन्य किसी भी हमउम्र लड़कों की अपेक्षा कितने ही गुने बहुश्रुत हो गए थे। वे हमे सिर्फ कहानिया ही सुनाया करते थे यह बात नही। बल्कि सुनाई हुई कहानियो को बीच-बीच में हमसे दोहराई करा लिया करते और उनमे हमारी कोई गलती होती तो वे उसे सुधार देते थे। कभी-कभी कोठी के नौकरो तथा कर्मचारियो को रात के समय एकत्रित करके उनके सामने हमसे उन कथाओ और कहानियों को उन्हे सुनवाने का कार्यक्रम नियोजित करते। सरकार भी बीच-बीच मे ऐसे कार्यक्रमों मे हाजिर रहते। इस तरह एक प्रकार से हमें दी गई शिक्षा की परीक्षा ली जाया करती। ज्ञानार्जन का यह समय बडे आनद मे व्यतीत हुआ। बहुत दिनों से विशेष उल्लेखनीय ऐसी कोई भी बात नही हुई थी। जीवन के क्षण इस प्रकार जब बिलकुल सुख और संतोष मे जाने लगते तब मैं उद्विग्न हो जाया करता।

आज मेरी यही स्थिति है। प्राय: सभी को यह लगा करता है कि उसका जीवन बिना किसी कष्ट के सुख और संतोष में बीते। परंतु मेरी

बात ऐसी नही थी । हमेशा विचार-लहरो में डूबने-उतराते रहने का मुझे एक प्रकार का व्यसन ही हो गया था और इस प्रकार की विशेष ऐसी कोई घटना न घटी तो मुझे विचारो से सिर खपाने का अवसर न मिलने के कारण मैं उस सुख के कारण ही दुःखी हो जाता । सुख के ऐसे उबा देने वाले काल मे कुछ महीने व्यतीत हो जाने के बाद एक दिन एक विशेष घटना हुई। मास्टरजी का स्वास्थ्य ठीक न होने के कारण वे आज अपने कमरे मे लेटे हुए थे। उनकी दवादारू का प्रबध करके मैं शाला के कमरे में जाकर बैठा और मापातर पाठमाला के प्रश्नों के उत्तर लिखने लगा। उस दिन किसी भी तरह पढाई की ओर मेरा ध्यान ही नही लग रहा था। पुस्तक एक तरफ फेंककर छत की ओर नजर लगाए तकिया से टिककर मैं गद्दी पर लेट गया । कमरे मे बैठक के लिए दो ही गद्दे और दो ही तकिए थे, यह मैं पहले कह ही चुका हू। मैं इन गद्दों पर कभी नही बैठता था । पर आज जाने मुझे क्या सनक आई कि मैं चिंगी के गद्दे पर बैठा और उसके तकिए से टिककर लेट गया। मास्टरजी की गद्दी पर बैठकर उनकी बेइज्जती करने का काम मुझसे कभी न होता। वे गद्दे और तकिए कमखाब के थे और उनमे भरा हुआ कपास अत्यंत मुलायम था। उस गद्दे के स्पर्श से मुझे गुदगुदी हो रही थी। अनुभूत कल्पनाएं मेरे मस्तिष्क मे खेलने लगी। मुझे कभी-कभी ऐसा लगा करता कि क्या विचारो को नचाने की मेरी शक्ति नष्ट हो गई है? पर अब वह भ्रम दूर हो गया। महज गद्दी के स्पर्श के कारण मैं अमीरी के किले हवा मे बनाने लगा। उन किलो के स्वामित्व मे मेरे साथ भाग लेने वाले जिस दूसरे व्यक्ति को मैंने अपनी कल्पना-सृष्टि मे खडा किया, उसे देखते ही मैं स्वयं ही चकित रह गया। मेरा यह पागलपन मेरे दिमाग से जाएगा नही क्या?

मास्टरजी के एक दिन के उद्‌गार याद हो आये—'चिंगी का जीवन रानी होने के लिए सुरक्षित रखा गया है।' अपने नजदीक चिंगी की मूर्ति को निर्मित करने में मैं कही पाप तो नही कर रहा हूं? यह विचार भी एक क्षण के लिए मेरे मन मे आ गया। विचारो की दिशा को मैंने उलटा मोड दिया। जब कल्पना की दुनियां मे ही विचरण करना है तो फिर मन-चाहा मनोराज्य रचने मे क्या हर्ज है? मैंने राजा का ही मनोराज्य रचा।

कथानक शुरू हुआ—

मेरे पिताजी बरामदे में बैठे हैं। इसी समय एक बड़े सरदार काफी लवाजमे के साथ हमारे दरवाजे के सामने आकर खड़े हो गए। पिताजी ने उनका स्वागत किया। उनके लवाजमे के लिए बड़ा स्थान हमारी झोंपड़ी में न होने के कारण सहन के उसपार वाले खेत में उन्होंने अपने डेरे गाड़े।

मुख्य सरदार सहन में रखी खाट पर आकर बैठे। पिताजी और उनमें जो बातचीत हुई उससे मुझे यह पता चला कि वे एक बड़ी रियासत के अहलकार थे। उनके महाराज निस्संतान होने के कारण गोद लेने के लिए वे एक लड़के की तलाश में निकले थे। किसी ने उन्हें मेरा नाम सुझाया था और इस कारण वे पिताजी के पास जान-बूझकर आए थे। पिताजी से उनकी बातचीत शुरू हुई और पिताजी ने मुझे बुलाकर उनके सामने खड़ा कर दिया। वे सरदार बोले, "आज तक जितने लड़के मैंने देखे उन सब में यह लड़का मुझे पूर्ण रूप से पसंद है। आपकी स्वीकृति हो तो इसे लेकर मैं राजधानी जाता हूं और महाराज को दिखा देता हूं। चाहें तो आप भी हमारे साथ चलें। बालक की जन्म कुण्डली हो तो लाकर मुझे दिखा दीजिए।"

पिताजी ने मेरी जन्मपत्री लाकर सरदार के हाथ में दी। जन्मपत्री देखते ही सरदार के मुंह से आश्चर्य का उद्‌गार निकल पड़ा। वे बोले, 'पत्रिका में प्रत्येक स्थान पर राजयोग है। बस, तय हो गया। यही लड़का गोद लिया जाएगा।'

प्रत्येक स्थान पर राजयोग, याने क्या, यह मैं बिलकुल ही समझ नहीं पाया। परंतु ऐसी ही कल्पना मेरे दिमाग में क्यों आई थी, यह रहस्य आज भी मेरे लिए एक पहेली बना हुआ है। सरदार ने एक कीमती पोशाक मुझे पहना दिया। एक नौकर ने शीशा लाकर मेरे सामने पकड़ा। मैं अपना प्रतिबिंब देखकर बेहद खुश हो गया। पिताजी भी बोले, "सचमुच ही रे, तू बिलकुल राजकुमार दिखता है इस पोशाक में।"

सरदार पिताजी की चापलूसी करने लगे, ताकि वे किसी तरह अपनी स्वीकृति प्रदान कर दें। पिताजी की चापलूसी करते-करते आखिर किसी तरह सरदार ने पिताजी की स्वीकृति प्राप्त कर ली। यह देखकर कि सब

कुछ जुड रहा है, मैं एकदम आगे बढ़ा, और सरदार से बोला, "मेरी अपनी भी एक शर्त है।" सरदार स्तंभित हो गए। पर वे चुप थे। मुझे लगा कि वे शायद यह सोच रहे होंगे कि मेरी शर्त कोई बचकानी अथवा न पालन करने योग्य होगी, इसीलिए वे नहीं बोल रहे हैं। मैंने फिर कहा, "मेरी शर्त यदि तुमने स्वीकार नहीं की तो मैं कहीं भी फरार हो जाऊंगा।" सरदार ने पूछा, "क्या महज एक शर्त के लिए तुम एक रियासत की गद्दी को ठुकरा दोगे?"

मैं विचार करने लगा, "जब एक मामूली जमीदार के घर की गद्दी इतनी मुलायम होती है, तब रियासत के राजा की गद्दी कितनी ही अधिक मुलायम और विलक्षण होती होगी। मुलायम गद्दी का मोह बेकाबू हो उठा, फिर भी मैंने अहलकार से कहा, "मेरी शर्त कोई बहुत बड़ी नहीं है। उसका आप आसानी से पालन कर सकेंगे।"

अहलकार द्वारा शर्त के पूछते ही मैंने उत्तर दिया, "आबा साहब जमीदार की चिंगी को मेरी रानी बनाओ, तभी मैं गोद जाने को तैयार हूं, वरना नहीं।" अहलकार बोले, "बस, इतनी ही बात? तो चलो, अभी चलकर उससे तुम्हारी सगाई कर देते हैं। उस राजसी पोशाक में ही उसने मुझे हाथी की अम्बारी मे बिठाया। हमारे कोठी के दरवाज़े के सामने पहुंचते ही सरकार ने आगे बढ़कर अदब से मुझे मुजरा किया। अबारी से नीचे उतरते ही मेरे पैरों पर सिर रखकर उन्होंने प्रणाम किया मुझे। मास्टरजी बोले, "आखिर मेरी भविष्यवाणी सच हुई। मेरा मनोहर राजा हो गया।" मैंने मन-ही-मन जोशी के विनायक को अपना प्रधानमंत्री बनाने का निश्चय किया। मेरा हाथ पकड़कर सरकार मुझे शाला के कमरे मे ले गए और चिंगी की उसी मुलायम गद्दी पर उन्होंने मुझे लिटा दिया। सगाई के समारोह की तैयारियां आरंभ हुईं। 'सगाई' यह शब्द ही मुझे मालूम था। सगाई का समारोह कैसा होता है यह मैंने कभी देखा नहीं था। इस कारण मेरी कल्पना-सृष्टि में सगाई के समारोह का वर्णन नहीं दिया जा सकता था।

नजदीक बैठी हुई चिंगी की ओर मुड़कर मैंने हौले-से कहा, "सखी चिंगी, तुम अब मेरी रानी होगी। रियासत की गद्दी इस गद्दी की अपेक्षा

आवा साहब की लडकी से तुम्हारी शादी करने को राजी न होता तो तुम क्या करते ?"

मैंने उत्तर दिया, "रियासत की गद्दी को ठोकर मार देता।"

वह बोली, "सच ?"

मैंने उसके गले पर हाथ रखकर कहा, "तुम्हारी कसम !"

उसने फिर पूछा, "गद्दी क्यो ठुकरा देते ?"

"क्यों" का क्या मतलब ? तुम्हारे बिना राजा बनने मे क्या अर्थ है ?"

"वैसे राजा बनते नही बनता था शायद ?"

"राजा बनता तो बन सकता था, पर तुम्हारे बिना राजा बनने में क्या अर्थ ?"

और मान लो मै ही रानी बनने को राजी न होऊं तो ?"

"सिर्फ रानी बनने को, या कि मेरी रानी बनने को ?"

"याने यह मानकर चलना चाहिए कि तुम राजा हो।"

"तुम्हारे ही लिए तो मैं राजा होने वाला हू।"

"और मुझे रानी बनने की इच्छा न हो तो ?"

"तो मैं भी राजा नही होऊगा।"

कुछ समय तक कुछ भी न बोल हम स्तब्ध थे। चिगी के नजदीक गद्दी पर बैठने मे मेरे हाथ मे बेअदबी हो रही थी, इसका मुझे होश नही रहा। कुछ देर सोचकर चिगी बोली, "याने तुम्हें जो राजा होना है सो सिर्फ मेरे लिए ही, यही न ?"

"याद है उस दिन मास्टरजी ने क्या कहा था ? तुम राजा की रानी बनो ऐसी आवा साहब की इच्छा है और इसी उद्देश्य से तुम्हे शिक्षा देने के लिए उन्होंने मास्टरजी से कहा है।"

"मास्टर मूर्ख हैं और आवा साहब मे भी अक्ल नहीं।"

"ऐसा नही कहना चाहिए।"

"क्यों नहीं कहना चाहिए ? मैं क्या बनू, यह निश्चित करने का किसी को क्या अधिकार ?"

"तुम तो बिलकुल किसी प्रौढा की तरह बोल रही हो।"

"मैं हू ही प्रौढा। तुम शायद नही जानते ? मेरी मा मुझे बचपन मे ही

काटकर वह बोली, "मैं क्या कह रही हू इस ओर तुम्हारा ध्यान है क्या ? या कि जागते मे स्वप्न ही देख रहे हो ?" मैं झेंपकर बोला, "सच बताऊं ? बहुत देर तक तुम्हारी बातों की ओर मेरा ध्यान ही नही था। मैं कुछ और ही सोच रहा था।"

उसने पूछा, "क्या सोच रहे थे ?" मैं उत्तर न देकर स्तब्ध रहा। उसने फिर पूछा, "काहे का विचार कर रहे थे ? बताओ न ?" अब उत्तर दिए बिना चारा ही न था। मेरे मन मे आए हुए सारे विचार मैंने उससे कह दिए। अभिमान का हास्य करती हुई वह बोली, "मै किसी प्रौढा की तरह बोलती हू ऐसा सभी लोग कहते है। तुम्हे भी यही लगता है क्या ?"

मैंने कहा, 'ऐसा कहने मे कोई हर्ज नही।"

"दस वर्ष की लडकियो को क्या इतनी भी अक्ल नही होती ?"

"नही होती।"

"आश्चर्य है ! इसलिए जो यह कहा जाता है कि मै प्रौढा जैसी बोलती हू सो ठीक ही है। बचपन से खेलने के लिए मेरे पास कोई साथी नही था। हमेशा बडो मे रहा करती। उनसे क्या बतियाती ? इसलिए मैं अकेली ही बैठकर अपने मे विचार करती रहती।" मैंने एकदम चौककर उसकी ओर देखा, तब वह बोली, "चौके क्यों ?" मैं बिलकुल कांपते स्वर मे बोला, "मेरी भी यही आदत है।" भौहे चढ़ाकर वह बोली, "सच ? इसीलिए हम दोनों का इस तरह जमता है।" मैं कुछ भी उत्तर न देकर स्तब्ध रहा। एक क्षण बाद अपने दोनो हाथ मेरे कंधे पर रख मेरी ओर टक लगाकर देखती हुई सिंगी बोली, "मैं एक ही बात पूछती हू। मजाक न बनाना। जो सच हो वही बताना, समझे ?" मैंने हसकर अपनी सहमति दर्शाई। उसने फिर पूछा, मान लो कल मेरे बड़ी हो जाने पर मेरी शादी किसी राजा से हो गई तो तुम्हे क्या लगेगा ?"

मैंने निश्चय के शब्दों मे उत्तर दिया, "मुझे लगेगा कि मैं अपने प्राण दे दू।" कधे पर से हाथ न हटाकर ही उसने पूछा, "और दूसरे किसी पुरुष से मेरी शादी हो गई तब क्या लगेगा ? याने किसी सरदार से या जमींदार से ?" मैंने कहा, "सब प्रश्नों का उत्तर एक ही है।" उसने पूछा, "क्यो ?" मैंने लड़खड़ाती जीभ से जवाब दिया, "क्यों, यह मैं नही कह

सकता।"

मेरे कंधे पर से हाथ हटाकर उसने सिर्फ मेरी ओर देखते हुए पूछा, "और मैं तुम्हारी पत्नी हो गई तो ?" गद्‌गद् होकर आंखों से टपकनेवाले दो आंसुओं से ही मैंने उत्तर दिया! उसका कंठ भर आया था। उसी तरह कांपती आवाज मे वह बोली, "हो जाए तो अच्छा ही है।"

मैं तड़ाक से उठकर पीरासन लगाकर बैठ गया और उसका हाथ पकड़ कर अत्यंत उत्कंठा के स्वर में उससे पूछा, "सच! चिंगी, सच! सच ?"

वह आंखों से आंसू बहाती हुई बोली, "बिलकुल सच। ईश्वर की सौगंध! बाबा साहब की सौगंध! मेरी स्वर्गवासिनी मा की सौगंध!"

नशे से बेहोश हुआ जैसा होकर मैं भी बोला, "बिल्कुल ईश्वर को साक्षी करके कहता हू कि शादी करूंगा तो तुम्ही से, वरना आजन्म शादी ही नहीं करूंगा।" चिंगी ने एक बार ऊपर देखा, और फिर निगाह जमीन की ओर मोड़ ली। स्त्री जाति की स्वाभाविक लज्जा से उसका चेहरा आरक्त हो गया था। उसने अपना निचला होंठ दांतों से दबाया, जीभ से होंठ गीले किए और उसी तरह नीचे निगाह किए हुए मुझसे पूछा, "और विवाह होने से पहले ही यदि मैं मर गई तो ?" मैंने दृढ निश्चय के स्वर में कहा, फिर मैं किसी से शादी ही नही करूंगा।" यह देखकर कि वह कुछ आगे कहने का प्रयत्न कर रही है मैंने उसे रोककर, कहा, "भगवान ने शायद मुझे ही पहले मौत दी तो तुम पूर्ण स्वतंत्र हो। मेरी तरफ से तुम पर कोई बंधन नही।"

उसने मेरा हाथ पकड़ा। कुछ बोलने के लिए उसके अधर फड़फड़ा रहे थे। विलक्षण आदर और प्रेम की नजर से उसने मेरी ओर देखा। मेरा हाथ छोड़ दिया और झट-से वह कमरे से बाहर चल दी।

मेरी क्या स्थिति हो गई थी, इसका वर्णन मेरी आज की प्रौढ़ा बुद्धि भी नही कर सकती। प्रौढ़ावस्था की पराई नजर से जब मैं उस प्रसंग की याद करता हूं तो आज मुझे रोमांच आ जाते हैं। उस अनजान किशोरावस्था के निर्विकार बालक-बालिका की शपथें जब याद आती हैं तो मुझे आज भी सकौतुक आनंद होता है। उस समय मेरी क्या स्थिति हुई थी इसका यथा-तथ्य चित्र मैं आज किन्ही भी शब्दों मे चित्रित नही कर सकता। चिंगी ने

ऐसी शपथें क्यों ली इसका कारण हालांकि उस समय मुझे मालूम नहीं हुआ था फिर भी अपने प्रति उसके इस आकारमय प्रेम का स्वरूप देखकर उस समय की मेरी बालबुद्धि के अनुसार मैं उसका दास हो गया था। कितनी ही देर उस स्थान पर मूढ़ जैसा उसी तरह मैं बैठा रहा था। मेरा हाथ पकड़ कर उसे छोड़ देने के समय की चिंगी की मूर्ति मेरी निगाहों के सामने से हिल नहीं रही थी। ग्यारह वर्ष के सभी बालकों की मनोवृत्ति इसी प्रकार होती है क्या, यह मैं नहीं जानता। परन्तु मेरी अलबत्ता ऐसी हो गई थी यह सच है। आगामी जीवन में मुझे हमेशा दुख में ले जाने का कारण होने वाली भावप्रवणता का बीज इसी दिन जम गया। बार-बार वे शपथें मुझे याद आ रही थी और उन यादों के कारण मेरे हृदय में हर्ष के उबाल पर उबाल आ रहे थे।

11

एक-दो दिन बाद मास्टरजी का स्वास्थ्य ठीक हो जाने पर नित्य की तरह पढ़ाई का काम फिर शुरू हो गया। चिंगी की पढ़ाई होते समय मैं हमेशा की तरह शाला में जाकर बैठ जाता, सुने हुए पाठ को दोहराया करता और हमेशा की तरह चिंगी की भूलों को सुधार दिया करता था। वह भी हमेशा की तरह मुझसे हंसती-खेलती और खुलकर बातें करती थी। परन्तु हम दोनों ने ऐसा कोई आचरण नहीं किया जिससे किसी के ध्यान में यह आ जाता कि इस बीच हम दोनों में कोई विशेष बात हुई है। जैसे वह घटना कभी हुई ही नहीं और अगर हुई थी तो भुला दी गई है।

मास्टरजी और मैं—दोनों ही लगभग एक ही समय कोठी छोड़कर जाने वाले थे। मास्टरजी मुझ से कोई पन्द्रह दिन पहले चल देने वाले थे। उन्हें जाने के लिए अब केवल पंद्रह दिन रह गए थे।

जैसे-जैसे उनके बिछोह के दिन नजदीक आने लगे, वैसे-वैसे मेरा मन अधिक उद्विग्न होने लगा। उनको ही मैं अपना मां-बाप समझने लगा था।

उनके प्रेम के आगे पिताजी का स्वाभाविक प्रेम भी मुझे फीका लगने लगा।

पिताजी ने मुझे जन्म दिया था। पर मास्टरजी से मुझे जिंदगी मिली थी। विचार करने की मेरी बेकाबू वृत्ति पर उन्होंने रोक लगा दी थी और बहुत-सा ज्ञान देकर मेरे मन की दिशा बदल दी थी। मन में कल्पना की व्यर्थ उडानें भरना मैंने छोड दिया था और विचार-तरंगों में स्थिरता लाने का मैं प्रयास करने लगा था। कल्पना की अपनी इन उड़ानों के बारे में समय-समय पर मैं जब मास्टरजी से कहता तब उन्हें सुनकर वे कहा करते, "तेरे इस बावलेपन का मुझे बड़ा लाभ होता है। इस प्रकार की जो-जो भी कल्पनाएं तेरे मन में आवें वे सब उसी समय तू मुझे बता दिया कर। उन पर अच्छी चमक देकर मैं उनमें नया काव्य निर्मित करूंगा।"

एक दिन सहज तीसरे पहर मैं मास्टरजी के कमरे मे गया। समाचार पत्रों के लेखों से काटे गए टुकड़ो को वे एक फाईल चिपका रहे थे। उन में के कुछ टुकडे मुझे देकर मुझसे उन्हे पढने को कहा। टुकडे चिपकाते हुए वे बीच-बीच मे मेरी ओर देखते और लेखों को पढते समय मेरे चेहरे पर होने वाले असर को देखकर मन-ही-मन खुश हो रहे थे। उन लेखो को पढ़कर मैं आश्चर्यचकित हो गया। एक प्रसिद्ध समाचार पत्र ने तो ऐसा लिखा था कि "कवि मनोहर एक असाधारण प्रतिभाशाली कवि है। उसकी 'मोट की बालिका के प्रति' यह एक ही कविता साहित्य-क्षेत्र में उसका नाम अजर-अमर कर देगी।"

मास्टरजी बोले, "पढ़ लिया बेटा, ? देखा, माता जी ने हम पर कितने उपकार किए हैं ? उस दिन वह तुम्हे मोट चलाने को न भेजता तो यह कविता ही न लिखी जाती और इस कविता के बिना महाराष्ट्र मेरे नाम का इतना ढिंढोरा भी न पीटता ! आगरकर के 'सुधारक' मे के अवतरण तुम ने अभी-अभी ही पढे है न ? भाग्य चाहिए आगरकर से ऐसा प्रशंसा-पत्र प्राप्त करने के लिए ! सचमुच तुम दोनो बच्चों ने मुझ पर बडे उपकार किए हैं।"

मैंने कहा, "यह क्या कह रहे है मास्टरजी ?"

उन्होंने मेरे सिर पर प्यार भरी एक चपत मारी, और कहा, "चुप गधे ! मास्टर के शब्द पर प्रतिशब्द नही कहना चाहिए।" मैं हंस पड़ा और

चुप रह गया। टुकड़ों को चिपकाते हुए मास्टरजी कहने लगे, "आज से पन्द्रह दिन बाद मैं चला जाऊंगा। फिर हम कभी मिलेंगे या नहीं, कौन जाने ? पर तुझसे मुझे प्रेम हो गया है। इस कविता के कारण नहीं, बल्कि इससे पहले ही। मैं हूं ऐसा अकेला, रिश्तेदारों ने मुझे अलग फेंक दिया है भाई-बहनों के प्रेम से वंचित हो गया हूं। भिखारी की तरह दुनिया में घूम रहा हूं। मेरे लिए कहीं कोई ऐसा स्थान नहीं जिसे मैं अपना कह सकूं। आगरकरजी के मतों का मैं समर्थन करता हूं। उनको मानता हूं। इसलिए सब ने मुझे धर्मभ्रष्ट करार दे दिया है। मन्या, मैं तुझसे एक ही बात कहना चाहता हूं। अभी से तुम आगरकरजी के लेख पढ़ते जाओ। आज वे तुम न समझ सको, तब भी कोई हर्ज नहीं। सिर्फ पढ़ते हो। मैं तुम्हें 'सुधारक' के अंक भेज दिया करूंगा। उन्हें पढ़ो और सुरक्षित रखे रहो। कह नहीं सकता क्यों, पर तेरे कल्याण के लिए मेरा मन तड़पने लगता है। अभी तक तुम्हारी इतनी तैयारी हो ही गई है कि तुम किसी भी अंग्रेजी शाला की चौथी कक्षा में मजे से बैठ सकते हो। तुम कोल्हापुर ही जाना। मेरे एक सहपाठी वहां की अंग्रेजी शाला में शिक्षक हैं। उनके जरिए मैं तुम्हारा सारा प्रबंध करवा दूंगा। खर्च की चिंता मत करना। कोल्हापुर के शिक्षकों से मैं तुम्हारी सब प्रकार की व्यवस्था करा दूंगा।"

अभिमान से फूलकर मैंने कहा, "मैं मराठा हूं, मास्टरजी। शिक्षा के लिए भी मैं किसी से भीख नहीं मांगूंगा।"

मास्टरजी बोले, "सच है ! सच है, पर तुम से कहता कौन है कि भीख मांगो। तुम्हारा इंतजाम हो जाएगा।"

मैंने कहा, "कोल्हापुर के महाराज से कहकर मेरा प्रबंध करने वाले हैं आप शायद ?"

"ऐसा पागलपन मैं हरगिज नहीं करूंगा।" मास्टरजी बोले, "ये सारे महाराजा बिलकुल बेकार होते हैं। अपनी सनक के मुताबिक वे दान-धर्म करते हैं। दान कहां उचित है और कहां अनुचित है इसका वे कतई विचार नहीं करते। चोरों की झोली भर देंगे और जरूरतमंदों को भूखों मार डालेंगे, ऐसे होते हैं ये राजे महाराजे ! तुम अगर किसी राजा से मदद मांगने जाना चाहोगे तो वहां तुम्हें मैं हरगिज नहीं जाने दूंगा।"

"फिर कैसा इंतजाम करेंगे मेरा आप ?"

"यह पूछताछ करने की तुम्हे क्या जरूरत ?"

मैंने जोर से जमीन पर मुट्ठी पटक कर कहा "नही। मुझे पहले यह मालूम होना ही चाहिए कि आप मेरा इंतजाम क्या और किस तरह करेंगे ?"

मास्टरजी मुह बनाकर बोले, "गधे हो तुम।"

मैंने कहा, "सो तो हूं ही। इसलिए तो दुलत्ती झाड रहा हू।"

मास्टरजी हैरानी के स्वर मे बोले, "कैसे नटखट लड़के हो तुम भी ! सुनो, तुम्हे एक राज़ बताता हू—पर नही, बताने मे कोई अर्थ नही ! मुझ पर विश्वास रखो। और मैं जो व्यवस्था कर रहा हू उसके अनुसार काम करो बस !"

मैंने फिर जोर देकर कहा, "आप क्या व्यवस्था करने वाले हैं यह मुझे मालूम होना ही चाहिए।" वे कुछ देर तक स्तब्ध रहे। फिर एकदम मेरा कान उमेठकर और प्यार से मेरे गाल पर एक चपत मारकर बोले, "कैसे शैतान हो जी तुम मन्या ? ठीक है। तुम्हारी इच्छा ही पूरी हो जाने दो। सुनो। पर किसी से कहना नही। मैं स्वय ही तुम्हारा सारा प्रबंध कर देने वाला हू।"

मैंने गंभीरता से पूछा, "क्या आप ही मेरे खर्च के लिए पैसे भेजेंगे ?"

मास्टरजी घुमा-फिराकर उत्तर देने के लिए बोले, "कोल्हापुर के खरे मास्टर के पास तुम रहोगे। उन्ही के घर खाओ-पिओगे। तुम्हे अपने पास पैसे रखने की जरूरत नही पड़ेगी। जब पैसो की जरूरत पड़े तब उन से मागकर अपना काम कर लिया करना। छुट्टियो में तुम्हे घर भेजने का इंतजाम भी वही करेंगे।"

मैंने फिर पूछा, "याने मेरा सारा खर्च क्या खरे मास्टर चलाएगे ?"

मास्टरजी हैरानी से बोले, "बड़े ही चीमड़ हो तुम। अब स्पष्ट शब्दों में कहता हूं कि तुम्हारे सारे खर्च का इंतजाम मैं अपने जेब से करूंगा।"

मैंने पूछा, "क्यों भला ?"

वे बोले, "इसलिए कि मैं गधा हूं। ऐसा लगता है कि मुंह पर एक चांटा जड़ दूं और तुम्हारी बत्तीसी झाड़ दू। पूछते हो क्यो भला ? मैं यदि

तुम्हारे लिए पैसे न भेजू तो पैसे तुम्हें भेजेगा कौन ?"

इस प्रश्न का उत्तर मेरे पास नही था । मैं चुप बैठ गया।

"जाओ अब मेरे कमरे से !" मास्टरजी कुछ क्रोधित से हो उठे थे। मैंने उनका हाथ पकड लिया और उन्हें अपनी नन्ही बाँहों मे भरकर मैंने कहा, "मास्टरजी, क्या आप नाराज हो गए ?"

"जब तुम गधे की तरह प्रश्न पूछने लगे तब नाराज नही होऊंगा तो क्या खुश होऊंगा ?"

"फिर आप यह क्यों कहते है कि आप कभी नाराज होते ही नही— आपको गुस्सा कभी आता ही नही ?" हसते-हसते मुझे एक चपत मारकर वे बोले, "कैसा शरीर लडका है ! मेरा उधार का सारा आवेश व्यर्थ कर दिया इसने ! जाओ, अब मुझे दो-चार खत लिखने है ।"

मास्टरजी का उद्देश्य मैं समझ गया और कूदता-फांदता कमरे से बाहर चल दिया ।

कमरे से बाहर आया तो देखा कि पुलिस का थानेदार और एक सिपाही बाहर बरामदे मे खडे थे। यह एक अजीब बात थी। कोठी के सारे नौकर-चाकर वहा लाकर हाजिर किए गए थे। मेरे वहां पहुंचते ही मानाजीराव जोर से चिल्लाकर थानेदार से बोला, "यह है ताई साहब का नौकर।" मैं क्रोध मे लाल हो उठा। थानेदार मुझे लक्ष्यकर डाटकर बोला, "तेरा नाम क्या है बे ?" सरकार नजदीक ही बिछावन पर मसनद से टिके बैठे हुए थे। मैंने उनकी ओर देखा। मेरे देखने का उद्देश्य समझकर सरकार नरमाई से बोले, "थानेदार साहब जो पूछें उसका उत्तर दो।

थानेदार ने पूछा, "तेरा नाम क्या है ?"

मैंने अपना नाम बता दिया ।

"तेरी उम्र क्या है ?"

"मैंने कहा, "बारह वर्ष ।"

"तेरा पेशा क्या है ?"

मानाजीराव बोला, "नौकर है यह।"

मैंने मानाजीराव से डाटकर कहा, "मेरा पेशा लिखना-पढ़ना है।"

थानेदार ने फिर डांटकर पूछा, "नौकरी है या लिखना-पढ़ना ? कोई

एक बात बता।"

सरकार बोले, "विद्यार्थी लिख लीजिए।"

थानेदार ने पूछा, "तेरी जाति ?"

मैंने कहा, "शायद आप यह नही जानते कि सावंत मरहठा होता है ? मैंने अभी आपको बताया न कि मेरा नाम मनोहर सावंत है ?"

मानाजीराव ने थानेदार के कान से लगकर धीरे से कहा, "हुजूर, लड़का बड़ा गुस्ताख है।"

थानेदार ने कहा, "तेरा सामान कहां है ? वह सब लाकर इस सिपाही के हवाले कर।"

मैंने सरकार की ओर देखा। उन्होने इशारे से सूचित किया कि मैं अपना सामान ले आऊं और पुलिस को दिखा दू। पुलिस सिपाही ने मेरे सारे सामान की बड़ी बारीकी से जाच की और थानेदार के कान मे कुछ कहा।

थानेदार ने फिर पूछा, "सब नौकर हो गए क्या ?"

मानाजीराव बोला, "अब सिर्फ एक मास्टर रह गए है।"

सरकार बोले, "मास्टर की तलाशी लेने की जरूरत नही।"

थानेदार बोले, "हम लाचार हैं साहब। माफ कीजिए। हमें सारी कार्रवाई कायदे के मुताबिक़ ही करनी होगी। कहां हैं वे मास्टर ? उन्हें यहां बुलाओ।" सरकार के मेरी ओर देखते ही मै जाकर मास्टर जी को बुला लाया। मेरी घबराहट देखकर मास्टर जी और अधिक घबरा उठे। मुझे से विशेष प्रश्न न पूछकर वे सीधे चबूतरे पर जाकर थानेदार के सामने खड़े हो गए।

निश्चित रूप के प्रश्नोत्तर होने के बाद पुलिस का सिपाही मास्टर जी के साथ उनके कमरे मे गया। कुछ देर बाद दोनों ही लौटकर चबूतरे पर आए। सिपाही ने थानेदार से कहा, "असली माल का पता नही।"

मानाजीराव ने हौले-से थानेदार के कान में कहा, "हुजूर, मुझे पूरा यकीन है कि माल मास्टर के कमरे मे ही मिलेगा। आप जाकर खुद तलाशी लीजिए।"

थानेदार उठे और उन्होंने मास्टर जी को पुकारा।

सरकार बोले, "मास्टर जी के कमरे की दुबारा तलाशी लेने का क्या मतलब ?"

थानेदार बोले, "मेरी नजरों में शब्दों की अपेक्षा कानून अधिक महत्त्वपूर्ण है। मुझे तलाशी लेनी ही होगी। चलो मास्टर मेरे साथ।"

मास्टरजी घृणा से बोले, "अब आप ही जाइए। मेरे चलने की जरूरत नही। थानेदार सिपाही को साथ लेकर मास्टरजी के कमरे की ओर चल दिए।

कोई कुछ नही बोल रहा था। क्या हुआ है यह जानने के लिए मेरा दिल तडप रहा था। पर किसी से कुछ पूछने की मुझे हिम्मत नही होती थी। मास्टरजी कुछ बेचैन हुए से दिख रहे थे। सरकार भी कुछ बोल नही रहे थे। थानेदार साहब लौटकर आ गए और बोले, "बड़ा ताज्जुब है! चोरी गया माल कही भी न मिले, इसका क्या मतलब ?"

मानाजीराव बोला, "आप फिर एक बार कसकर तलाशी लेकर देखिए। अंगूठी मास्टर के कमरे मे ही आपको मिलेगी।"

इसी समय चिंगी कोठी से बाहर आई। उसने सरकार से पूछा, "आबासाहब, यह क्या गड़बड है ?"

सरकार बोले, "सुबह नहाते समय मैं स्नान-गृह मे अपनी अंगूठी भूल आया था। खाने के बाद नीद लेकर उठा तो अंगूठी की याद आई। स्नान-गृह मे जाकर देखा तो अंगूठी गायब थी। इसलिए फिर थाने मे रिपोर्ट लिखा दी। उसी की तहकीकात हो रही है।"

चिंगी 'जरा ठहरिए' कहकर कोठी मे चल दी। सब को बड़ा आश्चर्य हुआ! चिंगी इस तरह बीच ही मे क्यों चली गई?

चिंगी आई और सरकार के सामने अंगूठी रखकर बोली, "यह लीजिए आबासाहब अपनी अंगूठी!" सब लोग बिलकुल चकित हो गए। मानाजी राव एकदम चौंककर बोला, "यह ऐसा कैसे हुआ ?"

"कैसे हुआ यह बाद मे बताती हूं।" चिंगी ने कहा।

सरकार थानेदार से बोले, "इन्सपेक्टर साहब, आप को व्यर्थ कष्ट हुआ। मुझे इसका खेद है।"

"थानेदार बोले, "इसमें कष्ट काहे का? इसी काम के लिए सरकार

ने हमें नियत किया है। अच्छा, अब विदा दीजिए। राम-राम !"

जाते समय थानेदार अपने आप ही बुदबुदाए, "इन अमीरो की कोठियों मे इसी तरह की अधाधुंदी चलती है !" पुलिस सिपाही भी थानेदार के कान से लगकर बोला, "बक्शीस भी कुछ नही दी !"

थानेदार बोले, "ये अमीर लोग ऐसे ही दरिद्री होते है !"

थानेदार जा रहे थे और उनकी ओर मेरा ध्यान लगा था। इसलिए चिंगी कब कोठी मे चली गई और हंटर लेकर वापिस आई यह मै देख नही पाया था। चिंगी के हाथ में हंटर देखते ही मानाजीराव वहां से जाने लगा। सरकार बोले, "ताई साहब, यह क्या गड़बड़ी है ?"

चिंगी बोली, "पहले मुझे वचन दीजिए कि अपराधी को जो मैं कहूंगी वही सजा आप देंगे।"

सरकार बोले, "ठीक है। वचन देता हू। बताओ।"

चिंगी कहने लगी, "आज दोपहर को जब मैं घर मे से आ रही थी उस समय मैंने मानाजीराव को स्नानगृह से बाहर निकलते देखा था। उनके चेहरे पर मुझे कुछ सकपकाहट-सी नजर आई थी। इसलिए मेरे दिल मे कुछ शक पैदा हुआ। मानाजीराव इधर-उधर देखते हुए मास्टरजी के कमरे की ओर मुड़े। मैंने दबे पाव उनका पीछा किया। वे मास्टर जी के कमरे मे गए। जाकर उन्होंने दरवाजा भीतर से बंद कर लिया। दरवाजे में थोड़ी दरार रह गई थी। उसमे से मै देखने लगी। मास्टर जी के सिरहाने के नीचे उन्होंने कोई चीज धीरे-से रख दी। वे जब वहा से लौटने लगे तो उनकी आंख बचाने के लिए मैं दीवान जी की अलमारी की आड़ में छिप गई और उन्हें देखती रही। वे कमरे से निकले और उन्होने दरवाजा फिर हौले-से भेड़ दिया। उनके वहा से चल देने पर मैं अलमारी की आड़ से निकली और धीरे-से मास्टरजी के कमरे मे गई। मास्टर जी गहरी नींद मे थे। मैंने उनके सिरहाने के नीचे हाथ डालकर देखा तो वहां मुझे यह अगूठी मिली —"सरकार मानाजीराव की ओर मुडे और चिल्लाकर बोले, "मानाजीराव, क्या बात है यह ?"

मानाजीराव की घिग्घी बंध गई थी। वह रुक-रुककर बोला, "मुझ पर यह तोहमत—"

चिंगी बोली, "यह हंटर लीजिए और जब तक वह अपना अपराध स्वीकार न करे तब तक उसे मारते रहिए।"

सरकार कडे स्वर मे बोले, "कोई है उधर? इसके सारे कपडे उतार दो।"

पर किसी के आगे बढ़ने से पहले ही मानाजीराव ने स्वयं ही कपडे उतारकर फेंक दिए और सरकार के चरणो पर वह लोट गया। वह रोते-रोते दयनीय स्वर मे बोला, "ताई साहब द्वेष से मुझ पर तोहमत लगा रही हैं सरकार!"

चिंगी चिल्लाकर बोली, "आबा साहब (पिताजी) हंटर लगाइए।"

सरकार बोले, "मानाजीराव, उठकर खडे हो!"

मानाजीराव उठकर खड़ा हो गया। सरकार बोले, "अब सच बताओ!"

मानाजीराव बोला, "सच कहता हूं सरकार, यह निरी तोहमत है!"

हंटर की फटाक् से आवाज़ हुई और मानाजीराव के मुह से एक चीख निकल पडी। हंटर पड़ रहे थे। मानजीराव के बदन से खून की धाराएं निकलने लगी। फिर भी वह 'तोहमत' 'तोहमत' ही चिल्ला रहा था। जब इक्कीसवा हंटर उस पर पड़ा तब कहीं उसके धीरज का बांध टूटा और वह चिल्ला उठा, 'सच कहता हू सरकार। अब न मारिए। मैंने ही अंगूठी वहां रखी थी। ताई साहब ने कहा, वह सब सच है! मुझे माफ कीजिए सरकार!"

"पर तुम्हें यह बेवकूफी क्यों सूझी?" सरकार ने पूछा।

दोनों हाथों मे मुह ढाककर रोते-रोते मानाजीराव बोला, "पिछले साल ताई साहब ने नदी पर मुझे हंटर मारे थे। उस समय मास्टर ने···" गला भर आने के कारण उससे आगे बोलते नहीं बन रहा था।

इतनी देर चुपचाप खड़े-खड़े यह सारी घटना देखने वाले मास्टरजी मन-ही-मन बुदबुदाए, "यह कैसे दीर्घ द्वेष!"

सरकार बोले, "समझ गया। आगे कुछ कहने की जरूरत नहीं।" फिर वे दीवानजी की ओर मुड़े और बोले, 'दीवानजी, मानाजीराव के वेतन का हिसाब चुकता कर दो और उसकी जगह पर हरबा की नियुक्ति करो।"

"दया कीजिए सरकार ! दया कीजिए !" मानाजीराव सरकार के चरणो मे गिर पडा और गिड़गिड़ाने लगा ।

सरकार बोले, "दया नही होगी । मैं नही चाहता कि मेरी ही बेटी से द्वेष रखने वाला सर्प मेरी कोठी में रहे । हरबा, इसे धक्के देकर कोठी से बाहर निकाल दो । और दीवानजी, इसका वेतन भी इसे हमारी ड्योढ़ी के बाहर ही जाकर दो।" ऐसा कहकर सरकार कोठी के भीतर चल दिए । मास्टरजी ने मुझ से कपडे बदलकर आने को कहा और फिर चिंगी को पुकारा । इसके बाद हम तीनो घूमने के लिए नदी की तरफ रवाना हो गए ।

नदी पर पहुचते तक हम में से किसी के भी मुह से एक भी शब्द बाहर नहीं निकला । जब हम नदी पर की एक विशाल शिला पर पहुचे तब चिंगी बोली, "क्या हंटर खाने के लिए ही मानाजीराव पैदा हुआ है ! कितना झूठा आदमी है !" मास्टरजी बोले, "अरे छोडो भी अब !" उस विषय मे अब कोई बात मत करो । आज की घटना ने मेरे मन को झकझोर डाला है । सरकार की इजाजत लेकर मैं कल सुबह ही पूना चला जाऊंगा ।"

यह सुनते ही चिंगी की आखों से एकदम पानी आ गया । वह मास्टर-जी के हाथ को मजबूती से पकडकर बोली, "मैं नही जाने दूगी ।" मास्टरजी को भी एकदम सिसकी आ गई । दोनो हाथो से मुझे और चिंगी को सीने से लगाकर मास्टरजी सिसक-सिसककर रोने लगे । बोले, "चिंगी, बेटा ! मुझे माफ कर दो । मै लाचार हू । मुझे जाना ही होगा !" पर चिंगी बार-बार कहने लगी, "मैं नही जाने दूगी—मैं नही जाने दूगी !"

मास्टरजी ने अंगोछे से अपनी आखें पोछी । चिंगी की व मेरी भी आखें पोंछी और फिर जोर-जोर से हसने लगे । मुझे लगा, मास्टरजी कही पागल तो नहीं हो गए ? मास्टरजी बोले, "अरे रोने वाले बच्चो ! तुम खुद रोते हो और मुझे भी रुलाते हो ?" बाईं कलाई से आखें पोंछती हुई चिंगी बोली, "पहले कौन रोया था ?"

मास्टरजी बोले, "हम यही मानकर चलें कि हम सब ने एकदम एक साथ रोना शुरू कर दिया ।"

चिंगी बोली, "बिलकुल नही। यह हम नही मान सकते। पहले आप रोए और इसलिए हमें भी रोना आ गया!"

मास्टरजी बोले, "कैसी शरीर लड़की है! मान लो, मैं ही पहले रोया। आगे?"

चिंगी बोली, "बस हो गया—आगे खत्म!" फिर कुछ क्षण के लिए हम तीनों चुप बैठे थे। मेरे सिर पर से हाथ फेरते हुए मास्टरजी बोले, "चिंगीताई, मैं कल चल दूगा।"

चिंगी बोली, "आप कल हरगिज नही जा सकते।"

मास्टरजी बोले, "सुनो। यो पागलपन मत करो। मुझे कल जाना ही होगा। दस-बारह दिन मे कोई बड़ा फर्क नही पड जाता···"

चिंगी बोली, "दस-बारह दिन कैसे? पूरे पन्द्रह दिन हैं अभी।"

मास्टरजी बोल, "बात एक ही है। मै कल ही जाऊंगा और—और एक महीने के बाद मन्या भी कोल्हापुर चल देगा।"

चिंगी ने आश्चर्यचकित होकर मेरी ओर देखकर पूछा, "सच?"

मैंने गर्दन के इशारे से ही हां कहा। चिंगी ने पूछा, "कोल्हापुर में तुम्हारा जमेगा कैसा? वहा के खर्च का प्रबंध कैसे होगा?"

मास्टरजी बोले, "वाह! बड़ी नानी की तरह पूछ रही हो तुम? मैं ही बताए देता हू। सुनो, मैंने ही इसका सारा इतजाम कर दिया है।··"

चिंगी एकदम गद्गद् बोली, "भगवान आपका भला करे!" मेरे मन को संतोष हो गया कि चिंगी को भी यह योजना पसद आई और उसके मतानुसार यह भिक्षा सिद्ध नही हुई। मेरे मन मे जो शंका थी वह बिलकुल निकल गई।

चिंगी मास्टरजी की गर्दन पकड़कर उनका कान अपने मुह की ओर करके बोली, "मास्टरजी, आप से एक रहस्य कहना है···"

मास्टरजी बोले, "कहो।"

इतनी हलकी आवाज में ताकि मैं न सुन सकू वह मास्टरजी के कान मे बहुत देर तक कुछ फुसफुसाती रही। उसकी बात खत्म होते ही मास्टर-*जी जोर-जोर से हंसने लगे और मेरी ओर मुड़कर बोले, 'क्यों रे शैतान!"*

चिंगी ने मास्टरजी से क्या कहा होगा, इसे भांप लेने के कारण मैंने

लज्जा से गर्दन झुका ली। मास्टरजी बोले, "मैंने पहले ही दिन यह भविष्यवाणी कर दी थी।" मास्टरजी के मुह पर हाथ रखकर चिगी बोली, "चुप रहिए! बोलिए नही।"

फिर शाम हो जाने के कारण हम तीनो घर लौट पड़े।

12

उसी दिन मास्टरजी चले गए। मास्टरजी के चले जाने पर सब तरफ उदासी-सी लग रही थी। चिगी की पढ़ाई भी बंद हो गई थी। मैं अलबत्ता बीच-बीच मे पुराने पाठो को दोहरा लिया करता था। मास्टरजी को गए आठ दिन गुजर चुके थे। अब मेरी मुक्ति के लिए अभी बाईस दिन और बचे थे। मैं एक-एक दिन गिन रहा था।

एक दिन मैं नदी पर सहज घूमने गया था। वहा अचानक पिताजी से मेरी भेंट हो गई। मुझे देखते ही वे बोले, "बेटा इतने दुबले कैसे हो गए?।"

मैने कहा, "मास्टरजी के चले जाने के बाद से बिलकुल अच्छा नही लगता।"

वे बोले, "बड़ा ही भला आदमी था वह! जाते समय मुझसे मिला था और उसने तुम्हारा आगे का जो इंतजाम किया है उसके बारे मे मुझसे कहा।"

मैंने उत्सुकता से पूछा, "फिर आपने क्या कहा उनसे?"

पिताजी बोले, "कहता क्या? मुझे वह इंतजाम ठीक मालूम हुआ। मुझ से दूर रहने की तुम्हे अब आदत हो ही गई है। वही अब आगे भी बनाए रखनी चाहिए। मै कौन तुम्हारा जीवन-भर साथ दूगा? जिस लड़के की मा नही होती उसका बाप भी मरा जैसा ही होता है।"

पिताजी की आंखो में कुछ नमी आ गई-सी दीख पडी। मैंने भरे गले से कहा, "ऐसा क्यों कहते हैं, पिताजी? मेरे लिए आपने सारी जिंदगी

चिगी बोली, "बिलकुल नहीं। यह हम नहीं मान सकते। पहले आप रोए और इसलिए हमें भी रोना आ गया!"

मास्टरजी बोले "कैसी शरीर लड़की है! मान भी, मैं ही पहले रोया। आगे?"

चिगी बोली, "बस हो गया—आगे खतम!" फिर कुछ क्षण के लिए हम तीनों चुप बैठे थे। मेरे सिर पर से हाथ फेरते हुए मास्टरजी बोले, "चिगीताई, मैं कल चल दूंगा।"

चिगी बोली, "आप कल हरगिज नहीं जा सकते।"

मास्टरजी बोले, "सुनो। यों पागलपन मत करो। मुझे कल जाना ही होगा। दस-बारह दिन में कोई बड़ा फर्क नहीं पड़ जाता…"

चिगी बोली, "दस-बारह दिन कैसे? पूरे पन्द्रह दिन हैं अभी।"

मास्टरजी बोले, "बात एक ही है। मैं कल ही जाऊंगा और—और एक महीने के बाद मन्या भी कोल्हापुर चल देगा।"

चिगी ने आश्चर्यचकित होकर मेरी ओर देखकर पूछा, "सच?"

मैंने गर्दन के इशारे से ही हां कहा। चिगी ने पूछा, "कोल्हापुर में तुम्हारा जमेगा कैसा? वहां के खर्च का प्रबंध कैसे होगा?"

मास्टरजी बोले, "वाह! बड़ी नानी की तरह पूछ रही हो तुम? मैं ही बताए देता हूं। सुनो, मैंने ही इसका सारा इंतजाम कर दिया है।…"

चिगी एकदम गद्गद बोली, "भगवान आपका भला करे!" मेरे मन को संतोष हो गया कि चिगी को भी यह योजना पसंद आई और उसके मतानुसार यह भिक्षा सिद्ध नहीं हुई। मेरे मन में जो शंका थी वह बिलकुल निकल गई।

चिगी मास्टरजी की गर्दन पकड़कर उनका कान अपने मुंह की ओर करके बोली, "मास्टरजी, आप से एक रहस्य कहना है…"

मास्टरजी बोले, "कहो।"

इतनी हलकी आवाज में ताकि मैं न सुन सकूं वह मास्टरजी के कान में बहुत देर तक कुछ फुसफुसाती रही। उसकी बात खतम होते ही मास्टर-जी जोर-जोर से हंसने लगे और मेरी ओर मुड़कर बोले, "क्यों रे शैतान!"

चिगी ने मास्टरजी से क्या कहा होगा, इसे भांप लेने के कारण मैंने

लज्जा से गर्दन झुका ली। मास्टरजी बोले, "मैंने पहले ही दिन यह भविष्यवाणी कर दी थी।" मास्टरजी के मुंह पर हाथ रखकर चिगी बोली, "चुप रहिए! बोलिए नही।"

फिर शाम हो जाने के कारण हम तीनों घर लौट पड़े।

12

उसी दिन मास्टरजी चले गए। मास्टरजी के चले जाने पर सब तरफ उदासी-सी लग रही थी। चिगी की पढ़ाई भी बद हो गई थी। मै अलबत्ता बीच-बीच मे पुराने पाठो को दोहरा लिया करता था। मास्टरजी को गए आठ दिन गुजर चुके थे। अब मेरी मुक्ति के लिए अभी बाईस दिन और बचे थे। मैं एक-एक दिन गिन रहा था।

एक दिन मै नदी पर सहज घूमने गया था। वहा अचानक पिताजी से मेरी भेंट हो गई। मुझे देखते ही वे बोले, "बेटा इतने दुबले कैसे हो गए?।"

मैने कहा, "मास्टरजी के चले जाने के बाद से बिलकुल अच्छा नही लगता।"

वे बोले, "बड़ा ही भला आदमी था वह! जाते समय मुझसे मिला था और उसने तुम्हारा आगे का जो इंतजाम किया है उसके बारे में मुझसे कहा।"

मैंने उत्सुकता से पूछा, "फिर आपने क्या कहा उनसे?"

पिताजी बोले, "कहता क्या? मुझे वह इंतजाम ठीक मालूम हुआ। मुझ से दूर रहने की तुम्हे अब आदत हो ही गई है। वही अब आगे भी बनाए रखनी चाहिए। मैं कौन तुम्हारा जीवन-भर साथ दूगा? जिस लड़के की मां नहीं होती उसका बाप भी मरा जैसा ही होता है।"

पिताजी की आंखो में कुछ नमी आ गई-सी दीख पड़ी। मैंने भरे गले से कहा, "ऐसा क्यों कहते हैं, पिताजी? मेरे लिए आपने सारी जिंदगी

लगा दी—"

"पर क्या तूने भी मेरे लिए अपना एक साल खर्च नहीं कर दिया ? कितना चांडाल हूं मैं ? सिर्फ सौ रुपये के लिए अपने बेटे को एक साहूकार के पास गिरवी रख दिया मैंने !"

"अगर मुझे बड़प्पन देना ही चाहते हैं तो आप चाहें तो यह कह सकते हैं कि अपने पिता का कर्ज चुकाने के लिए लड़के ने साल-भर नौकरी की !"

"यही सच है। बारह वर्ष के लड़के ने मेरे लिए नौकर बनना स्वीकार कर लिया !"

"पर इस कारण ही मास्टरजी का साथ मिला न ?"

मैं चौंक पड़ा ! और चिंगी से मुलाकात हुई, यह···! उस मुलाकात की बात मेरे मुह से बाहर निकल नहीं पा रही थी। यह गुप्त बात पिताजी से कैसे कहूं ? जीभ पर आए हुए शब्दों को निगलकर, मैं बोला, "अब बीस दिन ही रह गए हैं। बीस दिन बाद मैं घर आ जाऊंगा।"

पिताजी बोले, "तुरंत ही तुझे कोल्हापुर जाना है। पर अभी से ये बातें क्यों ? मैं सरकार से मिलने कोठी जा रहा हूं।" यह कहते ही पिताजी सीधे कोठी की ओर मुड़ गए। मैं भी एक पेड़ के तने से टिककर लेट गया।

चिड़िया की चूं-चूं आवाज कानों में पड़ने लगी और एक वर्ष पूर्व की घटना स्पष्ट रूप से सामने मूर्त हो उठी। उसके बाद कितने ही चमत्कार हो गए थे ? मानाजीराव का अकारण द्वेष, मास्टरजी का अकारण स्नेह और चिंगी का अकारण या सकारण, प्यार ! एक साल पहले दुनिया के विषय में मुझे कितना अज्ञान था ? आज मास्टर जी का साथ मिलने के कारण मैं कितनी बातें जानने लगा हूं ! इस गांव के बाहर निकलते ही मैं एकदम अंग्रेजी की चौथी कक्षा में बैठूंगा इस विचार से मेरा मन खिल उठा।

हम पर ऋण का संकट आ पड़ा था। पर उससे कितनी अच्छी बातें पैदा हुईं। पर अब मुझे कोल्हापुर जाना पड़ेगा। अज्ञान अवस्था में बंबई छोड़कर आने के बाद इस गांव को छोड़कर मैं कहीं भी नहीं गया था।

हमेशा पिताजी के साथ रहा। सिर्फ इसी वर्ष उनके पास नही रहा। पर कभी-कभी उनसे भेंट होते रहने के कारण दूर जाने की भावना मन को महसूस नही होती थी। अब मैं दूर चला जाऊगा—अपने गाव से, अपने घर मे, अपने पिताजी से। चिंगी से दूर होकर मैं दूसरे शहर मे चल दूगा, इस विचार के आते ही लगता जैसे सीने पर एक पत्थर गिर पड़ा हो! कोल्हापुर के खरे मास्टर क्या इन मास्टरजी जैसे ही होगे? क्या वे इन्ही की तरह मुझे स्नेह देंगे? भविष्य काल का परदा हटाकर आगे क्या है, यह देखने की मैं कोशिश करने लगा।

मुझे चिंगी द्वारा ली गई शपथ और दिए गए वचन की याद आ गई। क्या वह शपथ और वचन पूरे होंगे? अपने दृढ़ निश्चय पर मुझे विश्वास है। अपनी शपथ का पालन करना मेरे लिए असभव नही। यदि मैं विवाह न करना चाहू तो घर मे ऐसा कोई नही जो मुझ पर विवाह की जबरदस्ती करे। पर लडकी की स्थिति ऐसी नही होती। उसका विवाह पिता जब एक बार निश्चित कर देता है तो उसे विवाह-वेदी पर चुपचाप जाकर खडा हो जाना पडता है। क्या चिंगी मे इतनी शक्ति है कि इस पराधीनता को वह झिटकार दे? पद-पद पर दिखने वाली उसकी वृत्ति को जब याद करता हू तो लगता है कि यह उसके लिए असभव नही। पर घर के बधनों का उपाय क्या?

मास्टरजी से मैंने यह प्रश्न पूछा था। उस समय उन्होंने कहा था, "हिंदू लडकी का अविवाहित रहना संभव नही। उम्र की कुछ हद के बाद उसे पत्नी होना चाहिए और नही तो कम-से-कम विधवा होना चाहिए।" उन्होंने यह भी कहा था कि विवाह एक सामाजिक बधन है। उस छोटी उम्र मे मै सामाजिक बधन का अर्थ ही नही समझ पाया था। तब मेरी जिज्ञासा को तृप्त करने के लिए उन्होंने मनुस्मृति के बहुत सारे श्लोक पढकर सुनाए और विस्तारपूर्वक उनका अर्थ मुझे समझाया। इतिहास के भिन्न-भिन्न कालो मे समाज की स्थिति कैसे-कैसे बदलती गई और सामाजिक बंधनो मे क्या-क्या हेर-फेर होते गए इसका स्पष्टीकरण उन्होंने इतने विस्तृत रूप से करके दिखाया था कि आज मै किसी भी सभा मे इस विषय पर भाषण दे सकता हूं। हां, बारह वर्ष के लड़के को ये सब बातें

लगा दी—"

"पर क्या तूने भी मेरे लिए अपना एक साल खर्च नहीं कर दिया ? कितना चांडाल हू मैं ? सिर्फ सौ रुपये के लिए अपने बेटे को एक साहूकार के पास गिरवी रख दिया मैंने !"

"अगर मुझे बड़प्पन देना ही चाहते हैं तो आप चाहे तो यह कह सकते हैं कि अपने पिता का कर्ज चुकाने के लिए लड़के ने साल-भर नौकरी की !"

"यही सच है। बारह वर्ष के लड़के ने मेरे लिए नौकर बनना स्वीकार कर लिया !"

"पर इस कारण ही मास्टरजी का साथ मिला न ?"

मैं चौक पड़ा ! और चिंगी से मुलाकात हुई, वह···! उस मुलाकात की बात मेरे मुह से बाहर निकल नही पा रही थी। यह गुप्त बात पिताजी से कैसे कहू ? जीभ पर आए हुए शब्दों को निगलकर, मैं बोला, "अब बीस दिन ही रह गए हैं। बीस दिन बाद मैं घर आ जाऊंगा।"

पिताजी बोले, "तुरंत ही तुझे कोल्हापुर जाना है। पर अभी से वे बातें क्यों ? मैं सरकार से मिलने कोठी जा रहा हूं।" यह कहते ही पिताजी सीधे कोठी की ओर मुड़ गए। मैं भी एक पेड़ के तने से टिककर लेट गया।

चिड़िया की चू-चू आवाज कानों में पड़ने लगी और एक वर्ष पूर्व की घटना स्पष्ट रूप से सामने मूर्त हो उठी। उसके बाद कितने ही चमत्कार हो गए थे ? मानाजीराव का अकारण द्वेष, मास्टरजी का अकारण स्नेह और चिंगी का अकारण या सकारण, प्यार ! एक साल पहले दुनिया के विषय में मुझे कितना अज्ञान था ? आज मास्टर जी का साथ मिलने के कारण मैं कितनी बातें जानने लगा हूं ! इस गांव के बाहर निकलते ही मैं एकदम अंग्रेजी की चौथी कक्षा में बैठूंगा इस विचार से मेरा मन खिल उठा।

हम पर ऋण का संकट आ पड़ा था। पर उससे कितनी अच्छी बातें पैदा हुईं। पर अब मुझे कोल्हापुर जाना पड़ेगा। अज्ञान अवस्था में बंबई छोड़कर आने के बाद इस गांव को छोड़कर मैं कहीं भी नहीं गया था।

हमेशा पिताजी के साथ रहा। सिर्फ इसी वर्ष उनके पास नही रहा। पर कभी-कभी उनसे भेंट होते रहने के कारण दूर जाने की भावना मन को महसूस नही होती थी। अब मैं दूर चला जाऊंगा—अपने गांव से, अपने घर से, अपने पिताजी से। चिंगी से दूर होकर मैं दूसरे शहर मे चल दूगा, इस विचार के आते ही लगता जैसे सीने पर एक पत्थर गिर पड़ा हो! कोल्हापुर के खरे मास्टर क्या इन मास्टरजी जैसे ही होंगे? क्या वे इन्ही की तरह मुझे स्नेह देंगे? भविष्य काल का परदा हटाकर आगे क्या है, यह देखने की मैं कोशिश करने लगा।

मुझे चिंगी द्वारा ली गई शपथ और दिए गए वचन की याद आ गई। क्या वह शपथ और वचन पूरे होंगे? अपने दृढ निश्चय पर मुझे विश्वास है। अपनी शपथ का पालन करना मेरे लिए असभव नही। यदि मैं विवाह न करना चाहू तो घर मे ऐसा कोई नही जो मुझ पर विवाह की जबरदस्ती करे। पर लडकी की स्थिति ऐसी नही होती। उसका विवाह पिता जब एक बार निश्चित कर देता है तो उसे विवाह-वेदी पर चुपचाप जाकर खड़ा हो जाना पडता है। क्या चिंगी मे इतनी शक्ति है कि इस पराधीनता को वह छिटकार दे? पद-पद पर दिखने वाली उसकी वृत्ति को जब याद करता हू तो लगता है कि यह उसके लिए असंभव नही। पर घर के बधनों का उपाय क्या?

मास्टरजी से मैने यह प्रश्न पूछा था। उस समय उन्होंने कहा था, "हिंदू लड़की का अविवाहित रहना सभव नही। उम्र की कुछ हद के बाद उसे पत्नी होना चाहिए और नही तो कम-से-कम विधवा होना चाहिए।" उन्होंने यह भी कहा था कि विवाह एक सामाजिक बधन है। उस छोटी उम्र मे मैं सामाजिक बंधन का अर्थ ही नही समझ पाया था। तब मेरी जिज्ञासा को तृप्त करने के लिए उन्होने मनुस्मृति के बहुत सारे श्लोक पढ़कर सुनाए और विस्तारपूर्वक उनका अर्थ मुझे समझाया। इतिहास के भिन्न-भिन्न कालों मे समाज की स्थिति कैसे-कैसे बदलती गई और सामाजिक बंधनों में क्या-क्या हेर-फेर होते गए इसका स्पष्टीकरण उन्होंने इतने विस्तृत रूप से करके दिखाया था कि आज मैं किसी भी सभा मे इस विषय पर भाषण दे सकता हूं। हां, बारह वर्ष के लड़के को ये सब बातें

कहां से मालूम हुई यह प्रश्न बेशक खडा हो सकता है। मास्टरजी ने मुझे पढाना शुरू किया उससे पहले ही मेरी बुद्धि उम्र के लिहाज से काफी प्रौढ थी और इसीलिए उनकी शिक्षा के कारण मैं सुविद्यता की सीढी पर कदम रखने मे समर्थ हो गया।

पर चिंगी का क्या ? वह भी ग्यारह वर्ष की ही है। मेरे समान ही विचार तरंगों मे चक्कर काटने वाली है। किसी विषय मे—विशेषत विवाह जैसे आत्मीय विषय मे जिस तरह मैं जोर देकर उत्तर दे सकूंगा उसी तरह और उतने ही निश्चय से क्या वह भी उत्तर दे सकेगी ? वह हिंदू लडकी है यह बात किसी भी तरह मेरे मन से नही जाती। उसके दृढ निश्चय पर मेरी श्रद्धा है। पर सवाल यह है कि दृढ़ निश्चय के बेड़े पर हिंदू लडकी इस समाज-सागर को तैरकर पार कर सकेगी क्या ?

बारह वर्ष के लडके के मन मे इस तरह के विचार उठने देखकर किसी को भी आश्चर्य ही होगा ! पर जो विचारवान है, चहुं ओरदेखने वाला है, अवलोकन-शक्ति का उपयोग करने वाला है उसे आश्चर्य होने के बजाए तरस अलबत्ता आ जाएगा। बचपन से महाराष्ट्र के हम हिंदू लडको को एक ही शब्द हमेशा सुनाया जाता है और वह है 'विवाह !' हमारे यहा विवाह का इतना वड़ा तहलका मचाया जाता है कि उसके आगे गाव मे आग लगने का तहलका भी फीका पड जाएगा ! बाजे, शहनाईया, घोड़े, डोलिया, जलूस इनकी इतनी धूम होती है कि बालक-बालिकाओ को कई महीनों तक चर्चा के लिए विवाह के अतिरिक्त दूसरा विषय ही नहीं रहता। जहा एक वय के दो बच्चे दिखे कि 'यह तेरा पति और यह तेरी पत्नी' कहकर, शब्दों की तप्त मुद्राएं उनके मस्तिष्क मे अंकित कर देने के लिए महाराष्ट्र के अदूरदर्शी मा-बापो को तनिक भी हिचकिचाहट नहीं होती।

लडके के दिमाग मे साल-भर तक एक ही विचार घूमता रहता है—'मेरा विवाह-मेरी पत्नी।' लड़की भी एक ही बात सोचती है—'मेरा विवाह-मेरा पति।' एकाध लडकी ऐसी भी होती है जो मां-बाप द्वारा दिखाए गए लड़के को अपने पति के नाते ही जीवन-भर देखती रहती है। परंतु जब उसका वास्तविक विवाह होता है तब वह दूसरा ही लड़का पति

के रूप मे वेदी पर उसके सामने खडा हो जाता है और उस बेचारी लडकी का जीवन बरबाद हो जाता है। लडके के बारे मे यद्यपि यह बात नही फिर भी परिस्थिति की प्रबलता के कारण विवाह और पत्नी सबंधी विचार हमेशा उसके दिलोदिमाग पर छाए रहते हैं। कभी-कभी किसी लडके के मां-बाप की मूर्खतापूर्ण बकवास के कारण किसी लड़की के प्रति उसकी अत्यंत निष्ठा हो जाती है, हृदय मे विवाह गांठ बध जाती है। परंतु जब सत्य-दृष्टि में वह टूट जाती है तो कभी-कभी दोनों को वह अनीति-मार्ग पर घसीट ले जाती है।

मेरे और चिंगी के मा-बाप ने, हमारे प्रति उनका आत्यतिक प्रेम होने के कारण यद्यपि इस प्रकार की गलती नही की फिर भी समाज के अन्य मां-बापों के पाप हमे भी पीडा पहुचाए बिना न रहे। मा-बाप द्वारा हम दोनो के बारे में कभी भी 'विवाह' शब्द का उल्लेख नही किया गया था। इसके बावजूद महाराष्ट्र के वातावरण मे धूम मचानेवाला वह शब्द 'विवाह' किसी रोग के कीटाणु की तरह हमारे खून मे प्रवेश कर गया।

पेड़ पर चिडिया का जोडा एक-दूसरे की गर्दन पर गर्दन रखकर स्थिर हो गया था। उस दृश्य ने मेरे हृदय को बेचैन कर दिया। मेरा सारा शरीर रोमाचित हो उठा। मै हडबडाकर उठा और कोठी की ओर चल पड़ा।

चार कदम भी आगे नही गया था कि आसमान मे एकदम गडगडाहट हुई। मनोराज्य में खो जानेवाले मेरे मन को लगा कि विवाह के बाजे बजे। हवा के जोरदार झोको से पेड़ हिलने लगे। रात-भर मुकाम करने के लिए पेड़ पर बैठे हुए पक्षियों ने चहकते हुए भगदड़ मचा दी। सिर पर एक विशाल काला बादल दिखने लगा और मूसलाधार वर्षा होने लगी।

मनोराज्य के नशे में मस्त होने के कारण बारिश से बचने के लिए मैंने जल्दी-जल्दी कदम नही उठाए। मूसलाधार वर्षा की तनिक भी परवाह न कर मैं उसी तरह आराम से कोठी पर जा पहुचा। चिंगी दरवाज़े में खडी हुई मेरी प्रतीक्षा कर रही थी। मुझे देखते ही वह जोर से बोली, "हरबा, मनोबा के कपड़े ले आओ।"

मेरे हृदय में एक ही शब्द उभारा—"गृहिणी!"

मैंने कपडे बदले और ड्योढी के पास जल रहे अलाव के पास बैठकर आग तापने लगा। एक नौकर ने पूछा, "मनोबा, यों कांप क्यों रहे हो? अलाव में और लकड़ियां डाल दूं क्या?" मैं बोलने का प्रयत्न करने लगा तो दांत बजने लगे। मेरे उत्तर की राह न देख उस नौकर ने अलाव में दो-चार लकड़िया और ठूसकर आग तेज की और ऊपर से लकड़ी के बारीक-बारीक टुकड़े डाल दिए। नशे में हुए जैसी आंखें करके मैं उस आग की ज्वाला मे देखने लगा और मुझे एक विलक्षण दृश्य दीख पड़ा। बरात निकली है, आगे बैंड बज रहा है। डोली मे मैं बैठा हू, मेरे सामने ही फुदना पकड़े चिंगी बैठी हुई है। मेरे हाथ मे पीली चिंधी मे लिपटी हुई कटार है।

धीरे-धीरे वह दृश्य गलने लगा। मुझे एक बड़ी कोठी दीख पड़ी। उस कोठी मे कितने ही नौकर-चाकर इधर-उधर घूम रहे थे। मैं अट्टालिका मे आराम कुर्सी पर हुक्के की नली हाथ मे लिए पड़ा हुआ था। सामने की कुर्सी पर चिंगी बैठी थी। वह कितनी बड़ी हो गई है। वह हसते-हसते मुझसे बोली, "हुक्के की आग बुझ गई है। अब निरी नली क्यो खींच रहे हो?' मैंने हसते-हसते उसकी ओर देखा, और नली दूर फेंक दी।

शरीर मे कड़ाके की कपकंपी भर रही थी। मेरी आंखें बंद होने लगी, और मैं तूफान मे उखड़कर गिर पड़ने वाले पेड़ की तरह अलाव की बगल मे लुढ़क पड़ा। आगे क्या हुआ इसकी मुझे याद नही।

होश मे आकर देखा तो मैं मास्टर के कमरे में एक बिस्तर पर पड़ा हुआ था। मेरे कानों मे चिंगी के शब्द पड़े "अब आंखें खोली, देखिए दद्दाजी इन्होंने आंखें खोल दी।" चिंगी का स्वर हर्ष से फूल उठा था। उसका वह स्वर कानो मे पड़ते ही मुझे फिर तंद्रा ने घेर लिया। चिंगी ने दद्दाजी कहकर किसे संबोधित किया? यह एक ही प्रश्न कितनी ही देर तक दिमाग मे लगातार नाच रहा था।

कितनी देर बाद होश में आकर देखता हूं तो मेरे पिताजी मेरे नजदीक बैठे हुए दिखाई दिए। कमरे की खिड़की से सूर्य की किरणें मेरे सीने पर पड़ी हुई थी। मेरे मस्तक पर हाथ फेरते हुए पिताजी बोले, "अब कैसा

लगता है ?"

मैंने कहा, "अच्छा लगता है।"

पिताजी बोले, "कितना पसीना आ रहा है तुझे ! कोई आध घंटे से लगातार पसीना पोंछ रहा हूं।"

मैंने पिताजी से पूछा, "पिताजी, मुझे बुखार आया था क्या ?"

पिताजी बोले, "बुखार ? कितना भयंकर बुखार था ! सारी रात बुखार में तू तप रहा था।"

मैंने एक क्षण के लिए आखें बंद की फिर पिताजी की गर्दन दूसरी तरफ फेरकर पूछा, "पिताजी, चिंगी कहा गई ?"

"ऐसा नही कहते बेटा। ताईसाहब कहना चाहिए। वे हमारी *मालकिन हैं।*"

"हा। है तो सही।" मैं मन-ही-मन बुदबुदाया। मेरे कान के पास मुह लाकर पिताजी बोले, "क्या कहा बेटा ?"

मैंने उत्तर दिया, "आप चाहे तो कहे ताईसाहब। मैं चिंगी ही कहूगा। आपकी होगी वह मालकिन। पर वह मेरी···"

पिताजी डाटकर बोले, "चुप रह ! वाहियात बात मत कर।"

मैंने जोर देकर कहा, "वह मेरी मित्र है, साथिन है।"

मेरा हाथ अपने हाथ से सहलाते हुए पिताजी बोले, "है सही। सचमुच ही वह तेरी मित्र है। इतने अमीर की बेटी कल सारी रात तेरे सिरहाने बैठी रही।"

मैं शातिपूर्वक बोला, "ऐसा !" पिताजी आगे कहने लगे, "कल खाना भी नही खाया उसने। सरकार ने कितना आग्रह किया ? पर उठी नही। बाजयाबाई जो परदे से कभी बाहर नही आती वे भी यहा तक आई और उसे धमकाया, पर उस पर कोई असर न हुआ। कितनी पक्की लड़की है। इतने लोग कह रहे थे पर अपने स्थान से वह टस से मस नहीं हुई। बीच-बीच मे तेरे माथे पर हाथ लगाकर देखती थी और तू तो लगातार अनाप-सनाप बड़बडा रहा था। आधी रात के लगभग तू हाथ-पैर पटकने लगा तब उसके छक्के छूट गए। वह घबराई हुई स्थिति मे मुझ से चिपक-कर बैठ गई। कभी तेरे बदन को हाथ लगाकर देखती और फिर मेरे मुंह की

ओर देखती। वह लगातार आंखों से टप-टप आंसू गिरा रही थी। सरकार ने आकर फिर उसे भीतर बुलाया। पर वह कोई उत्तर ही नहीं देती थी उन्हें। "कैसी हठीली लडकी है।" कहकर उन्होंने मुझे उस पर नजर रखने को कहा, और वे भीतर चल दिए। थोडी देर बाद तेरा हाथ-पांव पटकना बंद हो गया। उस समय वह मुझ से बोली, *"अब अच्छा लग रहा होगा न मनोबा को?"*

"मैंने उसे धीरज बधाया। उसके मन को सांत्वना दी। यह देखकर कि वह झपकियां ले रही है मैंने उससे भीतर जाकर सो जाने को कहा।" 'ओह!'ऐसा कहकर, मेरी गोद में सिर रखकर वह सो गई। लडकी बडी भावुक है इसमें शक नहीं। तुझ पर उसका बहुत प्रेम दिखता है।"

मेरा विचार-चक्र घूम रहा था। इत्ती-सी ग्यारह वर्ष की लडकी, खाना-पीना छोडकर सारी रात मेरे बिस्तर के पास क्यों बैठी रही? मैं एक तुच्छ नौकर ही तो हूं—चाहो तो खेल का साथी कह लो। मेरे लिए उसे सारी रात बाप के आग्रह की परवा न कर इस प्रकार क्यों बैठना चाहिए? उत्तर सरल था। पर उससे मेरा संतोष नहीं हो पा रहा था। क्या भूतदया के कारण? पर उस दिन जब हरबा बीमार पडा था उस समय ढूंढकर भी उसकी तरफ उसने क्यों नहीं देखा! मास्टरजी पर उसका इतना प्रेम था—उनके प्रति इतना आदर था! पर वे जब दो बार बीमार पडे थे उस अवधि में वह उनके कमरे के पास भी नहीं गई थी। और अब मेरे लिए ही क्यों बैठी रही? उस दिन की शपथ को उसने अपने मन में इतना उलझा लिया है क्या? मैं मर गया तो क्या उसे ऐसा लगेगा कि उसका पति मर गया? मैं घबरा उठा। मेरे रोंगटे खड़े हो गए। मैंने पिताजी की जांघ पर हाथ रखकर कहा,—"पिताजी, मुझे मरने मत देना।"

पिताजी बोले, "ऐसी अमंगल बात नहीं कहते बेटा!"

मैंने फिर पूछा, "इसमें अमंगल क्या है? किसी को मांगने से ही मृत्यु थोडे ही मिल जाती है?"

मुझे पिताजी ने डांटा, "बडे ही विलक्षण बच्चे हो तुम लोग?"

मैंने पूछा, "'तुम लोग' याने कौन? क्यों किसी के मन में भी यही

विचार आया था ?"

"हां।" ऐसा कहकर पिताजी एक क्षण के लिए स्तब्ध रहे, और बाद में बोले, "बिलकुल तेरे ही शब्द उसके मुह से भी बाहर निकले थे। उसने कहा था "दद्दाजी, इन्हें मरने मत देना।"

मैंने पूछा, "उसने आपको दद्दाजी कहकर संबोधित किया ?"

पिताजी गद्‌गद् होकर बोले, "हा। और भी बहुत-सी बातें कही उसने। बडी स्नेहमयी लडकी है ! मेरे गले मे बाहे डालकर फूट-फूटकर रोई।" पिताजी ने अपनी आंखें पोंछी और मेरे बदन पर से हाथ फेरते हुए वे अपने आप ही बुदबुदाए, "काश मेरे भी एक ऐसी ही लडकी होती तो···"

विषय बदलने की गरज से मैंने पिताजी से कहा, "पिताजी, अब मुझे यहा से जाने के लिए कितने दिन बचे हैं ?"

पिताजी बोले, "उन्नीस।" वे फिर स्तब्ध हो गए और अपने आप ही बुदबुदाने लगे, "आग लगे मेरी जीभ को !"

मेरे मस्तिष्क मे प्रकाश पड़ा। एक वर्ष पहले के शब्द याद हो आए। "चाहे जो कर पर एक साल तक मरना नही।" मैं यदि आज या कल मर गया तो पिताजी का कर्ज चुकाने मे उतने ही दिनों की कमी पड जाएगी। मेरा मस्तक भ्रमण करने लगा। मैंने मन-ही-मन ईश्वर से प्रार्थना की, "हे ईश्वर,मुझे उन्नीस दिन जीवित रख !"

मेरे मुह से कान लगाकर पिताजी बोले, "क्या कहा बेटा ?"

मैंने अनजाने वही शब्द फिर दोहराए, "हे ईश्वर मुझे उन्नीस दिन जीवित रख !"

पिताजी का दिल भर आया और वे 'आग लगे मेरी जीभ को !' 'आग लगे मेरी जीभ को !' कहने लगे।

मैंने उनसे पूछा, "पिताजी, क्या आप अपना कान मेरे मुंह के पास लाएंगे ? मैं आप से अपना एक रहस्य कहना चाहता हूं।"

वे बोले, "मैं सब जानता हूं।"

मैंने चकित होकरपूछा, "याने ?"

वे बोले, "तू कल बुखार में जब अनाप-सनाप बक रहा था उस समय

चिगी ने मुझे सब कुछ बता दिया। कैसे पागल बच्चे हो रे तुम ? ऐसे बच्चों के शपथें खाने से *क्या विवाह-गांठ बंधा करती है ? कहां वह, कहां तू ?* तेरा जी अच्छा नहीं इसलिए अधिक नहीं बोलता। पर मन्या, यह पागल-पन दिमाग से निकाल डाल। कल तू जहां आंख से ओझल हुआ कि वह सब कुछ भूल जाएगी। कहां की शपथें और कहां के वचन ! खेल खेलते समय भी क्या बालक-बालिकाएं अपने विवाह नहीं जमाया करते ? पर क्या इसलिए कोई बालक या बालिका खेल की बात को जीवन में भी पकड़ कर बैठ जाते हैं ? सुन बेटा, वह सरकार की लड़की है। उसके जूते पोंछने का तेरा दर्जा है। तू चाहे तो उसके चरणों को छूकर मुजरा कर ले यही बहुत हुआ, पर उसके गले में बाहें डालने की बात अपने मन में भी मत ला। बारह साल का लड़का तू ! तुझे क्या करना है विवाह के विचारों में ! अभी तुझे पढ़ना है। नाम कमाना है। चार पैसे बचाने हैं। तेरा इतना सब होते तक उसका विवाह होकर वह दो-तीन बच्चों की मां भी बन जाएगी। मैं तड़ाक से बिस्तर पर उठकर बैठ गया और बोला, "यह कभी होगा ही नहीं। वह मेरे सिवा किसी दूसरे से विवाह करेगी ही नहीं।" पिताजी ने मुझे नजदीक खींचकर अपने हृदय से लगा लिया और मेरे मस्तक पर हाथ फेरते हुए वे बोले—

"चुप ! चुप ! ऐसा मत कह।" मेरे चिबुक को हाथ लगाकर उन्होंने मेरा मुंह ऊपर किया और मेरे गाल पर अपना गाल रख दिया।

13

मैं जाग गया था। मैं आंखें खोलनेवाला था कि इसी समय चिगी के बोलने की आवाज मेरे कानों में पड़ी। मैं बिना आंखें खोले दोनों की बातें सुनता रहा। पिताजी कह रहे थे, "सुनिए ताई साहबा, अभी आप छोटी हैं। आप अपना भला-बुरा नहीं समझ सकतीं।

"मैं एक बार आप से कह चुकी हूं कि आप मुझे ताई साहबा के नाम

से संबोधित न किया करें ।"

"तो क्या कहकर संबोधित करूं?"

"चिगी कहिए, चिगू कहिए और चाहें तो बहूरानी कहिए ।"

"चुप ! चुप ! ऐसी असंगत बात नही कहते !"

"असगत क्यों ? इस पर न जाइए कि मैं छोटी हू। मुझे सब याद है। मैं बड़ी जिद्दी हूं। मै एक बार जब कोई काम हाथ में ले लू तो उसे पूरा किए बगैर कभी दम नही लेती ।"

"चिगी ताई, हम गरीब लोग है। आपके घराने के दास! भिखारी को ऐसी असंगत आशाएं न दिखाइए। आप कहती हैं कि आप सब समझती हैं, इसलिए दिल खोलकर कह रहा हू। कम-से-कम इसके आगे तो अब ऐसी कोई बात न कहिएगा ।"

"कहूंगी। एक बार नही दस बार कहूगी, हजार बार कहूंगी !"

"मेरे बेटे की जिदगी धूल मे मिल जाएगी। सरकार को ऐसे विचार पसंद नही आएगे ।"

"आबासाहब मेरी हर बात सुनते हैं। वे मेरी मरजी के खिलाफ कभी नही जाते ।"

"दूसरे विषयों मे यह भले ही हो। पर यह विषय बडा विकट है। जन्म की गांठ का यह प्रश्न है। बेटा, तुम्हारी उम्र अभी छोटी है, पर जब तुम्हारे मुंह की ओर देखता हू तो तुम किसी प्रौढ़ा स्त्री की तरह दिखती हो। बुद्धि की चमक तुम्हारे चेहरे पर आ गई है। ईश्वर ने तुम्हें बुद्धि दी है। उससे थोडा काम लो। मेरा बेटा कुछ भी पागलपन दिमाग में भरकर बैठ जाएगा और कल सरकार तुम्हे किसी राजा की रानी बना देंगे। कल बुखार में वह जो बक रहा था उसे सुनने पर तो मेरे प्राण ही सूख गए हैं। वह भी बड़ा जिद्दी है। बार-बार तुम उससे यदि इसी तरह कहती रहोगी और कल जब तुम्हारा विवाह किसी दूसरे से हो जाएगा तो वह घुल-घुलकर मर जाएगा अथवा आत्महत्या कर लेगा।"

"और मैं ?"

"हां, तुम्हारा भी प्रश्न है। इस विचार से तुम्हारा भी कल्याण नही होगा। दुनिया के नियमों की रोक सदैव लगी रहती है। उसके बाहर न मैं

जा सकता हू और न तुम जा सकती हो। कल तुम्हारा विवाह किसी दूसरे के साथ हो गया तो···"

"कौन कराएगा मेरा विवाह किसी दूसरे से ?"

"दूसरा कौन ? सरकार कराएंगे।"

"कोडो से चमडी उधेड दूगी उनकी ! बाप-वाप कुछ नही समझूगी। उस दिन मानाजीराव को जिस तरह धुना उसी तरह सरकार को भी कोडों से धुनकर रख दूगी।"

"चुप ! ऐसा नही कहते बेटा !"

पिताजी ने अपना हाथ उसके मुह पर रख दिया था।

पिताजी के हाथ को झिटकारकर दनदन पैर फटकारती हुई चिगी वहा से चल दी। पिताजी सिर पर हाथ रखे स्तब्ध बैठे रहे। वे अपने आप से ही बुदबुदाए, "अब करू भी क्या—कैसे समझाऊ इन लडको को ?"

मैं आंखे खोलकर पिताजी की ओर देखता रहा। वे मेरी ओर आंखें फाडकर देख रहे थे, पर उनकी नजर से लग रहा था जैसे देखते हुए भी वे न देख रहे हो। मैंने धीरे पुकारा—"पिताजी !" जैसे नीद से जागे हो उस तरह चौककर वे बोले, "क्या चाहिए बेटा ?"

मुझे प्यास लगी थी। नजदीक ही तैयार किया हुआ लाही का पानी उन्होंने मुझे दिया। पानी पीते ही मुझ में थोडी ताजगी आ गई। बैठ जाऊं ऐसा लगा। पर कोशिश कामयाब नही हो रही थी। फिर से बिस्तर पर लेट गया। थकावट आ गई थी। पिताजी मेरे बदन पर हाथ फेरते रहे। हरबा ने भीतर से काटा लाकर दिया। उसे पीने के लिए मै उठकर बैठ गया। पर बैठते ही कुछ ऐसा गश आया कि एकदम बिस्तर पर आडा गिर पडा। पिताजी एकदम चीख पड़े। अर्ध बेहोशी की हालत मे भी उनकी चीख मुझे सुन पडी। थोडी देर बाद होश में आया तो देखा कि मेरे आसपास बहुत से लोग इकट्ठा हो गए थे और चिगी ने एक प्याज मेरी नाक के नजदीक पकड़ रखा था। मेरे आंखें खोलते ही चिगी चिल्लाई, "आंखे खोल दी।" मैने पागल की तरह हसते हुए पूछा, "क्या हुआ था मुझे ?" चिगी बोली, "कोई खास नहीं। थोड़ा गश आ गया था।"

मौके पर धीरज बंधाने की स्त्री जाति की स्वाभाविक वृत्ति उस समय

वह पूरी तरह से दिखा रही थी। उसने काढ़े की कटोरी मेरे मुंह से लगाई और काढ़ा पी लेने के बाद मैं बिस्तर पर लेट गया। दूसरे सब लोग बाहर चल दिए। कमरे में सिर्फ पिताजी और चिंगी रह गए।

पिताजी ने चिंगी से कहा, "जाओ बेटा, खाना खा लो। कल रात को भी खाना नहीं खाया तुमने।"

वह बोली, "मुझे भूख नहीं। सुबह चाय और नाश्ता ले लिया है।"

दोनों कुहनी बिस्तर पर रखकर मेरे मुंह के पास मुंह लाकर वह बोली, "अब अच्छा लगता है न ?"

मेरा हृदय धड़कने लगा। ऐसा भी लगने लगा कि कहीं फिर से गश न आ जाए। फिर भी मैंने कहा, "अब बिलकुल अच्छा लगता है। तुम जाओ और खाना खा लो अब।"

वह बोली, "जाऊंगी। अभी उसकी क्या जल्दी है ?"

मैंने कहा, "मेरी सौगंध है तुम्हें। पहले खाना खाने जाओ।" मेरे मस्तक पर हाथ फेरती हुई वह बोली, "पर मेरे खाना खाकर लौटते तक गश-वश मत लाना।" मैंने उत्तर दिया, "निश्चित रहो तुम्हारे वापिस आते तक अच्छी तरह जागता रहूंगा।" फिर उसने मेरी नब्ज पर हाथ रखा जैसे उसे देख रही हो और वह चल दी। मालूम नहीं क्यों, पर मैं धीरे-धीरे हंसने लगा।

पिताजी ने पूछा, "क्या हुआ ? हंसता क्यों है बेटा ?"

मैंने उत्तर दिया, "जैसे बड़ी डाक्टरनी हो ! मेरी नब्ज देखकर वह क्या जानेगी ?" पिताजी हंस पड़े और चुप रहे। चिंगी की मेरे प्रति लगन देख कर मुझे जो खुशी की गुदगुदी हुई थी, वह हंसी उसका परिणाम थी। पर पिताजी से यह कह न सका। जिंदगी में पहली बार मैंने उनसे छिपाव किया। यह महसूस होते ही मेरा मन मुझे कचोटने लगा। थोड़ी दवा लेकर मैं सो गया। जागा तो प्राय: शाम हो गई थी। उठकर बैठते ही पिताजी से मैंने पहला प्रश्न किया, "चिंगी आई थी क्या ?"

वे बोले, "हां, अभी तक यहीं बैठी हुई थी।"

मैं अपने मन-ही-मन बुदबुदाया, "मैं जागता रहूंगा, ऐसा मैंने वचन दिया था, पर न जाने नींद कैसे लग गई ?"

पिताजी बोले, "यह देखकर कि तुझे अच्छी नींद लगी है चिगी को बड़ा संतोष हुआ।"

कुल्ली करके मैंने काढ़ा पिया और तकिया पर गर्दन रखकर पड़ा रहा। पिताजी ने पूछा, "डोली मे बिठाकर तुझे घर ले चलूं क्या?" मैंने गर्दन के इशारे से ही 'ना' कहा। उन्होंने पूछा, "क्यों?"

मैंने कहा, "यहां चार लोग हैं। दवा का इंतजाम है। वहां अकेले आपको तकलीफ होगी।"

वे बोले, "काहे की तकलीफ होगी? मेरे पास ऐसा कौन-सा दूसरा बड़ा काम है घर में! तेरे पास बैठा रहूंगा। काढ़ा बना के पिला दिया करूंगा। कुछ ही दिनों मे तू घर के आसपास घूमने-फिरने लगेगा। ले आऊं डोली?"

पिताजी का उद्देश्य मेरे ध्यान मे आ गया। मैंने उनसे फिर कहा, "पर अभी उन्नीस दिन और जो पूरे करने हैं?"

वे बोले, "अरे हां। यह बताने को तो भूल ही गया। जब तू सो रहा था उस समय सरकार यहां आए थे। तेरे बदन पर हाथ फेरकर भी देखा था उन्होंने। बचे हुए दिनों की तुझे छूट दे दी है।"

मैंने कहा, "पिताजी, अब तो किसी का देना-वेना नहीं रहा न?" पिताजी आनंद से बोले, "नहीं। अब मैं किसी का एक दमडी का भी कर्जदार नहीं। हां, तो फिर ले आऊं क्या डोली?"

मैंने डरते-डरते कहा, "और कहीं वहां कल सुबह की तरह मुझे फिर गश आ गया तो?"

"हां। यह भी सच ही है!" ऐसा कहकर पिताजी ने एक लम्बी सांस छोड़ी। मुझे गश आने का डर सचमुच ही लग रहा था क्या? ईश्वर साक्षी है कि मैं फिर झूठ बोला। मास्टरजी के जाने के बाद से चिगी और मैं दोनों बहुत ही कम मिला करते थे। इस बुखार के कारण वह मेरे पास आकर बैठने लगी है। ऐसा होते हुए घर जाऊं, ऐसा मुझे कैसे लग सकता था? अब जल्द ही मैं कोल्हापुर चल दूंगा और फिर न जाने कितने दिनों तक चिगी के मुझे दर्शन ही न होंगे। हम दोनों की मुलाकात फिर असंभव ही होगी। रुपयों के ऋण मे यद्यपि मैं मुक्त हो गया था फिर भी चिगी के

प्रेम के नये ऋण ने मुझे बंधन में जैसे फिर डाल दिया था।

पिताजी कुछ न बोल चुपचाप माथे पर हाथ धरे बैठे हुए थे। मैंने पूछा, "पिताजी, बोलते क्यों नही ?"

वे बोले, "क्या बोलू ? तू घर चलने को तैयार नही। सरकार से तेरे बारे में पूछने कल आया सो अभी तक यहीं हू। उधर घर में क्या हुआ होगा सो भगवान जानें !"

मुझे लगा, मंग्या लगातार चिल्ला रहा होगा। ढोर खूटे से बंधे हुए दाना-पानी के लिए तड़प रहे होंगे।

इसी समय चिंगी आकर मेरे पास बैठ गई और तबियत के बारे में पूछने लगी। मैंने उससे कहा, "बिलकुल अच्छा लगता है। अब कोई डर नहीं। पिताजी डोली ला रहे हैं। घर जाने की सोच रहा हू।"

चिंगी बोली, "नही। जब तक बिलकुल अच्छे नही हो जाते तब तक कहीं जाने की जरूरत नही।" मैंने मन-ही-मन कहा—कैसी विकट लडकी है ? कल सचमुच ही यदि इससे मेरा विवाह हो गया तो पद-पद पर वह इस तरह अपनी ही बात चलाया करेगी !

पिता जी बोले, "अब बिलकुल अच्छा होने के लिए और क्या रह गया है ? वैद्यराज से भी मैंने पूछा। उन्होंने जाने की अनुमति दे दी है। कल से आया हूं सो अभी तक यहीं हू। घर पर घास और पानी के लिए गाय बैल रंभा रहे होंगे।"

चिंगी बोली, "फिर जाइए आप। आप को कौन रोक रहा है ? वे अब ठीक हो गए हैं। आप मजे से घर जा सकते है।"

कैसी अजीब लड़की है ! पिताजी का उद्देश्य वह शायद ताड गई थी और उन्ही के शब्दों में उन्हे पकडकर उन्ही पर विजय हासिल कर ली। तो मतलब यह कि ग्यारह वर्ष की लडकियां भी इतनी होशियार होती हैं !"

पिताजी बोले, "अच्छा, तो एक बार घर हो आता हूं।"

चिंगी बोली, "आने की कोई जरूरत नही। यहा इनका सारा प्रबंध ठीक हो जाएगा। यदि कुछ कम-अधिक मालूम हुआ ही तो आपको बुलवा लेंगे।" जैसे कोई बुजुर्ग हो, इस शान से चिंगी बोल रही थी। पिताजी भी उसके सामने क्या कहते ? वे बोले, "ठीक है हो आता हूं फिर ?"

ऐसा कहकर उत्तर की प्रतीक्षा न कर वे चले गए। मैं आखें बंदकर चुप रहा। चिंगी मेरी ओर टक लगाए लगातार देख रही थी। उसने फिर मेरी नब्ज देखी। मैंने आखे खोलकर हंसते हुए कहा, "तुम्हें नाडी देखनी आती है शायद ?" वह बोली, "मुझे क्या आता है और क्या नही आता इससे तुम्हें क्या वास्ता ?" मैं फिर चुप हो गया। चिंगी कुछ न बोल बड़ी देर तक स्तब्ध बैठी हुई थी। मेरे बिलकुल मुह के नजदीक मुंह लाकर धीरे-से बोली, "सचमुच ही क्या तुम घर जाना चाहते हो ?"

मैंने गर्दन हिलाकर ना कहा। वह खिल्ल-से हंस पड़ी। मेरे भी चेहरे पर हास्य चमक उठा। मेरा हाथ पकडकर चिंगी ने पूछा, "अब सच बताओ बिलकुल अच्छा लगता है न ?"

मैंने उत्तर दिया, "क्या मैं झूठ बोला करता हूं ?"

वह गालो मे हसती हुई बोली, "नही, मैंने कहा, घर जाने के लिए···"

"घर मे मेरा ऐसा कौन है जो मेरी राह देख रहा हो ?"

"और यहां ?"

"तुम हो।" फिर चिंगी गालों-ही-गालो में हंसने लगी। प्रौढ़ता की कल्पनाओं के घोडे मेरे मस्तिष्क में दौडने लगे।

हम दोनो का विवाह हो गया है। हम बड़े हो गए हैं। इसी तरह मैं बीमार पड़ गया हू और वह इसी तरह एक बडी किनार की साडी पहने मेरे नजदीक बैठी है। उस काल्पनिक दृश्य से मैं बेहोश-सा हो गया। मुझे सावधान करने के लिए ही जैसे चिंगी बोली, "क्या दिख रहा था ?"

"मैंने कहा, "दिखेगा क्या ?"

चिंगी बोली, "फिर इतनी आंखें फाड़कर छत की ओर क्यो देख रहे थे ?"

मैंने कहा, "यों ही सोच रहा था।"

"क्या सोच रहे थे ? घर जाने का ?"

"तुम्हें क्या लगता है ?"

"क्या तुम यह नही सोच रहे थे कि हम दोनो बड़े हो गए हैं ?"

मैंने आश्चर्यचकित होकर पूछा, "तुमने कैसे जाना ?"

वह गंभीर होकर बोली, "क्या सचमुच ही तुम यही सोच रहे थे? मैंने तो यों ही कह दिया।"

"सचमुच ही मेरे मन मे यही विचार आया था!" मैंने कहा।

उसने एक दीर्घ निश्वास छोड़ा। मेरी ओर गर्दन मोड़कर वह बोली, "कोल्हापुर जाने पर मेरी याद रहेगी न?"

"तुम्हें यह पूछने की जरूरत है क्या, चिंगी?"

"सोचा, शाला में जाने पर न जाने कितने मित्र बनेंगे और मुझे भूल जाओगे।"

"तुम ही मेरी सच्ची मित्र हो।"

मेरा हाथ मजबूती से पकड़कर वह बोली, "सिर्फ मित्र ही?" मै कुछ न बोल चुप रहा। इतनी छोटी लड़की की यह कितनी ढिठाई! "जवाब क्यो नही देते?"

मैंने एक लम्बी सांस लेकर जवाब दिया, "भगवान के मन मे क्या है सो वही जाने।" फिर कुछ समय तक कुछ न बोल हम स्तब्ध रहे। मेरे मन में हजारों विचार-तरंगें उठ रही थी।

इसी समय सरकार भीतर आए। उन्हे देख चिंगी अपने स्थान से टस से मस नही हुई और न ही उसने मेरा हाथ छोड़ा जो वह पकड़े हुई थी।

सरकार बोले, "क्यो मनोबा, कैसी है तुम्हारी तबीयत? और चिंगी ताई, आप तब से यही बैठी हैं शायद?" चिंगी कुछ न बोली। मैंने उत्तर दिया, "अब बिलकुल अच्छा लग रहा है।"

सरकार हसते हुए बोले, "घर जाने को जी कर रहा होगा? ठीक है। अब घर जाने में कोई हर्ज नही।"

चिंगी तड़ाक-से उठकर बोली, "तब तक नहीं, जब तक ठीक से घूमने-फिरने नही लगते।"

"मैंने यह नही कहा कि वे चले जाएं।" सरकार बोले, "तुम मेरी बात समझी नही। यह सिर्फ हम दोनों के बीच का रहस्य है। हमारे व्यवहार का प्रश्न है!" मैंने पूछा, "बिलकुल अच्छा हो जाने के बाद अगर एक-दो दिन अधिक रह जाऊं तो कोई आपत्ति तो नही?" सरकार बोले, "अवधि समाप्त हो जाने पर उसी दिन कोई हाथ पकड़कर तुम्हें कोठी से

नही निकाल देगा। एक-दो दिन ही क्यों, जब तक तुम चाहो यहां रह सकते हो। पर अब तुम पर कोई बंधन नही रहा !

सरकार के चल देने पर चिगी ने भवें सिकोड़कर पूछा, "बंधन काहे का ?"

"तुम वह बात नही जानती शायद ?"

"कौन-सी बात ?"

"व्यर्थ ही तुम उस दिन मानाजीराव से लड़ पड़ी। एक साल तक सचमुच ही मे मैं तुम्हारा नौकर था।"

"मतलब ?"

"सरकार ने हमे कुछ रुपये कर्ज मे दिए थे। और उस कर्ज को पूरा चुकाने के लिए मैं साल भर उनकी कोठी मे चाकरी करूं यह तय हुआ था।"

चिगी नाक फैलाकर बोली, "मैं जो हमेशा कहती रहती हूं वह झूठ नहीं।"

मैंने पूछा, "क्या ?"

"यही कि आबासाहब में एक कौड़ी की भी अक्ल नहीं। किसी से फिजूल साल-भर तक चाकरी कराके क्या मिला ?"

"मिला क्यों नही ? तुम मिली, मास्टरजी मिले, अंग्रेजी की तीसरी कक्षा तक पढ़ाई हो गई, कोल्हापुर जाने का इंतजाम हो गया—"

गंभीरता का झूठा भाव लाकर चिगी बोली, "और पत्नी मिल गई।" हम दोनों ही खूब हंसने लगे।

14

इसके दो दिन बाद मैं घर जाने को तैयार हुआ। मैंने अपना सामान नौकर के हाथ घर भिजवा दिया और मैं कोठी के प्रत्येक व्यक्ति से विदा लेने लगा। पर जब मैं विदा ले रहा था तब चिगी न जाने कहां गायब थी और मेरे कोठी से बाहर निकलने तक मुझे कहीं भी नहीं दिखी। वहां से निकलने

से पहले मैं कोठी के उस कमरे में गया जहां मास्टरजी हमें पढ़ाते थे। उस कमरे को श्रद्धा से प्रणाम किया और वहा से निकलकर सीधा अपने घर पहुंचा।

मास्टरजी ने जाते समय पिताजी से कहकर कोल्हापुर जाने का सारा इंतजाम कर रखा था। उसके अनुसार पिताजी ने खरे जी को पत्र लिखा था। कोल्हापुर से खरे जी का जवाब आ गया था। लिखा था कि छुट्टिया समाप्त होने के एक-दो दिन बाद से ही शाला शुरू हो रही है। अत: पिताजी ने दूसरे दिन कोल्हापुर जाने की तैयारी शुरू कर दी।

गांव छोड़ने की हिम्मत नही होती थी। गाडी में बैठने के लिए मेरे पैर ही तैयार नही हो रहे थे। मंग्या पैरो से लिपटकर लगातार चिल्ला रहा था। आखें पोंछते-पोंछते ही मैं किसी तरह गाडी में बैठा। पिताजी गाड़ीवान से बोले, "बैलो को जरा जल्दी चलाओ। गाडी का वक्त हो रहा है।"

कोल्हापुर के स्टेशन पर खरे मास्टर हमे उतारने के लिए आए थे। उनके साथ हम लोग उनके घर गए। उनके घर मे प्रवेश करते ही मेरे मन की अजीब-सी स्थिति हो गई। अब यहां छुट्टियों के सिवा पिताजी से भेंट होना भी मुश्किल। सारा पराये लोगो से व्यवहार। खरे मास्टर मन्याबापू मास्टरजी जैसे ही होंगे क्या? उनके घर के अन्य लोग कैसे होंगे? वहां की शाला में मेरे सहपाठी कैसे होंगे? ऐसे हजारो प्रश्न मन में उठने लगे। स्नान और भोजन आदि से निपटकर हम दोनों ने विश्राम किया।

खरे मास्टर के घर उनकी पत्नी, गणू नाम का मेरी ही उम्र का उनका लड़का और उनके वृद्ध पिता—बस, इतने ही लोग थे। दोपहर को हमारे आने से पहले मास्टर साहब का भोजन हो जाने के कारण मुझे यह कल्पना नही हो पाई थी कि पंगत मे हमारा स्थान कहां होगा। परंतु रात के भोजन के समय चारों पीढ़े एक ही कतार में रखे देखकर पिताजी भी दग रह गए। पीढों पर बैठने के लिए हम हिचकिचाने लगे। खरे जी बोले, "गणबाजी, खड़े क्यो हो? बैठो पीढे पर। हमारे घर ब्राह्मण और अब्राह्मण यह भेद नही।

हम जहां खड़े थे वहां से जरा भी नही हिले। यह देखकर खरे जी

हमारे नजदीक आए। उन्होने हाथ पकड़कर हमे खींचा और पीढ़े पर जाकर बिठा दिया। भोजन आरंभ हुआ, पर पिताजी का मन ठिकाने पर नही था। मुझे पहले थोडा आश्चर्य हुआ। पर आगे भोजन आरंभ होते ही उसका परिणाम मन पर नही रहा। सिटपटाए हुए स्वर में पिताजी बोले, "*ब्राह्मणों की पद्धति से भोजन कैसे किया जाता है यह भी मैं नही जानता।* इसलिए यदि कही कोई भूल हो जाए तो कृपा कर क्षमा कर देना। पर अभी मुझे आश्चर्य होता है कि कोल्हापुर जैसे तीर्थस्थान में यह ऐसा कैसे? ब्राह्मण और मराठा एक ही पंक्ति मे एक साथ बैठकर भोजन करें? पुरुषो को शायद यह चल जाता हो, पर घरवालियों को यह कैसे जंचता होगा?'

खरेजी की पत्नी जिन्हे मैं भाभीजी कहूंगा, परोस रही थी। पिताजी ने ही मुझसे कहा था कि उनकी पत्नी को मैं भाभीजी कहा करूं?'

पिताजी की बात सुनकर भाभीजी रुककर बोली, "मुझे न जचने को क्या हो गया? जैसा देश वैसा वेष। जैसा गुरु वैसा उपदेश। जो इन्हें पसंद है वही मेरा धर्म। इससे परे मैं कुछ नही जानती।"

पिताजी गद्गद् होकर बोले, "मास्टर साहब आप बड़े भाग्यवान है!"

बरामदे से लगे कमरे मे मेरे लिए जगह कर दी थी। उस स्थान मे मेरा सामान जमाकर पिताजी ने मेरे लिए वहां बिस्तर लगा दिया और मेरे नजदीक ही अपनी गूदड़ी भी फैला ली। बिस्तर पर पड़े-पड़े ही पिता जी बोले, "मनू, लोग बहुत अच्छे दिखते हैं। मैं बेफिक्र हो गया। घर जाने पर भी मुझे कोई चिंता नही रहेगी। तेरी मास्टरनी बाई तो एक मां है। उसकी मर्जी के बाहर मत जाना। दोनों की सेवा करेगा तभी तुझे अच्छी विद्या आएगी। ऐसे लोग मिलने के लिए किस्मत चाहिए। उनके लड़के से लड़ना नही। लड़का स्वभाव का जरा गरम दिखता है। कुछ बोले तो बर्दाश्त कर लेना। उत्तर मत देना। हम सब तरह से उनके उपकारो तले दबे हैं, यह ध्यान मे रखकर बर्ताव करना।"

पिताजी ने कसकर मुझे अपने सीने से चिपका लिया। मेरे मुह मे शब्द नही निकल पा रहा था। मैं सिसक-सिसककर रोने लगा और उसी तरह रोते-रोते सो गया। सुबह उठा और प्रातः क्रियाओ से निपटकर जब बाहर आया तो देखा कि पिताजी ने घर लौटने की तैयारी कर ली थी। मास्टर

साहब उनसे और रहने का आग्रह कर रहे थे। पर पिताजी बोले, "और एक-दो दिन रहकर भी आखिर क्या करूंगा ? घर में भूखे जानवर उपेक्षित रहेंगे। लड़के को आपकी गोद मे डाल दिया है। उसकी चिंता आप ही को है।" ऐसा कहकर पिताजी मास्टर साहब के चरणों पर सिर रखने को झुके। पर मास्टर साहब ने एकदम उनका हाथ पकड़ लिया और उन्हें उठाते हुए बोले, "छिः छिः यह क्या ? आप हमारे बुजुर्ग हैं। आपको प्रणाम करने का अधिकार हमारा है।" ऐसा कहकर मास्टर साहब ने पिताजी के चरणों पर सिर रख दिया।

पिताजी के बोले, "सौ वर्ष जियो, बेटा।"

पिताजी के घर से बाहर कदम रखते ही मेरी आंखें एकदम बरस पड़ी। मुझे हृदय से लगाकर वे बोले, "जब कोई गांव जा रहा हो उस समय रोया नही करते।" मैं आखें पोछकर स्तब्ध खड़ा हो गया। मैं दौड़ता हुआ अपने कमरे में गया और बिस्तर में मुह छिपाकर फफक-फफककर रोने लगा।

रोने का आवेश खत्म होते ही आंखें पोछकर मैने ऊपर देखा तो मास्टर साहब कमरे के दरवाजे में खड़े थे। उनसे चार आंखे होते ही मैने हंसने का प्रयत्न किया। उन्होने मुझसे पूछा, "क्यो, रो लिए जी भर ? अब अपनी किताबें निकालो। मैं तुम्हारी परीक्षा लूगा।"

मुझे हाथ से पकडकर वे अटारी पर ले गये और अपने पास बिठाकर उन्होंने मेरी परीक्षा ली। परीक्षा लेने के बाद वे बोले, "थोड़े ही समय मे तुम्हारी काफी पढ़ाई हो चुकी है। हमारे मन्याबापू के शिष्य हो न ?"

मेरा हृदय अभिमान से भर उठा। मुझे बड़ी चिंता थी। मैंने सिर्फ आवश्यकता भर पढ़ा था। मैने डरते-डरते पूछा, "चौथी मे ले लेंगे क्या मुझे ?"

मास्टरजी बोले, "लेनेवाला दूसरा कौन है ? मेरा ही काम है वह।"

मैने प्रश्न-चिह्न की मुद्रा मे उनकी ओर देखा। मास्टर साहब बोले, "यू क्या देख रहे हो मेरी तरफ बावले जैसे ! कल से चौथी कक्षा में तुम पढने लगोगे। चौथी कक्षा में तुम्हारा नाम दर्ज कर दिया जाएगा। पर पढ़ाई अलबत्ता तुम्हें जरा कसकर ही करनी होगी। यह चौथी कक्षा याने

एक बड़ा अड़ियल टट्टू है। बहुत से विद्यार्थी इसी कक्षा के पास ठोकर खाते हैं। कैसा पागलपन है? व्याकरण भी अंग्रेजी में पढ़ाओ। संस्कृत की भी वही दशा। किस मूर्ख ने ऐसी व्यवस्था कर दी है कौन जाने? तीन कक्षा अंग्रेजी पढ़नेवाले लड़के को इतनी अंग्रेजी कैसे समझ में आ सकती है? कब यह पाठ्य-क्रम बदलेगा सो भगवान जाने। हमारा गणू तुम्हारी ही कक्षा में है। दोनों ही एक साथ पढ़ाई किया करो।"

पुस्तकें समेटकर मैं नीचे गया। गणू जीने से ऊपर जा रहा था। उसने मास्टर साहब से पूछा, 'पास हो गया वह?"

मास्टर साहब हसते हुए बोले, "सिर्फ पास ही नहीं हुआ, बल्कि पहला नबर आया।"

मेरा हृदय आनंद से भर उठा। इतने अल्प समय में मैं जितना निरीक्षण कर पाया था उससे मैंने यह अदाज लगाया कि उन मास्टरजी के समान ही ये मास्टर साहब भी बड़े स्नेहशील हैं। मन में दोनों की तुलना करके जब देखा तो लगा कि खरे मास्टर उन मास्टरजी की बराबरी में नहीं बैठते। कहीं-न-कहीं थोड़ा फर्क लगता ही था। मन्याबापू (आगे उन मास्टरजी का मैं इसी नाम से उल्लेख करूंगा।) कुछ अलग ही थे। उनके चेहरे पर आनंद हमेशा खेला करता था। खरे मास्टर के चेहरे पर गंभीरता की छाया दिखा करती। भाभीजी का स्वभाव ठीक मन्याबापू जैसा दिखता था। पुस्तकें कमरे में रखकर मैं बुद्धू की तरह दरवाजे में खड़ा था। मुझे यों खड़ा देखकर भाभीजी बोली, "क्यों रे पगले! देख क्या रहा है? क्या नहाना नहीं है तुझे? ब्राह्मण के घर दोपहर में नहाना नहीं चलता। कल तुम लोग हारे-थके आए थे इसलिए उठने में तुम्हें सहज देर हो गई थी। पर अब आगे से सुबह ही नहाना होगा। सुबह तड़के उठा करो, टट्टी जाया करो फिर दातौन से दांत अच्छी तरह साफ किया करो और तुरंत नहा लिया करो। समझे? और उसी वक्त अपनी धोती, कुरता आदि धोकर सूखने डाल दिया करो। उसके बाद नाश्ता करके अपनी पढ़ाई किया करो।" भाभीजी यह कह रही थी कि इतने में मास्टर साहब आकर उनसे बोले, "काहे के पाठ पढ़ा रही हो इसे?"

उन्होंने हंसते-हंसते उत्तर दिया, "मनू का टाईमटेबल बना दे रही

उसकी पीठ मेरी ओर थी। मैं दौड़कर उसके पास गया और अपने दोनों हाथों से उसकी आंखें बंद कर ली। उसने बहुत से नाम लिए। पर मेरा नाम सूझने के लिए उसके पास कोई आधार नही था। नजदीक बैठा हुआ एक लडका बोला, "विनू, यह तो कोई देहाती नमूना दिखता है।" मैं मन-ही-मन शरमा गया।

"तुम मन्या तो नही ?" ऐसा कहकर मेरे दोनों हाथो को आंखों पर से हटाकर एकदम घूमकर विनू मेरे सामने खड़ा हो गया और बोला, "आखिर आ ही गए कोल्हापुर ! कब आए ?"

"कल ही आया।" मैंने कहा। नजदीक बैठा हुआ लड़का बोला, "कहां का है रे यह छोकरा, विन्या ?" मैं झेंपकर फिर चौंक पड़ा। विनू बोला, "यह मेरे गाव का मेरा बालमित्र है।" वह लड़का बोला, "यह बेवकूफ छोकरा तुम्हारा बालमित्र ?" मुझे गुस्सा आ गया। मैंने मुट्ठी बांधी और एक घूसा उस लड़के के सीने पर लगा दिया। वह लडका भी कच्चा नही था। एक ही क्षण मे हम दोनों ठन गई। बाकी के लडके एक ओर हट गए। जो लोग वहां घूमने आए थे उनमे से भी कुछ लोग हमारे आसपास इकट्ठा हो गए। हम दोनो एक दूसरे पर घूसे पर घूसे बरसा रहे थे। अनेक पेंच और पकड़ें लगा रहे थे। उस लड़के की पीठ जमीन पर लगते ही बाकी के लड़के उस पर फबतियां कसने लगे। कोई एक बोला, "गांव के एक छोटे से बछड़े ने बाबू पहलवान की सिट्टी भुला दी !" मैं एक ओर हट गया और विनू से बोला, "चलो, हम चलें।" वह लड़का उठकर खड़ा हो गया और मेरे सामने आकर उसने अपना हाथ आगे बढ़ाया। फिर शायद हमारी ठनेगी ऐसा मुझे लगा। पर वह बोला, "दो अपना हाथ मेरे हाथ में। आज से हम दोस्त हो गए। हो पानीदार।"

नजदीक का एक लड़का बोला—"पानी कैसे नहीं ? अभी तुझे जमीन सुंघा ही दी उसने। तेरी शान किरकिरी कर दी !"

वह बोला, "हां, है तो सच। मुझे कोई कल्पना नहीं थी। देखूं भला।" उसने मेरे दंड, सीना, गर्दन आदि को दबाकर देखा। मेरे मुंह की ओर देखता हुआ वह हंसते-हंसते बोला, "कसरत करते हो शायद ?" इतने आदमियों को आसपास एकत्रित हुए देखकर मैं कुछ भौंचक्का-सा

हो गया था। वही आगे बोला, "मेरा नाम बाबू भोंसले, उम्र सत्रह वर्ष, जात मराठा, पेशा शाला में आने के नाम पर गुंडागर्दी करना, आजकल मुकाम खुद अपने घर में—पता विनायक को मालूम है।" ऐसा कहकर मुझसे रामराम करके वह लड़का चल दिया। उसका बवंडर की तरह बर्ताव देखकर मुझे काफी कुतूहल हुआ। विनू बोला, "बड़ा मजाकिया है। ताकत का बड़ा घमंड था बेटे को। आज सारा घमण्ड उतर गया! कहां ठहरे हो तुम?"

गपू बोला, "हमारे घर!"

विनू बोला, "गपू, तुम जाओ घर। मैं मन्या को अपना घर दिखाकर तुम्हारे घर पहुंचा दूंगा।"

गपू चला गया और हम दोनों ने दूसरा रास्ता पकड़ा।

"मन्याबापू ने ही तुम्हारा सारा प्रबंध किया है शायद? अच्छा हुआ तुम आ गए।" विनायक बोला, 'किस कक्षा में बैठने वाले हो?"

मैंने कहा, "चौथी में।"

विनू बोला, "चौथी! मन्याबापू ने इतना पढ़ा दिया तुम्हें? अच्छा, अब चलो मेरे घर। तुम्हें एक मजा दिखाऊंगा!" मैंने आश्चर्य से पूछा, "मेरे घर वाले? तुम तो दूसरों के घर खाकर यहां पढ़ते थे न?"

विनू गालों-ही-गालों में हंसता हुआ बोला, "अब वे दिन हवा हो गए। अब एक बड़ा ही मजा हो गया है।" मैं उसकी बात का मतलब ही नहीं समझ पाया। विनू ने पूछा, "तुम्हें शायद पता नहीं चला? मेरा विवाह हो गया।"

मैंने आश्चर्य प्रश्न किया, "विवाह हो जाने पर दूसरों के घर भोजन नहीं परोसा जाता शायद?" विनू जोर-जोर से हंसने लगा। "बिल्कुल ही बुद्धू हो यार तुम! देखना भई, मारना-वारना नहीं! तुम चाहो तो मैं अपना शब्द वापिस ले लेता हूं।"

विनू मुझसे अभी तक डरता है यह देखकर मुझे हंसी आ गई। विनू आगे बोला, "मेरा विवाह हो गया। चार महीने हुए। तब से मैं ससुराल में ही रहता हूं। अब घर ही चलो। वहीं सब हुआ . .

बातें करते-करते हम विनू के ससुराल पहुंचे। हम अटारी पर गए। वहां के एक कमरे में मुझे बैठाकर विनू चल

अटारी भी खरे मास्टर की अटारी की तरह ही थी। कमरे में एक अलमारी दिख रही थी जिसमें पुस्तकें ठीक करीने से रखी हुई थीं। खिड़की के नजदीक एक मेज पर एक लैंप रखा था। मैं कमरे में इधर-उधर देख रहा था तभी विनू हंसते हुए भीतर आया और बोला, "अच्छा हुआ, सास जी अम्बादेवी के दर्शन को गई हैं और काका जी याने मेरे ससुर भी बाहर घूमने चल दिए हैं। अब देखना, तुम्हें एक मजा दिखाता हूं।"

कुछ ही देर में एक बारह-तेरह वर्ष की लड़की कमरे में आई। उसके एक हाथ में लड्डुओं से भरी छोटी थाली थी और दूसरे हाथ में पानी से भरा लोटा और एक गिलास था। उसने ये चीजें दरी के पास रख दीं और वह जाने लगी। विनू एकदम अपने स्थान से उठा। दौड़कर उसका हाथ पकड़ लिया और उसे दरी पर खींचने लगा। वह पीछे हटती हुई बोली, "यह क्या? मुझे दरी पर क्यों ले जा रहे हो? मुझे छूत लग जाएगी न?" मेरे कलेजे में जैसे तीर लग गया। विनू ने परिचय कराया—"यह है मेरी पत्नी और यह है मेरा बालमित्र मनोहर।" वह जबरदस्ती ही हंसी, ऐसा दीख पड़ा, और आंख के एक कोने से विनू की ओर देखती हुई बोली, "मेरा हाथ छोड़ दो। कोई आ गया तो?" विनू हंसते-हंसते बोला, "हाथ पकड़ा है सो क्या छोड़ने के लिए?"

विनू के शब्दों में निहित व्यंग शायद वह समझ नहीं पाई। वह झटके से हाथ छुड़ाकर पायल बजाती हुई चली गई। विनू दरवाजे से बाहर झांककर उसके जाते तक उसे देख रहा था। दरी पर बैठने के बाद वह बोला, "देखी मेरी पत्नी! कैसी है?"

मैंने कहा, "अच्छी है।"

सचमुच ही विनू की पत्नी अत्यंत सुन्दर थी, गोरी थी, नाजुक थी—पर···पर उसके चेहरे की ओर देखते समय मेरा मत उसके विषय में अनुकूल नहीं हुआ। कारण कुछ भी न था। परंतु उसकी कंजी आंखें देखकर मैं घबरा गया। विनायक अपनी पत्नी पर अत्यत खुश है, ऐसा दीख पड़ा और दिखने में वह वैसी थी भी। परन्तु मैं अलबत्ता पहली ही मुलाकात में उसके विषय में प्रतिकूल मत बना बैठा।

घर आने पर खरे मास्टर मुझसे बोले, "गणू कह रहा था कि तुमने

बार-बार कोल्हापुर की वही बातें बताते-बताते मैं थक गया। पिताजी को तो लगा जैसे सारा घर आनद से भर उठा है।

कोठी से नाश्ते के लिए उसी दिन हमें बुलावा आया था। मेरे कोठी में प्रवेश करते ही सरकार ने मुझे अपने नजदीक बिठा लिया। फिर एक बार मुझे कोल्हापुर के हाल दोहराने पड़े। मैं यंत्र की तरह मुह से बोल रहा था सही, पर मेरा मन किस ओर था ?

नाश्ता समाप्त हुआ। सबसे मुलाकातें हुईं। घर जाने का वक्त आ गया। पर चिंगी कहीं नजर न आई। सामने के रास्ते से न जाकर पुरानी स्मृतियों के स्थलों को देखने की गरज से मैं मोट की ओर मुड़ गया। आज दिवाली होने के कारण मोट बद थी। सारे नौकर-चाकर रोशनी की तैयारी में लगे थे। मोट के आस-पास कोई परिंदा भी पर नही मार रहा था। मैं नजदीक की शिला पर जाकर बैठ गया और मैंने एक लंबी सांस ली। सारे शिष्टाचारों को ताक पर रखकर कोठी के भीतर जाकर चिंगी से मिलूं, ऐसा विचार भी मेरे मन में उठने लगा। मैं बिलकुल उदास हो गया था। शून्य दृष्टि से मोट की ओर देख रहा था। मालूम नही क्यों, पर मुझे लगा कि पीछे मुड़कर देखूं। मुड़कर देखा तो चिंगी कोठी से निकलकर मोट की ओर आती हुई मुझे दिखाई दी। वह सहज ही यहां आ रही है अथवा जान-बूझकर मेरे लिए ही आ रही है यह सोचने का कारण ही नही था। मैं झट-से उठा और रास्ते में ही उसे पकड़ लिया। उसे देखते ही मेरे मन को धक्का लगा। उसका स्वास्थ्य पहले जैसा नही दिख रहा था। मैंने उससे पूछा, "चिंगी, तुम बीमार थीं क्या ?"

"क्यों ? दुबली दिख रही हूं इसलिए ? दुबला होने के लिए बीमार पड़ने की जरूरत नहीं होती।" चिंगी बोली, "जबसे आए हो तब से तुमसे मुलाकात कब होगी इसकी लगातार राह देख रही थी।" नजदीक ही पड़े हुए घास के एक तिनके को उठाकर उससे दांत कुरेदती हुई वह आगे बोली, "सुना है कोल्हापुर में बड़ी मारपीट होती है।"

"बड़े शहर में मारपीट हमेशा ही चलती रहती है।"

"वह बात नहीं। हरबा का लड़का कोल्हापुर से आया था। वह कह रहा था कि रंकाला पर किसी ने एक पहलवान को खूब पीटा और उसे

पछाड़ दिया।"

"यहीं से सबक सीखकर जो गया था।"

"ऐसा ? और सोनबा का लड़का आया था वह भी कह रहा था। वह भी चौथी में ही है—किसका वहां पहला नंबर है ?"

"तुम अगर कोल्हापुर आतीं तो मेरा नंबर दूसरा रहता।"

"हम लड़कियों को कौन भेजता है कोल्हापुर ? अच्छा, क्या कोल्हापुर का हाल नहीं बताओगे हमें ?"

यहां से निकला था तब से लेकर यहां लौटकर आने तक का कोल्हापुर का सारा हाल का पहाड़ा पढ़ना मैंने शुरू किया। दूसरों को मैंने केवल मोटी-मोटी बातें ही बताई थीं। परंतु चिंगी से वहां का सारा हाल कहते समय मैं यह सावधानी बरत रहा था कि वहां की सूक्ष्म से सूक्ष्म बात भी न छूट पाए। विनू के विवाह का और उसकी पत्नी का भी हाल मैंने उसे विस्तारपूर्वक बताया। उसे सुनते समय वह उसमें बड़ा रस लेकर हंस रही थी। हाल समाप्त हुआ और मैं घर जाने के लिए उठा। वह बोली, "जब तक यहां हो तब तक मेरे साथ रोज घोड़े पर घूमने चला करोगे क्या ?"

"हां। यदि सरकार ऐसा हुक्म दे · " मैंने कहा। एकदम घबराकर वह बोली, "मैं जाती हूं अब। कोई देख लेगा।" वह चल दी और मैं भी भरे हृदय से घर लौटा।

गांव में जब तक रहा तब तक हम रोज सुबह घोड़े पर बैठकर घूमने जाया करते। हरबा भी हमारे साथ होता। नदी पर घड़ी भर बैठने का क्रम पहले जैसा ही रहा करता। हरबा भी हमारे नजदीक ही आकार बैठ जाता। इस कारण चिंगी को बिलकुल दिल खोलकर बातें करने का यद्यपि संकोच होता था फिर भी बातें करने में कोई बाधा नहीं आती थी। कोई साथ न होने के कारण चिंगी के दिन बड़ी मुश्किल से कट रहे थे। विशेषतः मन्या बापू मास्टरजी और मेरे कोठी में लगातार एक साल तक साथ रहने के कारण अब एकाकी रहना उसे बड़ा कठिन जा रहा था। अमीर की बेटी होने के कारण दूसरे लोगों के घर जाकर खेलना भी उसके लिए असंभव था। आजकल उसे पढ़ाने के लिए एक नए मास्टर की नियुक्ति हुई थी। वे पेंशनर थे। नजदीक ही एक-दो मील की दूरी पर उनका घर था।

इसलिए ये मन्या बापू की तरह कोठी में स्थाई रूप से नही रहते थे। नियत समय पर शाला की तरह आते और पढ़ा कर अपने घर चले जाते। इसमें भी इन मास्टर साहब का स्वभाव बडा सख्त था। सख्ती ही सच्ची मास्टरी है, ऐसी उनकी धारणा थी। कभी-कभी वे चिंगी की पिटाई भी कर देते थे। और उनकी वह मार उसे चुपचाप बरदाश्त कर लेनी पडती थी। उसने सरकार से इसकी शिकायत करके देखा था, पर उसका कोई उपयोग नही हुआ। विद्या प्राप्त करने के लिए मार खाना निहायत जरूरी है, यही उनकी राय थी। मन्या बापू की बात ऐसी नही थी। उन्होंने हमें कभी भी नही मारा। उलटे वे हमारा कितना लाड़ करते थे? कितनी बातें बताऊं उनकी? वे हम बच्चों के साथ बच्चों के खेल भी खेलते थे। मन्या बापू की याद निकालता तो चिंगी की आखों से टप-टप आसू टपकने लगते। उसकी पढाई यद्यपि ठीक से हो रही थी, फिर भी पढाई के उल्लास में उसका मन लगता नही था। किसी आत्मीय के सहवास के अभाव में बेचारी घुलती जा रही थी। परंतु जमीदारी के थोथे अभिमान से अंधे हुए सरकार इसको थोड़ा भी महसूस नहीं कर रहे थे।

विनायक कोल्हापुर से गांव आ गया था। उसके आ जाने से मुझे खुशी हुई, परन्तु चिंगी को भी उससे मिलकर बडा सतोष हुआ दिखाई दिया। कह नही सकता क्यों, पर चिंगी से वह पहले की तरह खुलकर बातें नही करता था। बोलते समय उसकी आंखों से आखें मिलाने के लिए भी वह हिचकिचाता था। उसकी पत्नी को देखते ही जिस तरह मेरे मन में प्रतिकूल ग्रह उत्पन्न होकर विकल्प आया, क्या उसी तरह चिंगी के विषय मे उसे भी लगता होगा, ऐसी शका मेरे मन को छू गई। एक दिन हम दोनों ही शाम को नजदीक की एक टेकडी पर जाकर बैठे थे। उस समय मुझे इस बात का स्पष्टीकरण हो गया कि चिंगी के सामने विनू इतना क्यों झेंप रहा था। गांव की इधर-उधर की गप्पें होने के बाद विनू बोला, "आया हूं तब से सोच रहा हूं कि तुम से कहूं। पर कैसे कहूं यही सूझ नही पा रहा था।" विनू चुप हो गया। मैंने पूछा—"क्या कहने वाले थे?"

गर्दन झुकाकर जमीन की ओर देखता हुआ वह बोला—

"मालूम नही तुम वह समझ पाओगे या नही ?"

"मतलब ? क्या तुम सोचने हो कि मै बिलकुल ही गधा हू ?"

"यह बात नही। वह एक अलग ही घटना है।"

"याने ? कोई खास बात हो गई है क्या ?"

"हा।" कहकर वह फिर स्तब्ध हो गया।

यह देख मैंने कहा, "यदि तुम नही बताना चाहने तो फिर उस विषय में मुझसे कहा ही क्यों ?"

"बताऊं अब ? समझ जाओगे ? मेरी पत्नी को रजोदर्शन हुआ।"

"याने, उसे किस चीज का दर्शन हुआ ?"

"कैसे गधे हो जी तुम ? तुम कुछ भी नही समझते। औरतो को लडका होने से पहले रजोदर्शन होता है।"

"अच्छा ?" मैंने इस तरह कहकर अपने अज्ञान पर परदा डाल दिया। बस ! विनू आगे बोला, "इसी के लिए मुझे अभी तक कोल्हापुर मे ही रहना पडा था। प्रथम रजोदर्शन का समारोह जो था।" विनायक शून्य दृष्टि से मेरे चेहरे की ओर देख रहा था। उसकी बात का मतलब मेरी समझ मे ही नही आया था। मैंने विषय बदलने के उद्देश्य से कहा, "तुम्हारे पेपर कैसे रहे ?" वह बोला, "फेल होने का भय तो नही ही है। पर हां, स्कालरशिप का क्या होता है सो देखना है।"

मैंने घर आते ही पिताजी से पूछा, "पिताजी 'रजोदर्शन होना' याने क्या ?"

पिताजी मुझे डांटकर बोले, "तुझे क्या करना है इससे ?"

मैं बोला, "विनायक की पत्नी को रजोदर्शन हुआ है और उसका समारोह भी हुआ।" पिताजी गुस्से से बोले, "छोटे लडको को ऐसे प्रश्न नही पूछने चाहिए।"

मैंने मन-ही-मन भगवान से प्रार्थना की—"हे भगवन, मेरा जल्दी विवाह कर दे···और···और···मेरी पत्नी को भी जल्द रजोदर्शन होने दे !"

15

मैं अब सातवीं अंग्रेजी में था। विनायक ने जगन्नाथ छात्रवृत्ति प्राप्त कर ली थी और वह इस साल बी० ए० में बैठने वाला था। प्रत्येक परीक्षा में इनाम और छात्रवृत्ति प्राप्त करने का उसने धड़ाका लगा दिया था। इस वर्ष मेरी कसौटी थी। संस्कृत की छात्रवृत्ति प्राप्त करने का दम यद्यपि मुझमें नहीं था फिर भी अन्य विषयों में काफी ऊंचे नंबर प्राप्त करने की मेरी महत्वाकांक्षा थी।

कोल्हापुर का यह समय बड़े आनंद का था। राजाराम कॉलिज के प्रिंसिपल कैंडी साहब इस विषय में सक्रिय आस्था रखा करते कि अपने विद्यार्थी बहुश्रुत और सुविद्य कैसे हों। बड़े-बड़े विद्वानों को निमंत्रित कर उनके वहां भाषण कराए जाते। प्रत्येक शास्त्र के भिन्न-भिन्न पहलू की भिन्न-भिन्न प्रकार से यहां सांगोपांग चर्चा की जाती। कितने ही विलायत के व्याख्याताओं के और विलायती नाटकों पर साभिनय टीका करने वाले विद्वानों के भी भाषण सुनने का सौभाग्य विद्यार्थियों को प्राप्त होता रहता। उनके कार्यकाल में कोल्हापुर के विद्यार्थियों का ज्ञानार्जन के कार्य में किसी भी प्रकार के बंधन नहीं थे। मानसिक उन्नति के समान ही शारीरिक उन्नति को भी प्रोत्साहन प्राप्त होने के कारण हमारी पीढ़ी के विद्यार्थी आजकल के विद्यार्थियों की तरह सींकिया पहलवान नहीं बने थे। टेनिस और बैडमिंटन जैसे जनाने खेलों का उस समय इतना ढकोसला नहीं था जितना आज है।

कुल मिलाकर ये दिन बड़े आनंद के थे। उन दिनों का वर्णन करूं तो वे अत्यंत दिलचस्प होंगे इसमें यद्यपि तिल मात्र भी संदेह नहीं, फिर भी जिस उद्देश्य से मैं अपनी यह आत्मकथा लिख रहा हूं उससे उनका कोई संबंध न होने के कारण स्वयं मेरे हृदय में आनंद के उबाल सा देने वाले उन दिलचस्प घटनाओं के वर्णनों को टाल देने के लिए मुझे मजबूर होना

की चिंता और दूसरे तुम्हारी बंबई की हवा।"

"पर तुम्हें आगे इसी हवा में आना है। इसलिए ऐसी हवा के लिए अपने मन को तुम्हें अभी से तैयार कर लेना चाहिए।"

"आगे की आगे देखी जाएगी। इसे छोड़ो। बताओ मन्या बापू कहा हैं?"

"क्यों ? खरे मास्टर ने तुम्हें यह नही बताया ?"

"वे पूछने पर भी कुछ नही बताते। तुमसे सच कहूं विनायक ! मन्या बापू सो मन्याबापू और खरे मास्टर सो खरे मास्टर ! खरे मास्टर अपने लड़के गणू से भी अधिक मेरा ध्यान रखते है, मुझे जान लड़ाकर पढ़ाते हैं, खाने-पीने मे वे मुझे किसी भी चीज की कमी नही होने देते—यह सब सच है। पर मन्याबापू का प्रेम कुछ अलग ही था। वह आत्मीयता हमें अन्यत्र कही भी नही मिल सकती।"

मन्याबापू की याद से मेरी आंखो मे पानी आ गया। मैंने आंखें पोंछी और कहा, "भाभी जी तो गणू से भी अधिक मुझ से प्यार करती हैं। उनके घर रहते समय मुझे इसकी याद ही नही रहती कि मैं मराठा हूं। इसके बावजूद जब मन्याबापू की याद हो आती है तो कलेजा मुंह को आ जाता है। क्या तुम्हें उनका पता मालूम है ? खरे मास्टर को उनके पत्र आते होंगे। पर जब पूछता हूं तो वे कहते हैं कि मैट्रिक पास होने पर उनका पता तुम्हें आप-ही-आप मालूम हो जाएगा।"

विनायक बोला, "ठीक है। फिर इतने उतावले क्यों हो रहे हो ?"

"तुम मिले इसलिए पूछा। अगर तुम न मिलते फिर पूछने के लिए कौन था दूसरा ?"

"बी० ए० होने के बाद वे यहां से गए सो कही काशी-बनारस की तरफ चले गए हैं। वहां संस्कृत का अध्ययन कर रहे हैं, कोई कहता था।"

"उनका विवाह हो गया क्या ?"

"नही।"

"अच्छा, तुम्हारा कैसा चल रहा है ?"

"बी० ए० की तैयारी जोरों से हो रही है।"

"घर नहीं, उधर तुम्हारे घर का क्या हाल है ?"

मैंने आंखों में प्राण समेटकर पूछा, "लड़की किस के लिए देखी जा रही है ?"

"उस रियासत के राजा के लिए ।"

मेरी आखो के समाने अंधेरा छा गया । एक क्षण के लिए लगा जैसे गश आ रहा है । विनायक मुझे सभालता हुआ बोला, "सब अफेयर, अ ! मन्या, ऐसे गधे मत बनो । कहां तुम, कहां वह ? बचपन की बातें भूल जाओ । तुम्हारा भाग्य तुम्हारे हाथ मे नही । ये भाग्याधीन बातें है । वह अमीरी के उच्च शिखर पर है और तुम दरिद्रता की गहरी खाई में पडे हुए हो ! तुम्हारे लिए उसे प्राप्त करना सभव नही !"

मैंने जोर देकर कहा, "और असभव भी नही !"

"पागल हो तुम । यह पागलपन दिमाग से निकाल डालो । व्यर्थ ही अपनी जिंदगी बरबाद कर लोगे ।"

मैंने विश्वास के दृढ स्वर मे कहा, "चिगी अपनी शपथ कभी नही तोडेगी ।"

"एक छोटीसी लड़की की शपथ को इतना महत्व क्यों दे रहे हो ?"

मैंने चिढ़कर कहा, "चिगी को तो तुमने छोटी लड़की कह दिया, और तुम्हारा वह कोल्हापुर का रत्न ? वह नही है शायद छोटी लड़की ?"

"अजी, अब उसका विवाह हो चुका है ।"

"और हमारा भी विवाह हो गया है ।"

"गधे हो !"

मैंने चिढ़कर कहा, "हू ही ।"

मेरा हाथ पकडकर विनायक बोला, "नाराज हो गए शायद ?"

मैंने कहा, "नाराज नही हुआ । चिढ गया । तुम्हारे सामने उसने शपथ ली, फिर भी तुम्हें यकीन नहीं हो रहा है ?"

विनायक फिर हिचकिचाता हुआ बोला, "यह सच है । पर क्या हमें वस्तुस्थिति की ओर नही देखना चाहिए ? हमारा विवाह होना क्या हमारे हाथ मे होता है ? विवाह के मामले मे अभी तक लड़का भी पराधीन होता है । फिर बेचारी लड़की को कौन पूछता है ?"

मैं गभीरतापूर्वक कहने लगा, "सच बताऊं तुम्हें विनायक ! जैसे या

मुझे तनिक भी डर नहीं लगता। हमारे पिताजी तो इस विवाह में रुकावट नहीं डालेंगे, पर चिंगी की मर्जी के खिलाफ जाने की उनके पिता की भी हिम्मत नही होगी। वह लडकी नही, एक अंगारा है।"

विनायक खिजाने के स्वर में मुझसे बोला, "आजकल अंग्रेजी उपन्यास पढ़ रहे हो शायद?"

मैंने झुंझलाहट भरे स्वर मे कहा, "पाठ्य-क्रम की पुस्तको को पढने के सिवा दूसरी पुस्तकें पढने के लिए मुझे फुरसत ही कहां मिलती है?"

"फिर ये ऐसे विचार तुम्हारे दिमाग में कहा से आए?"

"अब बार-बार कितना पूछोगे? सारी बातें तुम्हारे ही सामने नही हुई क्या?"

"यह सच है, पर वह बच्चो का खेल था। उसे इतना महत्व मत दो।"

"पर तुम यह जानते हो क्या कि इस खेल को हम ने कितने बार दोहराया है? मेरे पिताजी के सामने भी उसने यही शपथ ली।"

"कब?"

"मेरे कोल्हापुर आने से पहले।"

"याने चार साल पहले?

पर चार साल पहले चिंगी से एक-दो साल वडी तुम्हारी पत्नी तुम्हे विश्वास रखने योग्य लगी या नही?"

"अरे, पर हमारा विवाह जो हो गया था?"

मैं बिलकुल हैरान होकर बोला, "सचमुच विनायक, मै बिलकुल मूर्ख हूं। सिर्फ विवाह हो गया, इतने से ही तुम्हें विश्वास लगता है और हृदय के निर्मल असीम प्यार पर तुम्हें विश्वास नही होता? वडा आश्चर्य है! केवल विवाह की विधि की टीमटाम से तुम्हें विश्वास हो जाता है, पर मुझे उस विधि का कोई महत्व नही मालूम होता।"

"तुम कहते हो यह सच है। पर समाज की स्थिति ऐसी ही है। लड़के सो लडके और जेठे-सो-जेठे! किसी का किसी से भी विवाह होना लड़कों के हाथ मे होता कहां है? रिश्ता तय करते समय जेठे-वड़ों की दृष्टि व्यवहारी होती है। लड़के का बाप इतना देखता है कि उसके पल्ले में

अच्छा माल पड़ा है या नहीं, और लड़की का बाप सिर्फ यह देखता है कि मेरा माल अच्छे ग्राहक के पास गया है या नहीं। हम विवाह योग्य लड़के याने निरे बिक्री का महज माल हैं।"

"चिगी की शपथ और वचन पर पूर्ण विश्वास होगा, पर इस व्यवहारी समाज में तुम्हारे व्यवहार का तुम्हारी इच्छानुसार पांसा डालना केवल तुम्हारे जेठे-बड़ो के हाथ में है।"

मैंने तनिक सोचकर कहा, "जेठे-बड़ो की मर्जी के खिलाफ जाकर हम अपना विवाह कर सकते हैं क्या ?"

विनायक कुछ ऐसे भाव से बोला जैसे विचार में पड़ गया हो, "इस विषय में मैं उतना ही अजान हूं जितने तुम। सौभाग्य से मेरे विवाह का पासा ठीक पड़ा। मन्याबापू होते तो इस विषय में वे ही कुछ कह सकते।"

हम दोनों एक क्षण के लिए समुद्र की उमड़ती लहरों की ओर शून्य दृष्टि से देखते रहे। मेरे हृदय में भी उसी तरह की लहरें उमड़ रही थीं। भवितव्यता की चट्टान पर टकराकर वे केवल ऐसा ही फेन होकर तो नहीं रह जाएंगी कहीं ?

देर हो गई, ऐसा सोचकर हम उठे और सड़क के किनारे की फुटपाथ पर पहुंचे। आश्चर्य की थाली मेरे लिए यहां परोसकर रखी हुई थी। फुटपाथ के समीप ही एक विक्टोरिया में चिगी अकेली ही बैठी हुई थी। आगे बढ़कर उसे पुकारने की हिम्मत नहीं हो पा रही थी। इसी समय उसने विनायक को पुकारा। हम आगे बढ़ने लगे तभी वह गाड़ी से नीचे उतर पड़ी। विनायक आगे था। मैं दो कदम पीछे रह गया था। उसे देखते मुझे खुशी हुई, पर थोड़ा आश्चर्य भी हुआ। मैं उतावला हो उठा। विनायक को यकीन दिलाने का यह मौका अनायास आ गया, ऐसा मुझे लगा। जब वह नजदीक आई तो विनायक बोला, "चिगीताई, तुम इधर कहां ?"

चिगी बोली, "परीक्षा देने। इस साल मैट्रिक में बैठी हूं मैं। विनायक एक बार मेरे मुंह की ओर और एक बार चिगी के मुंह की ओर बारी-बारी से देख रहा था। हमारी उम्रों में यद्यपि एक ही वर्ष का अंतर था फिर भी मैं अंग्रेजी में काफी तालेवर होने के कारण उसकी अपेक्षा काफी

खड़ा दिखता था। चिंगी सब मिलाकर यद्यपि हट्टी-कट्टी लड़की थी फिर भी ऊंचाई में कम होने के कारण मेरी अपेक्षा थोड़ी छोटी ही दिखती थी। मुझे लगा, विनायक शायद अंदाज लगा रहा है कि हम दोनों की जोड़ी कैसी दिखेगी। विनायक हंसकर मेरी ओर देखता हुआ बोला, "वाह मनोहर, चिंगीताई तो बिलकुल तुम्हारे कदम के साथ कदम रख रही है।"

चिंगी बोली, "यह सब तुम्हारे मामा की कृपा है।"

विनायक बोला, "क्यों रे, मनोहर, घिग्घी कैसे बंध गई ? बोलते क्यों नहीं ?"

मैंने निर्विकार मन से कहा, "बोलने की क्या जरूरत···"

चिंगी ने मेरा वाक्य पूरा किया, "मन मन को पहचानता है।"

विनायक ने पूछा, "तुम अकेली ही कैसे ?"

चिंगी बोली, "आबासाहब अपने मित्र के साथ उधर एक शिला पर चल दिए। मैंने तुम्हें दूर ही से पहचान लिया, इसीलिए गाड़ी रोककर यहीं बैठी रही हूं।"

मैंने एक गहरी सांस छोड़ी। यह देखकर चिंगी चौंककर मेरी ओर मुड़ती हुई बोली, "पेपर कैसे रहे तुम्हारे ?"

मैंने उत्तर दिया, "ठीक रहे। पर संस्कृत की स्कालरशिप मिलने की आशा नहीं।"

चिंगी ने पूछा, "संस्कृत की खास तैयारी की थी शायद ?"

मैंने गर्दन के इशारे से ही 'हां' कहा। फिर एक क्षण के लिए कुछ न बोल हम स्तब्ध रहे। विनायक झट-से चिंगी की ओर मुड़कर बोला, "मैं कुछ पूछूं तो तुम नाराज तो नहीं होगी ? रियासत के कुछ लोग तुम्हारी कोठी में आए थे क्या ?"

चिंगी ने अपना निचला होंठ दांतों तले दबाया और तिरस्कार से हंसकर वह बोली, "वे लोग वहां गए और हम लोग इधर आए। इसलिए हम एक-दूसरे से मिल नहीं पाए। वैसे उनका सारा प्रबंध करने के लिए आबा साहब ने वहां तार कर दिया है।"

विनायक मन में साहस बटोरकर किंतु थोड़ा हिचकिचाता हुआ बोला, "रानी होने का संयोग आया है।"

चिंगी भी होठ चबाकर बोली, "जिसे आया होगा आता रहे। मुझे तो नहीं।"

विनायक बोला, "मतलब !"

चिंगी सिर्फ हंस दी।

मेरे बदन पर आनंद के रोमांच खड़े हो गए। विनायक फिर बोला, "मैं नहीं समझा तुम्हारी बात का मतलब।"

चिंगी बोली, "पुरोहित जी ही यदि विवाह की बात भूलने लगें तो बेचारे वर-वधू क्या करेंगे ?

विनायक बोला, "कहां का पुरोहित और कहां के वर-वधू ?"

चिंगी हंसती हुई बोली, "लगता है पुरानी यादों पर बंबई की हवा का दबाव पड गया शायद ! हम ग्रामीण लोग है। नई दुनिया देखते ही चौंधियाकर अभी तक अंधे नही हुए हैं।"

विनायक बिलकुल शरमिंदा हो गया। चिंगी की ढिठाई की मैंने मन-ही-मन सराहना की। निर्लज्जता से विनायक फिर बोला, "तो बचपन का निश्चय अभी तक कायम है तुम्हारा ?"

गुस्से की सांस छोडकर चिंगी बोली, "मैं कभी भी बच्ची नहीं थी।"

विनायक बेशर्म की तरह अपनी मूल बात छोडता ही नही था।

वह बोला, "लडकी की जात पराधीन है। तुम्हारे आयासाहब इतने अव्यवहारी नही कि जब दरवाजे पर एक राजा स्वयं आया है तब वे अपनी लडकी उसे न देकर किसी भिखारी के घर मे धकेल दें।"

चिंगी बोली, "पर मैं हू न ? मन के राज्य मे राजा का वैभव दो कौडी का होता है।"

मैं दंग रह गया। कैसा यह दृढ निश्चय ? कैसी यह आत्यंतिक निष्ठा ? मुझे अपने आप पर अभिमान होने लगा। चिंगी मेरे विषय इतनी निष्ठा दिखाए ऐसा कौन-सा आकर्षण मुझमे है ? चिंगी के इस उत्तर का विनायक के भी मन पर प्रभाव पड़ा हुआ दीख पड़ा। वह बोला, "सारी बातें भाग्याधीन हैं। हमारे हाथ में कुछ नहीं। पर हृदय से यह ब्राह्मण तुम दोनो को आशीर्वाद देता है। ईश्वर तुम्हारा कल्याण करे।"

चिंगी ने आम सड़क पर झुककर विनायक के चरण छुए। मेरा हृदय

भर उठा। चिगी आंचल से आंसू पोंछने लगी। उसकी आंखों मे आंसू मैंने पहली बार देखे। इसी समय सरकार अपने मित्र सहित वहां आ गए। शिष्टाचार के रस्म खत्म होने के बाद सरकार ने मेरी परीक्षा के बारे में पूछताछ की और वे गाडी मे जाकर बैठ गए। चिगी पहले ही जाकर बैठ गई थी। गाड़ी चलने लगी। पर चिगी के ओझल होते तक मैं गाड़ी की ओर टक लगाए देख रहा था। दीर्घ निश्वास छोडकर मै नजदीक की रेलिंग पर बैठ गया। मुझे बैठा देख विनायक भी मेरे पास आकर बैठ गया। उसकी गरदन मे बाहू डालकर मैंने कहा, "कम-से-कम अब तो तुम्हें यकीन हो गया न?" विनायक बोला, "यकीन हो गया, पर डर बढ़ गया। समाज की आज की स्थिति को देखें तो तुम दोनों का विवाह होना करीब-करीब असंभव दिख रहा है। खिसकते जा रहे भविष्य को तुम दोनो पाश में बाधकर रोकने की कोशिश करना चाहते हो। पर कौन किसे खींचकर ले जाता है यही अब देखना है।"

कुछ न बोल हम दोनों हाथ मे हाथ में डाले चलने लगे। विनायक का कमरा बहुत नजदीक आ गया। इसी समय हमारे नजदीक से जाने वाली एक गाड़ी में मुझे चिगी दिखाई दी। उसने हाथ उठाकर कोई चीज बाहर सड़क पर फेंकी। मैंने झट-से आगे बढकर वह उठा ली। वह एक रेशमी रूमाल था।

विनायक बोला, "चिगी आजकल स्काट के उपन्यास पढ़ रही है।"

16

भोजन करके कमरे में आकर बैठने तक हम दोनो ने जो घटना घटी उसके बारे में कोई बातचीत नही की थी। विनायक आराम कुर्सी पर फैला हुआ था और मै बिस्तर का ही तकिया बनाकर उससे टिककर बैठ गया था। विनायक एकदम मुझसे बोला, "मनोहर, आज मेरे मस्तिष्क में प्रकाश पड़ा। समाज मे कुछ-न-कुछ खलबली मचने का श्रीगणेश हो रहा है।

रानडे और आगरकर जैसे समाज सुधारकों ने नए विचार हवा में छोड़ने शुरू कर दिए हैं और उसके फलस्वरूप नई पीढ़ी का वातावरण क्षुब्ध होने लगा है।"

मैंने कहा, "क्या यह हमारे बारे मे कह रहे हो?"

"अवश्य ही!"

"रानडे और आगरकर का हमसे क्या संबंध? मन्याबापू ने मुझसे सुधारक पढ़ने को कहा था और कोल्हापुर आने के बाद से मैं उसे नियम से पढ रहा हू। परन्तु जो अभी है वह परिस्थिति मेरे सुधारक पढना शुरू करने से पहले ही पैदा हो गई थी, और चिंगी ने तो मेरा ख्याल है सुधारक की अभी सूरत भी नही देखी होगी, फिर पढ़ना तो दूर की बात हुई! मुहर्रमी सूरतवाले उसके नए मास्टर को शाला की पाठ्य पुस्तकों के अलावा अन्य विषयों का तिल मात्र भी ज्ञान नही।"

विनायक बोला, "लेख पढकर मत निश्चित करने की बात मैं कह ही नही रहा हू। भविष्य वेत्ता सत्य की फूक द्वारा जो शास्त्र-शुद्ध विचार की दुनिया मे उड़ाते हैं, वे समाज के प्रत्येक घटक के हृदय में प्रवेश करते रहते है। उसके लिए लिखने-पढ़ने की जरूरत नही। अनुकूल मनोभूमि में उनका बीजारोपण हो जाता है। उसी तरह प्रतिकूल मनोभूमि पर उसका वही असर होता है जैसा पत्थर पर बीज बोने का होता है। पूना में बैठे-बैठे आगरकर ने फूक मारी, और उधर दूर के एक छोटे से गांव के दो बच्चे विद्रोह का शंख फूकने लगे!"

"तत्वज्ञान और तर्कशास्त्र मे मेरा अभी कोई परिचय नही। पर मैं यह नही कहता कि तुम जो कहते हो उसमें कोई तथ्य न होगा। तुम अब बंबई जैसे विशाल नगर मे रह रहे हो। क्या हमारी स्थिति जैसी ही किसी दूसरे की स्थिति भी तुम्हें यहां देखने को मिलती है?"

"ऐसी कुछ घटनाएं बबई मे हुई हैं, ऐसा मैंने सुना है। पर एक मामूली गांव में ऐसा क्यों होना चाहिए, इसी के बारे में कुछ समय पहले से मैं सोच रहा हूं। समस्या कुछ हल होती जा रही है।" ऐसा कहकर विनायक ने आंखें बंदकर ली और वह चुप हो गया। मैंने धीरे-से कहा, "क्या नींद आ गई विनू?"

विनू आंखें न खोलकर बोला, "नहीं। समस्या हल कर रहा हूं।"

मैं कुछ क्षण के लिए रुका और मैंने फिर पूछा, "क्यों? हो गई समस्या हल?"

विनायक कुर्सी में तनकर बैठ गया और बोला, "हां हल हो गई। सुनो —मेरे सामने समस्या यह थी कि सुधारों के आगरीकर बीज तुम बच्चों के हृदयों में क्यों जमे? मैं इसका कारण खोजने लगा और मुझे कारण मिल गया। एकांत में विचार करने की प्रवृत्ति रखने वाले व्यक्ति फिर वे छोटे हों या बड़े, जिस विषय के साथ तन्मय होते हैं उस विषय का सत्य मार्ग उनके सामने सहज आविर्भूत हो जाता है। तुम बचपन से अकेले रहे। तुम्हारी मां नहीं है। घर में पिता को छोड़कर तुम्हारा दूसरा कोई आत्मीय नहीं। बच्चों को दुनिया के व्यवहार का ज्ञान पिता की अपेक्षा मां से ही प्राप्त होता है। यह सच है कि तुम्हारे पिता किसी मां की तरह ही तुम्हारा पालन-पोषण करते थे। परन्तु मां बच्चे को आत्मीयता से दुनिया के व्यवहार की जो शिक्षा देती है उसका अर्थ सिर्फ पालन-पोषण नहीं होता। इस कारण बाहर की दुनिया देखकर दुनिया के व्यवहार की शिक्षा प्राप्त कर लेने का भार स्वयं तुम पर ही आ पड़ा। तुम्हारा एकांतप्रिय स्वभाव होने के कारण दूसरों के विचारों की छाया तुम्हारे मन पर नहीं पड़ी। इस तरह निर्मल विचारों की सहज शिक्षा प्राप्त हो जाने के कारण तुम्हारे मन की स्थिति ऐसी हो गई कि तुम निसर्ग के भक्त बन गए और निसर्ग तुम पर प्रसन्न हो गया।"

विनायक की इस प्रौढ़ भाषा से यद्यपि मैं भौंचक्का हो गया, फिर भी उसमें की मुख्य बात मेरी समझ में आ गई। मैंने जिज्ञासा से पूछा, "और चिंगी?"

वह बोला, "बिलकुल डिटो! पर उसके विषय में और एक विशेष बात है। तुम्हारे पिता को तुम से प्यार है। परन्तु चिंगी का पिता बिलकुल व्यवहारी है। कोई मुश्किल आ पड़े तो तुम कम-से-कम क्षण भर के लिए पिता की ओर मुड़ जाओगे। पर चिंगी की यह बात नहीं। उसे पिता को पिता कहने पर भी पिता के पास रहना संभव नहीं, इसका कारण यह है कि वह बचपन से ही लाड़-प्यार में पली लड़की है। इसका मतलब

यह नहीं कि पिता ने उसे अपनी गोद में खिलाया है। बल्कि जो वह चाहती वह उसे पिता से फौरन मिल जाता है। उसके लिए पिता एक निरा खजाना है। उसे अपनी मनचाही चीज उस खजाने से सहज प्राप्त हो जाती है। पर दोनों के बीच हृदय के प्यार का बेशक अभाव ! ऊपर से वह मराठा की लड़की है। उसके खून को वीरता का आकर्षण है। मेरे लिए तुमने जो मारपीट की थी उसका उसके मन पर प्रभाव पड़ा। तुम्हारे प्रति आदर उत्पन्न हुआ। आगे तुम से उसका परिचय हुआ। तुम पर उसे अभिमान होने लगा। फिर आत्मीयता उत्पन्न हुई और उसकी परिणति प्रेम में हो गई। फिर वियोग आया और वियोग ने उस प्रेम को दृढ़ कर दिया। बस, यही बात हुई है। मुझे लगता है कि समस्या हल हो गई !"

मैं कुछ भी न बोल चुप रहा, और सिंहावलोकन करने लगा। विनायक के कहने में काफी तथ्य है, ऐसा मुझे लगने लगा। विनायक बोला, "आगे की बात अलबत्ता बड़ी विकट है। समस्या हल हो गई, ऐसा मैंने कहा जरूर। लेकिन सच पूछा जाए तो सही अर्थ में समस्या अब शुरू हुई। अब मुठभेड़ शुरू होगी और अंतिम फैसला लड़ने वालों की ताकत पर अवलंबित रहेगा।"

मैंने कहा, "तुम्हारे ख्याल से मुझे अब किस प्रकार का बर्ताव करना चाहिए ?"

विनायक बोला, "यह मैं कैसे कह सकता हूं ? फिर भी मेरा ख्याल है कि इस मामले में तुम्हारी अपेक्षा चिंगी पर ही अधिक जिम्मेदारी है। वह किस तरह बर्ताव करे यही प्रश्न अधिक विचारणीय है। पर उस झमेले में पड़कर हमें क्या करना है ? हम कुछ करें भी तो उसका कोई उपयोग न होगा। यह परीक्षा का समय है। और मैट्रिक की तरह इस परीक्षा में भी यह किस तरह उत्तीर्ण होती है यह देखना है।"

हम दोनों ही बिस्तर पर पड़ गए। थोड़ी ही देर में विनायक को गहरी नींद लग गई। पर कितनी ही देर मेरी आंखों में नींद कहां ? इस प्रसंग पर मैं क्या करूं यही मुझे नहीं सूझ पा रहा था। क्या मैं चिंगी की भलाई में आड़े आ रहा हूं ? राजा की रानी बनने में सुख है क्या ? सुख के लिए बाह्यसमृद्धि की आवश्यकता है अथवा आंतरिक संतोष की ? गरीबी

मे भी सुख होता है क्या ? हम गरीब है, पर मानसिक सुख की कमी हमें प्रतीत नही हुई। चिंगी अमीरी मे लोट रही है, पर ऐसा नही, दिखता कि उसमें उसे संतोष है। वह पिता से खुश नही, नौकरों से खुश नही, मास्टर से खुश नही, जिस कोठी मे रहती है उससे भी वह खुश नही। इतने वैभव मे इतनी अतृप्ति, तो राजवैभव प्राप्त होने पर उसकी अतृप्ति और नही बढ़ जाएगी क्या ? वैभव में अतृप्ति बढती है, पर कम-से-कम गरीबी में संतोष निश्चित ही प्राप्त हो जाता है ? मुझे गरीबी मे संतोष है, यह सच है। पर गरीबी की गृहस्थी में उसे संतोष मिल जाएगा क्या ? वह सुखी हो सकेगी क्या ? किसी भी प्रश्न का सतोषजनक उत्तर मेरे सामने नही आ रहा था। मै बेचैन हो उठा, और उठकर बिस्तर पर बैठ गया। विनायक की नीद बहुत हलकी थी। मेरी आहट से उसकी नीद खुल गई। वह पड़ा-पड़ा ही बोला—

"क्यों, नीद नही आ रही है शायद ?"

मैंने कहा, "दिमाग घूम रहा है।"

विनायक बोला, "स्वाभाविक है। पर व्यर्थ विचार करके दिमाग को कष्ट देने में क्या अर्थ है ? चुप रहो। सारा भार भगवान पर डाल दो और आगे जो होगा उसे चुपचाप गर्दन झुकाकर स्वीकार कर लो।"

मैं बिस्तर पर लेट गया। विनायक की फिर आख लग गई, पर आंखें बद करने की कोशिश करना भी मेरे लिए कठिन हो गया था। मुझे अपने पर ही हंसी आई। मैं सत्रह साल का लडका ! मुझे विवाह की इतनी तड़प क्यों ? पर मन कुछ सुन न रहा था। बार-बार विवाह के विचार ही मन मे आने लगे। चिंगी के स्वभाव से मै पूरी तरह परिचित था। उसका निश्चयी स्वभाव दुराग्रह की सीमा तक पहुच गया था। एक विलक्षण विचार अचानक मेरे मन में कौंध गया और मैं सिहर उठा। ऐसी हठीली लडकी के साथ मेरा जीवन सुखी होगा क्या ? कुछ क्षण के लिए यह विचार मेरे मन में लगातार नाचता रहा। पर फिर मुझे अपने आप पर ही शर्म आई। उस भोंडे विचार को मैंने मन के बाहर झटकार दिया और मन को स्थिर किया। चिंगी जिद्दी थी, इसमें शक नही। पर वह जिद किससे करती थी ? मुझे छोड़कर दूसरों से !—अच्छा, और दूसरों से भी उसने जिद्द की थी

तो क्या वह अकारण और अनावश्यक थी ? उसे सत्य के प्रति बड़ा अभिमान था। इसलिए सत्य का पक्ष लेकर उसने यदि असत्य को ठुकरा देने का प्रयत्न किया तो क्या वह उसका दोष होगा ? कल विवाह हो जाने पर मैं भी कोई असत्याचरण कर बैठा और उसके लिए वह मुझसे लड़ पड़ी अथवा उसने मुझे चाबुक से पीटा भी तो क्या वह उसका दोष होगा ? पति के सामने हमेशा झुक जाने वाली स्त्रियां पति को शायद प्रिय लगती होंगी। परंतु सत्य की दृष्टि से देखा जाए तो क्या वे पति को अधोगति के मार्ग पर ले जाने के लिए कारणीभूत नहीं होंगी ? पति के चाहे जैसे अत्याचारों को सहन करके उसे प्रोत्साहन देना—यही पत्नी-धर्म है क्या ?

मेरे मन को एक प्रकार से संतोष हो गया। रुढि कुछ भी कहे, पर नीति की ओर यदि देखना है तो सत्य से प्रेम करनेवाली और सत्य के लिए मौका पड़ने पर पति का अपमान भी कर देने वाली पत्नी मुझे बड़ी आकर्षक लगी। ऐसी पत्नी पति के लिए कितना बड़ा सहारा होगी। कुछ समय पहले जो भोंड़ा विचार मेरे मन में आया था उसके लिए मुझे अपने आप पर ही शर्म आई और संदेह मिट जाने के आनंद से मेरा हृदय भर गया।

दूसरे दिन पढाई का नुकसान करके भी विनायक ने मुझे बंबई के प्रायः सभी दर्शनीय स्थान जाकर दिखाए। बंबई के विशाल सौंदर्य ने मेरा मन बेध डाला। रहूंगा तो बंबई में ही रहूंगा, ऐसा मन में मैंने निश्चय भी कर डाला।

शाम को फिर महालक्ष्मी पर ही विनायक के साथ घूमने गया। वहां कल की तरह ही चिंगी के साथ सरकार गाड़ी में बैठकर आए थे। उनसे मुलाकात हो गई। हम चारों ही एक शिला पर आकर बैठ गए। सरकार विनायक से बोले, "इस साल मनोहर पास हो जाएगा, इस में कोई संदेह ही नहीं। हमारे उस तरफ के मराठा लोगों में पैदा होने वाला पहला विद्वान मनोहर ही होगा, ऐसा मेरा ख्याल है।"

विनायक बोला, "सच है। मराठा के खानदान में जन्म लेने के कारण मनोहर मराठा है। वरना वह तो ब्राह्मण की तरह विद्वान है।"

चिंगी बोली, "ऐसा क्यों कहते हो ? हमारे जेठे-बड़ों में अपनी संतान

को शिक्षा देने की रुचि उत्पन्न हो जाए तो हम मराठों के लडके भी तुम ब्राह्मणों के लिए भारी हो जाएंगे ।"

विनायक हंसते-हंसते बोला, "मराठा के दो बच्चे अभी ही मुझे भारी जा रहे है, इसमे कोई शक नही । शिक्षा शेरनी का दूध है । जिसे वह प्राप्त होगा वह गुरगुराए बिना नहीं रहेगा !"

सरकार बोले, " रानी होने के लिए योग्य हो जाए, इसलिए मैं चिंगी को पढा रहा हूं सही, पर दिन-प्रति-दिन वह बे लगाम होती जा रही है। आज ही की बात लो । वह यह जिद पकड़कर बैठ गई है कि बंबई मे ही कुछ दिन अभी और रहूगी ।"

विनायक बोला, "तो हर्ज क्या है ? रह जाइए यहां कुछ दिन । परीक्षा का रिजल्ट खुलने के लिए अभी काफी दिन हैं ।"

सरकार बोले, "पर रियासत के वे लोग वहा गाव में हमारी राह जो देख रहे हैं ?"

मालूम होते हुए भी विनायक बोला, "कौन लोग है वे ?"

सरकार बोले, "रियासत के दीवान आए हैं । अपने महाराज के लिए वे चिंगी को देखना चाहते है ।"

विनायक बोला, "तो फिर उन्हें यही बुलवा लीजिए न ?"

चिगी समुद्र की ओर मुह करके बोली, "वे अगर यहां आए तो मैं गांव चली जाऊगी !"

सरकार बोले, "अब समझ गए न तुम ? बंबई में रहने के लिए ही बंबई मे नही रहना है उसे ! अब तुम्ही बताओ—उसकी यह जिद चलने दू तो मेरी बेइज्जती नही होगी क्या ?"

चिंगी उसी तरह मुंह फेरकर बोली, "और जिद न चलाई तो आपकी संतान की जिंदगी बरबाद नही हो जाएगी क्या ?"

सरकार बोले, "अब तुम्ही सुन लो । राजा की रानी होने के लिए भाग्य चाहिए । उन्हे क्या, राज घराने की लड़कियां भी मिल सकती हैं। पर उन लोगों से किसी ने कह दिया था कि यह लड़की अच्छी पढ़ी-लिखी है। उन्होंने इसका फोटो मंगाया । वह मैंने भेजा । फोटो मे लडकी उन्हे पसंद आ गई। अब वे प्रत्यक्ष लड़की देखने आए है -और यह अब मुझे मुह

को खिलाना चाहती है ! यदि मैं इस लड़की की जिद को मानकर घर आई हुई लक्ष्मी को ठुकरा दूं तो सारा गांव मेरे मुह पर थूकेगा नही क्या, तुम्ही बताओ ?"

"हां । सच है ।" विनायक ने कहा ।

चिंगी एकदम उठी और उबलकर बोली, "क्या सच है ? शर्म नही आती ऐसा ढोंग करने की ? तुम पढ़े-लिखे होशियार लोग, और तुम्ही भोले अमीरों के आगे 'हा जी-हां जी' करके उन्हे गुमराह करते हो ? सत्य कहने की लज्जा क्यों आती है तुम्हे ?"

सरकार चकित होकर बोले, "चिंगी, यह क्या ? कहां क्या बोलना चाहिए कम-से-कम इसका तो ध्यान रखना था । ?"

चिंगी बोली, "मैं अमीर नही और सरकार भी नही । चाटुकारी से मुझे सख्त नफरत है ।"

सरकार बोले, "पर मैं अमीर हूं न ? तुम मेरी लड़की हो । तुम्हे अपने घराने की इज्जत रखनी चाहिए ।"

चिंगी बोली, "घराने की इज्जत के लिए आप मुझे खाई में फेंक देंगे क्या ?"

सरकार बोले, "अब सुनो ! राजा की रानी बनाना खाई मे फेंकना है क्या ?"

मैं एक बार कह देती हूं कि मैं राजा की रानी नही बनाना चाहती ।" वह निश्चय-भरे स्वर मे बोली ।

सरकार तनिक क्रोधित होकर बोले, "तुम नही बनना चाहती का क्या मतलब । मैं जो कहूंगा वह तुम्हे मानना ही पड़ेगा । अभी तक तुम यह नही समझती कि तुम्हारी भलाई किसमें है । जीवन का रिश्ता जमाना कोई बच्चे का खेल नही ।"

चिंगी आपे मे बाहर होकर बोली, "बच्चों जैसा खेल तो आप ही खेल रहे हैं । रिश्ते की बातचीत करने से पहले आपने मुझ से पूछा था क्या ?"

सरकार बोले, "लो, अब यह सुनो ! तुमसे क्या पूछना था इसमे ?"

चिंगी बोली, "सच है ! जब मेरा ही विवाह है तो मुझसे क्यो पूछोगे ? गांव मे जब किसी ऐरे-गैरे नत्थू खैरे का विवाह होनेवाला हो तब आकर